RNI Title Code : MPHIN32709

ISSN NUMBER : 2455-9814

विभोम स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 1, अंक : 2,
त्रैमासिक : जुलाई-सितम्बर 2016
मूल्य : 50 रुपये

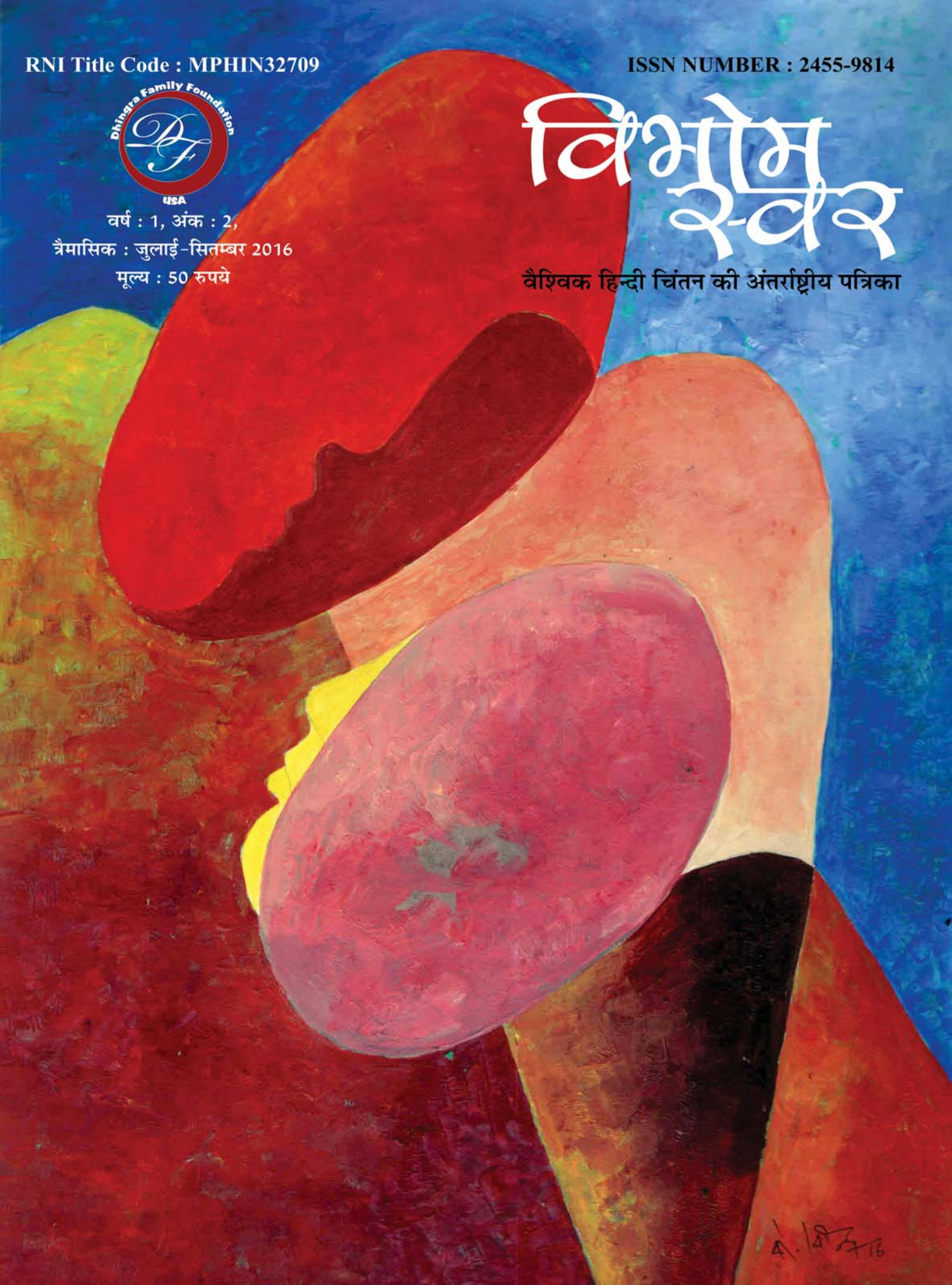

शिवना प्रकाशन की पुस्तकों के नए संस्करण

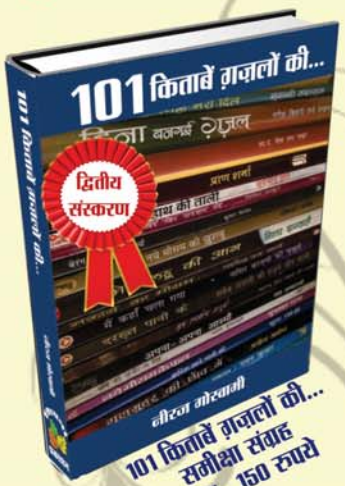

101 किताबें ग़ज़लों की...
समीक्षा संग्रह
मूल्य . 150 रुपये

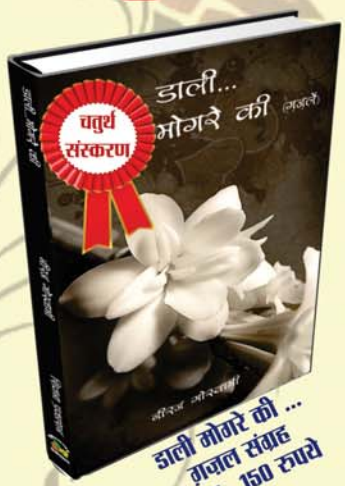

डाली मोगरे की ...
ग़ज़ल संग्रह
मूल्य . 150 रुपये

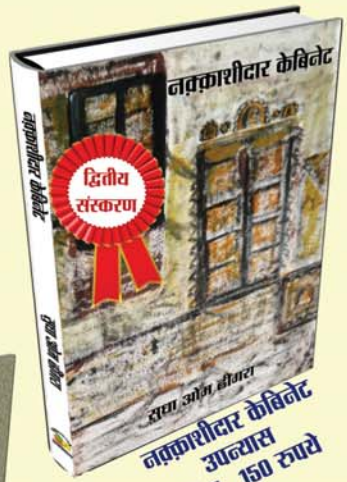

नक़ाशीदार केबिनेट
उपन्यास
मूल्य . 150 रुपये

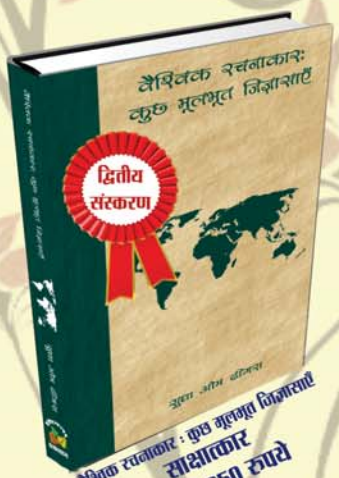

वैश्विक रचनाकार : कुछ मूलभूत जिज्ञासाएँ
साक्षात्कार
मूल्य . 250 रुपये

दस प्रतिनिधि कहानियाँ
कहानी संग्रह
मूल्य . 150 रुपये

कसाब.गांधी@सरहद.इन
कहानी संग्रह
मूल्य . 150 रुपये

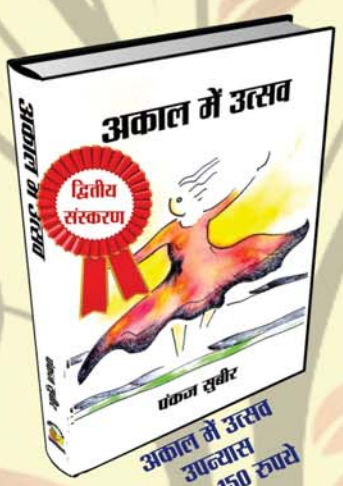

अकाल में उत्सव
उपन्यास
मूल्य . 150 रुपये

नई सदी का कथा समय
कथालोचना
मूल्य . 200 रुपये

शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट
कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने
सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9584425995,
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan

शिवना प्रकाशन
की पुस्तकें सभी प्रमुख
ऑनलाइन शॉपिंग
स्टोर्स पर

Shivna Prakashan Books Available At
All Leading Online Shopping Stores

amazon
http://www.amazon.in

flipkart.com
http://www.flipkart.com

paytm
https://www.paytm.com

ebay
http://www.ebay.in

संरक्षक एवं प्रमुख संपादक
सुधा ओम ढींगरा

संपादक
पंकज सुबीर

संपादकीय एवं व्यवस्थापकीय कार्यालय
पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट
बस स्टैंड के सामने, सीहोर, म.प्र. 466001
दूरभाष : 07562405545, 07562695918
मोबाइल : 09584425995
ईमेल : vibhomswar@gmail.com

ऑनलाइन 'विभोम स्वर' :
http://www.vibhom.com/vibhomswar.html
http://vibhomswar.blogspot.in
फेसबुक पर 'विभोम स्वर'
https://www.facebook.com/vibhomswar
एक प्रति : 50 रुपये (विदेशों हेतु ५ डॉलर $5)
सदस्यता शुल्क
200 रुपये (एक वर्ष), 400 रुपये (दो वर्ष)
1000 रुपये (पाँच वर्ष), 3000 रुपये (आजीवन)

विदेश प्रतिनिधि
अनिता शर्मा (शंघाई, चीन)
रेखा राजवंशी (सिडनी, आस्ट्रेलिया)

आवरण चित्र
के. रवीन्द्र
डिज़ायनिंग
सनी गोस्वामी, शहरयार अमजद ख़ान
तकनीकी सहयोग
पारुल सिंह

संपादन, प्रकाशन एवं संचालन पूर्णत: अवैतनिक, अव्यवसायिक। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री लेखकों के निजी विचार हैं। संपादक तथा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों का पूर्ण उत्तरदायित्व लेखक पर होगा। पत्रिका जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्टूबर में प्रकाशित होगी। समस्त विवादों का न्याय क्षेत्र सीहोर मध्यप्रदेश रहेगा।

Dhingra Family Foundation
USA

विभोम-स्वर

वैश्विक हिन्दी चिंतन की अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका

वर्ष : 1, अंक : 2, त्रैमासिक : जुलाई-सितम्बर 2016
RNI Title Code : MPHIN32709
ISSN NUMBER : 2455-9814

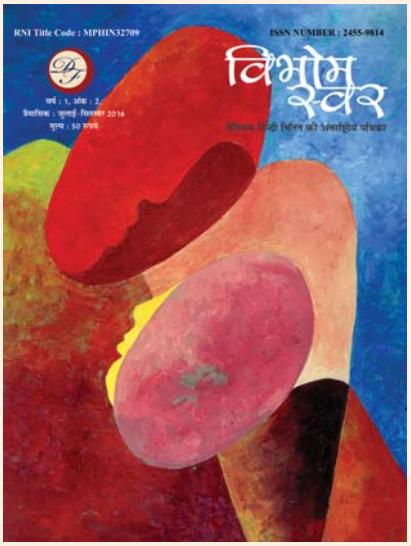

Dhingra Family Foundation
101 Guymon Court, Morrisville, NC-27560, USA
Ph. +1-919-678-9056 (H), +1-919-801-0672(MO.)
Email: sudhadrishti@gmail.com

इस अंक में

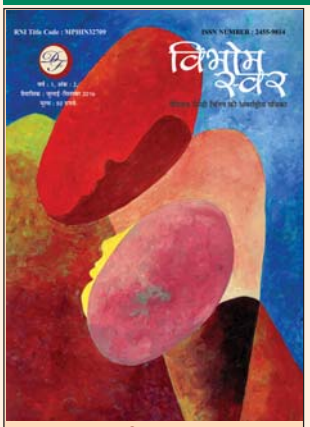

विभोम-स्वर
वर्ष : 1, अंक : 2
जुलाई-सितम्बर 2016

सम्पादकीय 5

मित्रनामा 7

साक्षात्कार

उषा वर्मा के साथ सुधा ओम ढींगरा की बातचीत 9

कहानियाँ

ख़ाली हथेली
सुदर्शन प्रियदर्शिनी 12

स्कूल प्रवेश
अखिलेश मिश्रा 16

तत्त्वमसि
चन्द्रकान्ता अग्निहोत्री 20

क्या-क्या बताऊँ.....
डॉ. अफ़रोज़ ताज 23

दूसरा नरक
रजनी गुप्त 26

लघु कथा

जाग्रति
मधुदीप 19

अनभिज्ञ
संदीप तोमर 22

लाखों पाए
कृष्णलता यादव 22

व्यंग्य

एक सच्ची मुच्ची की प्रेम कहानी
सुभाष चंदर 29

भाषांतर

आइना (जापानी कहानी) मूल लेखक : हारुकी मुराकामी
अनुवाद : सुशांत सुप्रिय 33

दोहे

डॉ. गोपाल राजगोपाल 39
आलोक चतुर्वेदी 39

कविताएँ

लालित्य ललित की कविताएँ 40
संजय वर्मा 'दृष्टि'की कविताएँ 42
धनंजय कुमार की कविताएँ 43
विजय कुमार की कविताएँ 44
भरत प्रसाद की कविताएँ 45
रेखा भाटिया की कविताएँ 46

ग़ज़लें

प्रखर मालवीय 'कान्हा' 15
आलोक मिश्रा 32
पूजा भाटिया 36
आशीष नैथानी 41
त्रिवेणी पाठक 47

संस्मरण

हर पल कुछ सिखाती है...ज़िन्दगी...
प्रियंका गुप्ता 37

दृष्टिकोण

सफ़र अभी भी बाकी है.....
मंजु मिश्रा 48

पुस्तक समीक्षा

डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल रचनावली
डॉ. कमलकिशोर गोयनका, डॉ. मीना अग्रवाल 50

अधूरे अफ़साने (लावण्य दीपक शाह)
समीक्षक : डॉ. अरविंद मिश्रा 52

प्रेम गली अति साँकरी (रामरतन अवस्थी)
समीक्षक : इस्मत ज़ैदी शिफ़ा 53

दलदल (सुशांत सुप्रिय)
समीक्षक : सुषमा मुनीन्द्र 54

प्रेमचंद : कहानी-कोश (डॉ. कमल किशोर गोयनका)
समीक्षक : कृष्ण वीर सिंह सिकरवार 56

स्वप्न, साज़िश और स्त्री (गीताश्री)
समीक्षक : वंदना गुप्ता 58

डाली मोगरे की (नीरज गोस्वामी)
समीक्षक - शिव भूषण सिंह गौतम 60

हाथ सुंदर लगते हैं (नीलकमल)
समीक्षक : गौतम राजरिशी 62

पुस्तकें मिलीं 55

साहित्यिक समाचार

समाचार सार 64

आख़िरी पन्ना 66

क्या 'इंसानियत' का पाठ इतना कठिन है कि उसे पढ़ा नहीं जा सकता

मित्रो, सदियों से चला आ रहा एक नाटक देख रही हूँ और मेरे साथ आप भी उसे देख रहे हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी थक गई है उसे देखते और हताश हो गई है पर वह समाप्त होने का नाम नहीं ले रहा। धर्म और राजनीति की बिसात पर खेला जा रहा घिनौना नाटक। अफ़सोस है कि अति संवेदनशील बुद्धिजीवी, अर्थशास्त्र के ज्ञाता, समाजशास्त्र के मर्मज्ञ, उच्च कोटि के धर्मनेता और राजनेता अपनी-अपनी सोच के कवच से निकल कर अपने-अपने ज्ञान के भंडार को शब्दों में उड़ेल कर अबोध बच्चों, निरीह स्त्री-पुरुषों से सहानिभूति प्रगट कर फिर लौट जाते हैं, अपने बनाए खोलों में। अच्छे अभिनेता हैं। अपना रोल बेहतरीन तरीके से निभाते हैं। बिलखती रह जाती है मानवता। जिससे उन्हें कोई सरोकार नहीं, वे अपने-अपने स्थान पर सुरक्षित हैं। हर युग में कुर्बान हुई है, आम जनता। कभी धर्म के नाम पर कभी राजनीति की उठा-पटक में।

क्या कारण है, आज तक कुछ रुका क्यों नहीं? क्या कारण है कि आज तक कुछ बदला क्यों नहीं? क्योंकि कुछ बदलने के लिए स्वयं को बदलना पड़ता है। वह कठिन काम है। अपनी सोच मनवाने की मनुष्य की आदत बन चुकी है। चाहे वह हिटलर था, मुसोलोनी या उन जैसे और.... मानव को मानव से प्यार करना सिखाया ही नहीं जाता, ऐसा कहते हुए तभी कहीं से कहकहा उभरता है.... रुकेगा कैसे? मानव जब स्वयं ही अपना अस्तित्व मिटाने पर तुला हो तो समय पलट वार करेगा ही? इतिहास अपने पृष्ठ पलटेगा। मैं कहकहे की तरफ बढ़ने लगती हूँ.... अतीत की ओर .....

1983 का समय। शादी के बाद मैं अमेरिका आई ही थी। यहाँ के पब्लिक टेलीविज़न चैनल पर लियो बुस्कालिया के भाषण उन दिनों दिखाए जा रहे थे। प्रेम, स्नेह और उससे जुड़े पहलुओं को लेकर वे बोलते थे। उस समय अमेरिका में अप्रत्यक्षय रंगभेद था। लियो बुस्कालिया की पुस्तकों और भाषणों ने काफ़ी प्रभाव डाला था। बड़े सरल और सादा तरीके से वे एक दूसरे से प्रेम करने की प्रेरणा देते थे। बिना किसी शर्त के मानव का मानव के प्रति प्रेम। हर धर्म ग्रन्थ ने इसी बात का समर्थन किया है पर धर्म गुरुओं ने, उनके अनुयायियों ने उसकी परिभाषाएँ अपनी सुविधा और स्वार्थ हेतु परिवर्तित कर ली हैं। लिओ खुल कर इसकी चर्चा करते।

सुधा ओम ढींगरा
101, गाईमन कोर्ट, मोरिंस्विल्ल
नॉर्थ कैरोलाईना-27560, यू.एस. ए.
फोन : +1-919-678-9056
मोबाइल : +1-919-801-0672
ईमेल sudhadrishti@gmail.com

संपादकीय

अमेरिका प्रवासियों का देश है। भिन्न-भिन्न भाषाएँ है। विभिन्न देशों और धर्म के लोग है यहाँ। आपसी प्रेम और सद्भावना पर ही यह टिका है। लिओ बुस्कालिया जैसे बहुत से लोगों की सोच ने इसे सींचा है। उस समय इस तरह की सोच की बहुत आवश्यकता थी; ज़रूरत तो आज भी है पूरे विश्व को।

कहकहा उन्हीं के एक भाषण से उभरा था। जिस तरफ मैं बढ़ी थी। समय पलट वार कर रहा है। करोड़ों वर्ष पहले डायनासोरज़ की भीतरी आग ने ही एक-दूसरे को जला डाला। उनका दुनिया में नामों निशाँ मिट गया। आज विश्व नफ़रत की जिस आग में जल रहा है, क्या यह विनाश का संकेत नहीं.... क्यों इसे नज़रअंदाज़ किया जा रहा है! यह आग किस-किस को जला डालेगी, सोचकर ही सिहरन होती है। धर्म और राजनीति आपस में गुञ्जलों से उलझ गए हैं, डगमग हो गए हैं, अपना-अपना रास्ता भूल कर एक ऐसे रास्ते पर चल पड़े हैं....जो भयवाह है, तबाही का है।

ईराक, ढाका और साऊदी अरब के आतंकी हमलों ने दिल दहला दिया। क्या ये लोग भीतर से डायनासोरज़ सी आग रखते हैं; जो अपनों को ही जला रहे हैं। क्या 'इंसानियत' का पाठ इतना कठिन है कि उसे पढ़ा नहीं जा सकता और उसे धर्म में स्थान नहीं दिया जा सकता? क्या इसके अनुयायी नहीं हो सकते? क्या बच्चे को यह लोरी सुना कर बड़ा नहीं किया जा सकता, इंसान की औलाद है... इंसान बनेगा। चाहूँगी कोई लेखक प्रेम ग्रन्थ लिखे; जो कल को धर्म ग्रन्थ बने। आपको ये कोरी भावनाएँ लग सकती हैं.... पर मैं हृदय की गहराइयों से कह रही हूँ काश! ऐसा हो जाए।

बचपन से सुना है कि भगवान् शिव के बेटे कार्तिकेय अपना रथ लेकर पूरी धरती की परिक्रमा करते रहते हैं, और जब वे आपके पास से गुज़रते हैं और आपने अगर कुछ कहा तो वे उसे पूरा कर देते हैं। साथ ही यह भी बताया जाता था कि हमेशा अच्छा बोलो, पता नहीं कब वे आपके पास से गुज़रें और आपकी बात सुन लें। काश! कार्तिकेय अपने रथ में घूम रहे हों और वे मेरी बात सुन कर..... कह दे आमीन!

नए-पुराने लेखकों ने अपनी रचनाएँ भेज कर विभोम-स्वर का साथ दिया, हार्दिक धन्यवाद!

पाठक मित्रो, विभोम-स्वर के प्रवेशांक को आपने जिस स्नेह से स्वीकार किया। विभोम-स्वर की टीम आपकी आभारी है। आगे भी आपका आशीर्वाद इसी तरह बना रहे। शुभकामनाओं के साथ.....

आपकी,

सुधा ओम ढींगरा

मौसम जाते हैं और लौटते हैं, शीत, ग्रीष्म और वर्षा। एक चक्र है जो जाने कितनी सदियों से चलता आ रहा है और चलता रहेगा। इस चलते रहने की प्रक्रिया का आनंद लेना ही जीवन है। वर्षा का आनंद जिस प्रकार पौधे उठाते हैं, भीग कर उपकार से झुक कर।

मित्रनामा

मेरा सलाम

'विभोम-स्वर' के प्रवेशांक के लिए दिल से बधाई!!! हिन्दी चेतना की तरह यह पत्रिका भी साहित्य प्रेमियों के दिलों में स्थान लेगी। आपकी मेहनत और समर्पण को मेरा सलाम।

-पंकज त्रिवेदी
संपादक - विश्वगाथा

***

बधाई!

बधाई!!! पत्रिका के लिए भी और भारतीय नववर्ष के लिए भी।

-नरेन्द्र कोहली (दिल्ली)

***

प्रवेशांक बहुत ही अच्छा

'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक बहुत ही अच्छा लगा, सब प्रकार से। उपलब्धि के लिए बधाई व प्रति भेजने के लिए धन्यवाद।

-हरीबाबू बिंदल, बुई, मेरीलेंड, (अमेरिका)

***

इस प्रयास को सलाम!

'विभोम-स्वर' बहुत ही अच्छा और बेहतरीन प्रयास। इस प्रयास को सलाम!

-अर्जुन निराला, सीनियर को ऑर्डिनेटर, अमर उजाला फाउण्डेशन

***

साहित्यिक दस्तावेज़ बनेगी

'विभोम-स्वर' के प्रवेशांक के लिए बधाई! यह पत्रिका साहित्यिक दस्तावेज़ बनेगी -मेरी शुभकामनाएँ!

-मनोज मोक्षेंद्र (दिल्ली)

***

बहुत अच्छी सामग्री

'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक मिला, हार्दिक बधाई और मंगलकामनाएँ!! स्वीकारें। सीहोर, मध्य प्रदेश को प्रतिष्ठा पूर्ण शिवना प्रकाशन के माध्यम से आपने राष्ट्रीय स्तर पर रेखांकित किया हुआ है। हम लोग तो इसी बात से प्रसन्न चले आ रहे थे कि दिल्ली, जयपुर, इलाहबाद की तरह सीहोर भी एक बड़ा नाम है। 'विभोम-स्वर' के प्रकाशन से यह ऊँचाई दूनी हो गई है। आज भी ज़्यादातर लोग धर्मयुग, हिन्दुतान, सारिका, दिनमान आदि को ले कर अतीत में चले जाते हैं। यों तो अनेक पत्रिकाएँ बाद में निकलीं किन्तु कोई स्थान खाली ही रहता आया है। पहल, हंस, कथादेश आदि को हिन्दी पाठकों का प्रेम मिला वैसा ही 'विभोम-स्वर' को भी मिलेगा ऐसी कामना है।

'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक बहुत सार्थक बना है। कहानी, कविताओं, लेख , संस्मरण आदि का संतुलित संयोजन है। अदम गोंडवी पर बहुत अच्छी सामग्री है। पुस्तक समीक्षाओं के लिए काफी स्थान दिया गया है जो महत्त्वपूर्ण भी है। पत्रिका का कलेवर अच्छा है। इंटरनेट संस्करण से इसकी पहुँच दूरदराज़ तक बनेगी इसमें कोई संदेह नहीं है। शुभकामना यही है कि यह जनप्रिय हो जाए। उत्तरोत्तर प्रगति करे और 'विभोम-स्वर' साहित्य की दुनिया में एक प्रतिष्ठित नाम हो।

-जवाहर चौधरी, 16 कौशल्यापुरी, चितावद रोड़, इन्दौर 452001

***

स्तर में कोई कमी नहीं

आप तो लगातार एक के बाद एक साहित्यिक किला फतह करते जा रहे हैं। 'विभोम-स्वर' अचंभे में डाल देती है। हैरत है कि इतना होते हुए भी स्तर में कोई कमी नहीं है। हर्षबाला की कहानी अच्छी लगी। अदम गोंडवी पर बहुत डूब कर लिखा है भाई गौतम ने। जनमेजय जी ने अपनी सधी हुई कलम से धृतराष्ट्र और संजय के संवाद के जरिये व्यंग्य की बेहतरीन बानगी परोसी है। आपको बहुत बधाई और शुभकामना एक पठनीय पत्रिका का शुभारंभ करने के लिए। सधन्यवाद

-जयनंदन, मोबा. 09431328758

***

सभी रचनाएँ पसन्द आईं

'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक मिला। धन्यवाद। अंक की सभी रचनाएँ पसन्द आईं। सम्पादकीय में आपने बेबाकी से अपनी बात सामने रखी है। भारत में हिन्दी चेतना का बन्द हो जाना एक दुखद घटना है। आपकी पत्रिकाओं की नई पाठिका हूँ। बस इतना ही..।

-सुधा गोयल, 290- ए, कृष्णानगर, बुलन्दशहर 203001

***

पत्रिका सुन्दर बन पड़ी है

'विभोम-स्वर' पत्रिका का प्रवेशांक प्राप्त हुआ। साहित्य की सभी विधाओं को समेटे यह पत्रिका सुन्दर बन पड़ी है। सभी वर्ग के पाठकों के लिए यह उपयोगी साबित होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। मैं पत्रिका की दीर्घायु की कामना करता हूँ। आशा करता हूँ कि हिन्दी साहित्य के मुक्त गगन में यह ध्रुवतारे की दीप्तमान होगी। सुधा जी का सम्पादकीय 'परिवर्तन जीवन का नियम है, उसे स्वीकारना ही पड़ता है',अपने आप में बहुत कुछ समेटे हुए है। मेरी ओर से पुन: कोटिश: बधाई और शुभकामनाएँ !

-डॉ. गोपाल राजगोपाल, 225, सरदारपुरा, उदयपुर (राज.) 313001

***

ऐसा नहीं लगा कि ये प्रथम अंक है

'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक प्राप्त हुआ। पढ़कर ऐसा नहीं लगा कि ये प्रथम अंक है। सामग्री- छपाई एवं सज्जा से लगता है कि पत्रिका कई वसंत देख चुकी है। इससे आपके एवं सहयोगियों के संपादन कौशल का अनुमान सामने आता है। ये पत्रिका प्रदेश की स्तरीय पत्रिकाओं में वृद्धि करती हैं। स्तरगत देखा जाए तो कोई कमी महसूस नहीं होती। इस बात में कोई शक नहीं की यह यात्रा कठिन है। वैचारिकता के संक्रमण काल में कोई जोखिम भरे कार्य का झंडा थामना बहाव के विपरित चलने जैसा है, यह एक चुनौती भी है। सबसे अच्छी बात यह है कि आपके पास पारखी दृष्टि है, यह कौशल सफलता को दीर्घजीवी आशीर्वाद प्रदान कर सका है। इस अंक में कुछ मित्रों ने पत्रिका के बारे में अच्छे विचार व्यक्त किये हैं। मैं उनके मत से सहमत हूँ। आपने मुझे प्रवेशांक भेज कर सम्मान दिया। धन्यवाद।

-सदाशिव कौतुक, श्रमफल,1520-सुदामा नगर, इंदौर-09

***

अंक विशेष तौर पर संग्रहणीय

'विभोम-स्वर' के प्रवेशांक के लिए मेरी

हार्दिक बधाई व शुभकामनाएँ ! वैश्विक हिन्दी चिंतन की ओर बढ़ाया यह क़दम एक मंगलमय आगाज़ है, साहित्य के क्षेत्र में। गागर में समावेश हर सिन्फ़ से सृजन को सँवारा है-कथा संसार में लघु कथा, स्मरण, संस्मरण, व्यंग्य, ग़ज़ल, गीत व समीक्षाएँ शामिल है और रचनात्मक विविधता व हस्ताक्षर कलमकारों की दस्तावेज़ी अभिव्यक्ति पठनीय व ज्ञानवर्द्धक है.... यह अंक विशेष तौर पर संग्रहणीय है।

मंगलकामानओं के साथ,

-देवी नागरानी (अमेरिका)

***

उच्च स्तरीय

'विभोम-स्वर' के लिए आपको और सारी टीम को बहुत बधाई! पत्रिका बिल्कुल वैसी ही है जैसी आपके सशक्त नेतृत्व में होनी चाहिए थी। विभोम-स्वर में आपका पहला पन्ना ही एक अलग पहचान देता है। फिर इतने सारे रंगों में लिपटी हुई कहानियाँ। प्रेम जनमेजय जी का व्यंग्य पढ़ा जो बहुत कुछ सोचने को मजबूर करता है ।'ग़ज़ल का अदम -लिबास' स्मरण भूलने लायक नहीं और उसके साथ-साथ अदम गोंडवी साहब की ग़ज़लें पढ़ कर मन तृप्त हो जाता है। और ज्ञानजनक लेख , गीत ,ग़ज़लें और कविताएँ सब उच्च स्तरीय छुअन के साथ हैं। पन्ना दर पन्ना मन को छू के निकला। आपके प्रयास, समर्पण और आपकी कर्मठता 'विभोम-स्वर' को उच्च स्तर की वैश्विक पत्रिका बनाने के लिए कम नहीं कि भगवान् से प्रार्थना करने की ज़रूरत हो। प्रभु तो स्वयं कर्म के दास हैं। दिल से बधाई हो!

-अनिता शर्मा, शंघाई, चीन

***

बहुत-बहुत शुभकामनाएँ!

आज ही 'विभोम-स्वर' का प्रवेश अंक प्राप्त हुआ है। अव्यवसायिक पत्रिका का निरन्तर प्रकाशन एक बहुत ही कठिन काम है, मगर सरल काम तो सभी कर लेते हैं, मज़ा तो कठिन काम करने में ही है। पत्रिका के प्रकाशन के लिए शुभकामनाएँ!

-मधुदीप, 138/16 त्रिनगर, दिल्ली-110035

***

अपेक्षा से कहीं ज़्यादा खरा

'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक समय से मिला। इतनी देर से अपनी प्रतिक्रिया भेजने के लिए क्षमा करेंगे। पत्रिका का आवरण अपनी पृथक विशिष्टता के साथ मुझे चमत्कृत एवं आश्वस्त कर गया। आप दोनों की रचनात्मक प्रतिभा के साथ अब संपादन, प्रकाशन (प्रतिभा) की भी कायल हो गई। यह भी सच है कि इन आश्वस्तियों के बावजूद प्रवेशांक से इतनी उम्मीद नहीं थी, अर्थात अपेक्षा से कहीं ज़्यादा खरा उतरा प्रवेशांक। एक बार फिर रचनात्मकता के क्षेत्र में इस नई पहल के शुभारंभ के लिए शुभेच्छाएँ। सस्नेह,

-सूर्यबाला, बी. 504, रुनवाल सेंटर, देवनार, मुंबई-88

***

बधाई!

'विभोम-स्वर' प्रवेशांक की नई साहित्यिक राहों के लिए बधाई!

-गजेन्द्र सोलंकी, दिल्ली

***

उच्च स्तरीय साहित्यिक पत्रिका

'विभोम-स्वर' जैसी उच्च स्तरीय साहित्यिक पत्रिका के संपादन एवं प्रकाशन के लिए आपका हार्दिक अभिनन्दन और बधाई। सुदीर्घ संपादन के कुशल अनुभव का सुफल इस पत्रिका में स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहा है। सम्पूर्ण सामग्री में विविधता और चयन की वैदुष्यपूर्ण सजगता सराहनीय है।

पत्रिका सँजोने योग्य है। समय के साथ ये पत्रिका भी निरन्तर उच्चतर स्तर को प्राप्त करते हुए हिन्दी साहित्य के पाठकों के मन में अपना विशिष्ट स्थान बना लेगी और निश्चय ही हिन्दी को गौरवान्वित करेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

शुभकामनाओं सहित,

-शकुन्तला बहादुर, कैलिफ़ोर्निया, अमेरिका

***

सभी बधाई के पात्र

सुधा ओम ढींगरा का हिन्दी प्रेम हिन्दी को गति प्रदान कर रहा है। उसके लिए सभी बधाई के पात्र हैं।

शुभकामनाओं के साथ

-भोलानाथ चतुर्वेदी, चौबे हाउस, फीरोजाबाद

***

प्रकाशन स्वागत योग्य

त्रैमासिक 'विभोम-स्वर' अच्छी लगी, हालाँकि सुधा ओम ढींगरा जी के संपादकीय से यह दुखद सूचना भी मिली कि तकनीकी कारणों से भारत से 'हिन्दी चेतना ' का प्रकाशन बंद कर दिया गया है। बहरहाल.... उसके विकल्प के रूप में ही सही 'विभोम-स्वर' का प्रकाशन स्वागत योग्य है प्राय: पत्रिकाओं के आरंभिक अंक ढीले-ढाले से होते हैं, लेकिन इस पत्रिका का पहला ही अंक विविध विधाओं की पठनीय सामग्री को समेटे हुए है।

-प्रदीप पंत, सी 2/31- ईस्ट ऑफ कैलाश, नई दिल्ली - 110065

***

प्रभावशाली

'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक मिला। लगभग कहानियाँ मैंने पढ़ ली हैं। अपने आप में सहज किन्तु प्रभावशाली हैं। अच्छा लगा कि वैश्विक स्तर पर हिन्दी चेतना के स्थान पर 'विभोम-स्वर' आई। उत्कृष्ट और अच्छी रचनाओं को ही स्थान मिलेगा ऐसा विश्वास है।

-पूरन सिंह, 240 फरीदपुरी वेस्ट पटेल नगर नई दिल्ली - 110065

***

बधाई

आभारी हूँ आपने 'विभोम-स्वर' का प्रवेशांक मुझे भेजा। पत्रिका के लिए मेरी बधाई। संपादकीय पढ़ गया। सुधाजी साफ-सुथरे ढंग से बातें कहती हैं। मित्रनामा में बड़े-बड़े नाम हैं। ऐसे नामचीन लोगों के पत्र पढ़ना भी सुख देता है। अदम गोंडवी पर स्मृति- लेख और उनकी ग़ज़लें पढ़ गया। प्रेम जनमेजय को पढ़ गया। पूरी पत्रिका धीरे-धीरे पढ़ूँगा। त्रैमासिक पुस्तक तीन महीने की खुराक होती है।

-अशोक प्रियदर्शी, सहजानंद चौक, हाउसिंग कालोनी, रांची, झारखंड

***

भारतीय स्त्री विमर्श कुछ देर से प्रारम्भ हुआ

(यूके की रचनाकार उषा वर्मा के साथ सुधा ओम ढींगरा की बातचीत)

कई वर्षों से यूके की उषा वर्मा की कहानियाँ पढ़ रही हूँ। उनसे कभी मिलने का सौभाग्य नहीं मिला। कुछ मेरे जीवन की प्रतिबद्धताएँ ऐसी रहीं कि भारत हो या विदेश, लेखकों से मैं अधिक मिल नहीं पाई। हाँ फ़ोन से ज़रूर सबसे बातचीत हो जाती है। पत्रकारिता से जुड़े होने का एक लाभ यह हुआ कि जब किसी लेखक के बारे में जानने की उत्सुकता जागी, मैंने उनका इंटरव्यू ले लिया। आधुनिक तकनीकी सुविधाओं के सहारे ही मैंने अधिकतर लेखकों से बातचीत की है। उषा जी से भी ऑन लाइन बात हुई-

जन्म : 26 मई, 1937 बाराबंकी, उत्तर प्रदेश, भारत।
शिक्षा : एम.ए (दर्शन शास्त्र), पी.जी.सी.ई।
भाषा : हिन्दी, अंग्रेज़ी, उर्दू, बँगला।
विधा : कहानी, कविता, आलोचना और अनुवाद।
साहित्यिक कृतियाँ : कुल नौ पुस्तकें (तीन प्रेस में)
कविता-संग्रह : क्षितिज अधूरे, कोई तो सुनेगा।
कहानी-संग्रह : कारावास
संपादित : सांझी कथायात्रा, प्रवास में पहली कहानी।
अनुवाद : हाऊ डू आई पुट इट ऑन
सम्मान एवं पुरस्कार : पद्मानंद साहित्य सम्मान, निराला साहित्य सम्मान, शाने अदब, अभिव्यक्ति साहित्य सम्मान,अक्षरम् साहित्य सम्मान।
सम्प्रति: केम्ब्रिज विश्वविद्यालय में हिंदी साहित्य एवं हिंदू धर्म परीक्षक। इसके अलावा स्वतंत्र लेखन। अवकाश प्राप्त: (सीनियर लेक्चरर,लीड्स मेट्रोपॉलिटन विश्वविद्यालय)
संपर्क : 33 ईस्ट फील्ड क्रेज़ेन्ट, यॉर्क, यॉर्क-Yo10 5HZ U.K
ईमेल-ushaverma9@hotmail.com

प्रश्न : कहानियाँ लिखते समय आप किस मानसिकता से गुज़रती हैं, यह जानना चाहती हूँ; क्योंकि हम प्रवासी लेखकों को लिखते समय हमेशा एक डर बना रहता है। वह डर होता है दो संस्कृतियों के टकराव का और उस टकराव में निष्पक्षता से निकलने का।

उत्तर : कहानियाँ लिखने के पहले मैं कुछ न कुछ पढ़ती हूँ। इससे मुझे ध्यान केन्द्रित करने में सहायता मिलती है। लिखने के पहले क्या लिखना है इस पर विशेष रूप से विचार करती हूँ। सच तो यह है कि कभी-कभी यह चाहे घटना हो या कोई एक वाक्य, वह सालों मेरे मन में घुमड़ता रहता है। अक्सर मैं स्वयं से पूछती हूँ, क्या जो लिख रही हूँ इसका कोई विशेष प्रयोजन है। ये बातें लेखनी को आगे बढ़ाने में सहायता करती हैं। यांत्रिक रूप से लिखना अत्यन्त कठिन लगता है। यह समय अपने अंतर को आलोकित करने का होता है। यह आलोक कोई चमत्कार या दैविक शक्ति नहीं होती यह एक अंतर्दृष्टि है जो हमें स्वयं मिलती है। कविता लिखने के लिए यह आलोक आवश्यक है। कहानी में तो सब कुछ साफ़ दिखने के बाद ही लिखना होता है। संस्कृतियों के टकराव पर तो कहानियाँ लिखी जाती हैं। डर थोड़ा सा इस बात का रहता है कि हम दूसरे की संस्कृति के बारे में जो कुछ जानते हैं, वह सतही तो नहीं है। कितनी गहराई से जानते हैं। और फिर इस तेज़ी से बदलती दुनिया में कुछ भी स्थिर नहीं है। इतनी द्रुत गति के साथ बदलाव आता है कि पैर टिकाना कठिन लगता है। फिर भी आंतरिक प्रयोजन से प्रेरित हो कर ही लिखा जाता है।- क़लम काग़ज़ स्याही न रहे / तो भी उँगलियाँ लिखेंगी पानी से इबारत पत्थर पर / उनका स्वत्व कौन मिटाएगा!

आंतरिक प्रयोजन और आंतरिक आलोक ही लेखन को निष्पक्ष भी रखता है।

प्रश्न : प्रवास आपकी रचनाशीलता में कितना सहायक रहा?

उत्तर : मैं समझती हूँ कि जितना काम होना रहता है, वह आप कहीं भी रहें हो जाता है। आप प्रवास में रहें या कहीं और अपने देश में रहें। सभी जगह सुविधाएँ हैं और समस्याएँ भी हैं। किसको क्या मिलेगा यह कहना कठिन है। मैंने भारत में जो लिखा उसे कभी रखा भी नहीं। यह विश्वास करने लायक बात नहीं लगती, किंतु यही सत्य है। जो प्रवास में लिखा वही छपा भारत में। नौ किताबें छपीं फिर कैसे कह सकती हूँ कि प्रवास सहायक नहीं रहा! जो मेरे लिए अमूल्य था उसे क्यों नहीं रखा, कभी रखा ही नहीं तो छपवाने का सवाल ही नहीं उठता। अनुभव होने पर बहुत से भ्रम टूटते हैं, मेरे भी टूटे। साहित्यकार को मैं अत्यंत आदर से देखती थी; मेरे मन में एक तरह का पूजा का सा भाव रहता था। जो लिखता है वही जीता है। मैंने अपने लिए भी यही माप दंड रखना चाहा। बी.ए और एम.ए में दर्शन शास्त्र पढ़ने के बाद मेरे मन में जमे कूड़ा करकट स्वयं ही निकलते गए। जीवन को देखने की एक दूसरी ही दृष्टि मिली। तरह -तरह के लोगों से मिलना, यहाँ

की शिक्षा-पद्धति को समझना, साहित्य का विस्तार, यहाँ शिक्षण के अनुभव और आप्रवासियों के लिए सामाजिक कार्य यही मेरी सबसे बड़ी उपलब्धियाँ हैं। प्रवास ने मेरी दृष्टि को बहुत से नए आयाम दिए।

प्रश्न : आपने पहले-पहल क़लम कब उठाई?

उत्तर : मैंने छठीं सातवीं क्लास से ही लिखना शुरू किया। मेरी माँ बड़ी विदुषी थीं। वह घर के काम से निबट दोपहर में भारत भारती, जयद्रथ-वध, साकेत आदि पढ़ा करतीं। बचपन से सुनते-सुनते मुझे कई सर्ग याद हो गए थे। मैंने चौदह साल की उम्र में एक खंड काव्य लिखा शकुंतला, अब सोच कर बड़ी हँसी आती है। मेरे पास क्या अनुभव था। लेकिन मैं किताबें पढ़ा करती थी, शायद उसी का असर होगा। हमारे यहाँ लड़कियाँ बहुत धीरे- धीरे समझदार होती हैं। स्वयं को महत्त्व देना भी नहीं जानतीं। शायद मेरे साथ भी वही हुआ।

प्रश्न : आज की स्त्री किन समस्याओं से मुक्ति चाहती है?

उत्तर : यह काफी टेढ़ा प्रश्न है। हर वर्ग की स्त्री की समस्याएँ अलग -अलग हैं। मोटे तौर पर अगर हम देखें तो पाएँगे कि उच्च-वर्ग और मज़दूर-वर्ग से कहीं अधिक मध्यम वर्ग इसमें फँसा हुआ है। किसी भी नारी को चयन करने की सुविधा या अधिकार होना चाहिए। घर की चारदीवारी के अंदर निर्णय लेने की क्षमता यह भारतीय संदर्भ में अधिक महत्त्वपूर्ण है। और यह तभी संभव है जब पुरुष का माइंड सेट बदले। बदल रहा है, किन्तु इसमें अभी भी बहुत समय लगेगा। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि पुरुष के व्यक्तित्व पर इसका असर पड़ रहा है। पुरुष इसे हार-जीत का मसला बना लेता है। और अगर किसी दबाव के तहत स्वीकार भी कर ले तो वह ख़ुश नहीं होता। जबकि औरत हमेशा हार मानने को तैयार रहती है और इसमें हार भी नहीं मानती। अभी हम अपने मुक्ति पर्व को मना भी नहीं पाए कि नारी एक वस्तु बन गई। उपभोक्ता संस्कृति और बाज़ारवाद के बढ़ते प्रभाव ने हमारी गरिमा को भी छीनने का भयंकर उपाय किया है।

बुद्ध से एक प्रश्न-
भंते, आपने कहा था
इच्छाओं के दमन से
मिलती है मुक्ति
आवागमन से
मैं एक नारी हूँ
मुझे तो
इच्छाओं का दमन ही सिखाया था
माता-पिता ने पति और पुत्र ने
क्या मुझे मुक्ति मिलेगी?
आपके उत्तर की प्रतीक्षा रहेगी।

तो एक तरह से मुक्ति हर फ्रंट पर चाहिए। जो बाज़ार के षड्यंत्र को नहीं समझते या जानकर भी अनजान हैं, उनका कहना है कि अब तो औरत हर तरह से स्वतंत्र है। उसे क्या दिक्कत है? पढ़ाई-लिखाई, बाहर आना-जाना, नौकरी करना आदि-आदि पर इसका निर्णय कौन करता है? भारत के संदर्भ में तो यह अत्यंत कठिन है। लड़की के लिए और बहू के लिए अलग-अलग आचार संहिता, लड़के के लिए एकदम ही दूसरी। भूमंडलीकरण का बाज़ार खुले आम बुलडॉग ड्रिंक उत्तेजक पेय, शक्ति वर्धक दवाएँ बेंच रहा है। औरत आज बाज़ार में एक वस्तु बन कर रह गई है। ख़रीदने की ताक़त चाहिए। टी.वी. पर जिस तरह से कामातुर लड़के-लड़कियाँ, कूल्हे मटकाते हैं। जितने गैंग रेप होते हैं, वही क्या हमारे समाज का आईना नहीं है। यह संपन्न संस्कृति का विपन्न रूप नहीं है क्या?

प्रश्न : भारतीय स्त्री विमर्श और पश्चिमी स्त्री विमर्श में आप क्या अंतर देखती हैं?

उत्तर : कहा जा सकता है कि भारतीय स्त्री विमर्श कुछ देर से प्रारम्भ हुआ। किंतु इसकी जड़ें बहुत पुरानी हैं। और हमारे यहाँ दादी-नानी के अनुभवों से शुरू होकर लोकगीतों में नारी की व्यथा-कथा अत्यंत मार्मिक रूप में लिखी गई है। बहुत सी औरतों ने अकेले क़दम उठाए हैं। व्यक्तिगत रूप से अपने अधिकारों के लिए लड़ाई करती रही हैं। जहाँ-जहाँ अन्याय हुआ वहीं संघर्ष भी प्रारम्भ हुआ। ये आंदोलन संगठित बहुत देर से हुए। उत्तर प्रदेश, बिहार आसाम आदि प्रदेशों में इतनी जागृति नहीं आ सकी है। यहाँ पढ़ी-लिखी औरतें तो आराम से हैं किन्तु एक बहुत बड़ा वर्ग इन अधिकारों से वंचित है। अत: पूरे भारत में यह एक रूप नहीं था। स्वतंत्रता के बाद से संगठित हुए। पश्चिम में प्रथम विश्व युद्ध के बाद मतदान का पूर्ण अधिकार मिला हम कह सकते हैं कि संगठित आंदोलन का परिणाम था। रूसो ने समान अधिकार की बात ग़रीब और अमीर के बीच की थी-पर इसी सिद्धांत ने नारी और पुरुष में समान अधिकार की चेतना को जाग्रत किया। इंग्लैंड में औद्योगिक-क्रांति ने औरतों को घर से बाहर निकलने का अवसर दिया, फलस्वरूप उनमें अपने अधिकारों के प्रति चेतना बढ़ी। पश्चिम में भी नारी अपनी भावनात्मक संरचना के कारण आज भी त्रस्त है। ठीक हमारी तरह। किन्तु यांत्रिक अर्थ में हमसे कहीं आगे है। पश्चिमी नारी मुक्ति आंदोलन के झरने के नीचे कभी नहाए नहीं केवल दूर से ही देखकर मुग्ध होते रहे।

प्रश्न : आपके विचार में विचारधारा और रचना का कितना संबंध होना चाहिए?

उत्तर : विचारधारा का रचना से संबंध बड़े ही प्रच्छन्न रूप में है। यह संबंध ऐसा न हो कि पाठक की आज़ादी में बाधा पड़ने लगे। पाठक बिना किसी दबाव के पढ़ता जाए। जो अच्छा लगे उसे लेता जाए। यह तभी संभव है, जब लेखक अपने चिन्तन को गहरी संवेदना, भावना, इच्छा और आकांक्षा सब के साथ एकरस करके अपनी रचना में व्यक्त कर के ही अपना मंतव्य पूरा कर सकता है। अत: यह संबंध तो है और वह गहरा भी है, पर वह सीधे चोट न करे कि पाठक आक्रांत हो जाए।

प्रश्न : साहित्यिक गुटबंदियाँ क्या बाज़ारवाद का परिणाम हैं या विचारधारा का.....

उत्तर: साहित्यिक गुटबंदियाँ, बाज़ारवाद और विचारधारा दोनों का परिणाम हैं। साहित्यिक गुटबंदियाँ तो पहले भी होती थीं, पर शायद उनके समय ऐसा विकराल रूप न रहा हो। राजनैतिक गुटबंदियों की तरह संवेदनहीनता में यहाँ भी कोई कमी नहीं है। जहाँ तक बाज़ारवाद का सवाल है उसने तो हमें एक साथ ही बेकार और विवश कर दिया है; इसने तो हमारी

अन्तरात्मा को बंदी बना लिया है। साहित्य में वही लिखा जाएगा जो छप सके। कोई रोल-मॉडल नहीं है। अच्छा बुरा तो सदैव से रहा है किंतु आज वह संतुलन बुरी तरह से बिगड़ गया है। राजनीति से ही प्रारम्भ करें अगर पार्लियामेंट में बैठ कर मेम्बर अश्लील फ़िल्म देखें तो, अगर सारी सभ्यता को त्याग कर गाली-गलौज करें तो देश जिस सर्वनाश की तरफ़ जा रहा है उसे कौन रोक सकता है। साहित्य से ही नहीं जीवन से ममता, करुणा, दया, सहानुभूति जैसे शब्द निकलते गए, रह गई सूखी बंजर ज़मीन जहाँ नफ़रत के पौधे ही उगेंगे। साहित्यकार भी रातों-रात महान साहित्यकार बनना चाहता है। वह क्यों पीछे रहे! साधना जैसे शब्दों से उसका सरोकार नहीं रह गया है। पुरस्कारों की राजनीति ने तो माहौल को और भी धुआँ-धुआँ कर दिया है।

प्रश्न : लेखक की रचनाशीलता में आप निजता का दखल कहाँ तक और पाठक तथा समाज की भूमिका को किस रूप में देखती हैं?

उत्तर : मेरा अपना ख़याल है जो लिखा जा रहा है, उसका मूल्यांकन करने में पाठक की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। उसके निहितार्थ क्या हैं उसे स्वयं समझे, आलोचक का काम भी यही होगा समाज के सामने लाएँ। समकालीनता के सवालों पर, समस्याओं पर जनमत तैयार करें। साहित्यकार से पाठक का जुड़ाव किस स्तर पर है। समाज का दर्पण यदि साहित्य है तो क्या दर्पण अपना काम ठीक से कर रहा है। साहित्यकार या लेखक का संबंध व्यक्ति बनाम पाठक से कुछ तटस्थता का होता है, या वह अपनी निजत्व को बाँटता नहीं है। जो भी वस्तुस्थित है उसका रेशा-रेशा अलग कर देता है। वह पाठक से यह नहीं कहता कि तुम क्या करो। लेखक का काम समाप्त हो जाता है। पाठक का उत्तरदायित्व है, लिखे हुए को पढ़ना, गुनना और फिर समाज में लाना। वह अपनी निजता का प्रयोग अपने लिए करता है पाठक को आक्रांत करने के लिए नहीं।

प्रश्न : विदेश कब आना हुआ और तब से अब तक के अनुभवों की झलक क्या आप की कहानियों मिलती है?

उत्तर : विदेश, मैं 71 में आई। वापस गई। फिर दुबारा आई। उसी समय मेरे पति की यहाँ भाषा विज्ञान विभाग में नियुक्ति हुई। तब से यही हूँ। विभाग में मैं पार्ट टाइम पढ़ाती थी। यहाँ के ग्रैजुएट विद्यार्थियों को पढ़ाने का अनुभव हुआ जो अत्यंत सुखद था। इसी समय मुझे बच्चों के लर्निंग पैटर्न में रुचि हुई अत: मैंने खुद पोस्टग्रैजुएट ट्रेनिंग की और वहीं मेट्रोपॉलिटन विश्वविद्यालय में मेरी नियुक्ति हुई, लेक्चरर की। मैं स्कूलों में अपने विद्यार्थियों को सुपरवाइज़ करने जाती थी। वहीं के अनुभवों से ''रॉनी'' कहानी की रचना हुई। यहाँ कदम-कदम पर कहानियाँ बिखरी हुई हैं। ''उसकी ज़मीन'' कहानी के सूत्र भी यहीं से मिले। ''सलमा'' को तो मैंने पढ़ाया था, कितनी बार फ़ोन के पैसे देकर उसे पाकिस्तान उसके माँ-बाप से बात कराई थी। ये कहानियाँ मेरे शिक्षक-जीवन की विपुल संपदा हैं।

प्रश्न : समकालीन स्त्री लेखन पर आपके क्या विचार हैं? विशेषत: विदेशों में कैसा लिखा जा रहा है।?

उत्तर : बहुत कुछ लिखा जा रहा है। बड़ा ही संतोष होता है कि हम भी कुछ खुल कर कह सकते हैं। पर जल्दबाज़ी में चौंकाने वाली बातें या अश्लील लिख कर नाम कमाने की इच्छा मेरी समझ में ठीक नहीं है। मैं समझती हूँ यथार्थ के नाम पर चटकारे लेने वाली चीज़ों का जीवन बहुत कम होता है। यह मेरे विचार हैं किन्तु हर लेखक स्वतंत्र है अपने ढंग से काम करने के लिए। यह हिसाब-किताब तो समय करता है। स्त्री लेखन किसी भी हालत में पुरुषों से कम नहीं है। हम सभी अपनी सामर्थ्य भर लिखते हैं। कई लेखकों की कई किताबें हैं पर उनकी जीवन दृष्टि का पता नहीं चलता। मैंने तो खुद थोड़ा ही लिखा है इसलिए कोई भी जजमेंट देना उचित नहीं लगता। मैंने एक आलोचक मित्र से पूछा, 'लोग मेरी कविताओं, कहानियों की प्रशंसा तो करते हैं। फिर किसी की निगाह क्यों नहीं पड़ती।' उनका उत्तर था 'आपने अपनी दुकान कहाँ लगाई?' मुझे उत्तर मिल गया कुछ कहने की आवश्यकता नहीं रही। विदेशों में स्त्री लेखन के साथ एक बात यह ज़रूर है, चालीस की उम्र से नीचे यहाँ साहित्य में बहुत कम लोग रह जाएँगे। इस पीढ़ी के बाद बहुत कम लेखिकाएँ रह जाएँगी। विदेशों में बहुत कुछ लिखा जा रहा है। हम बड़े ही ख़तरनाक समय में जी रहे हैं।

प्रश्न : आपकी उपलब्धियाँ क्या हैं? और नया क्या लिखा जा रहा है?

उत्तर : सुधा जी मेरी उपलब्धियाँ तो कोई विशेष नहीं हैं, अत: कुछ कहते अत्यंत संकोच हो रहा है। उपलब्धियों में मेरी नौ किताबें हैं। इनमें से तीन प्रेस में हैं और शायद इसी दिसंबर में आ जाए। कुछ लेख जो पत्रिकाओं में छपे हैं। इसमें से ''कारावास'' को पद्मानन्द साहित्य सम्मान यू.के. मिला तथा ''कोई तो सुनेगा'' को अक्षरम साहित्य सम्मान, भारत और दो चार सम्मान जैसे निराला सम्मान हैदराबाद, शाने अदब झाबुआ मध्यप्रदेश से मिला। हाल में अंतरराष्ट्रीय लघु-कथा प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार। उज्जैन वि.वि.की एक छात्रा श्वेता सिंह ने मेरी पुस्तक कारावास पर पी.एचडी किया। कुछ और लोग भी काम कर रहे हैं। सबसे बड़ी उपलब्धियाँ तो अनुभवों का विस्तार हुआ। पिछले कई दशक से 'भारतीय भाषा संगम', 'यॉर्क इंडियन एसोशियन' और 'सुनिए सुनाइए' संस्थाएँ; जिनकी स्थापना मेरे पति महेन्द्र किशोर वर्मा और मैंने की थी। तीनों संस्थाएँ साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम करती हैं।

आजकल एक लघु-उपन्यास पढ़ रही हूँ, जिसे मेरे समेत यूके की सात लेखिकाओं ने लिखा है। अभी प्रकाशित हुआ है 'मॉम, डैड और मैं'। यूके से ऐसा प्रयोग करने की प्रेरणा अज्ञेय जी के उपन्यास 'बारह खंबे' से मिली। जिसे अज्ञेय जी के साथ मिलकर बारह लेखकों ने लिखा था। कुछ दिन क़लम को विश्राम देने का इरादा है।

उषा जी आप अपनी क़लम को विश्राम देकर फिर से लिखना शुरू करें। आपकी नई रचनाओं का इंतज़ार रहेगा। बातचीत करने के लिए धन्यवाद।

****

खाली हथेली

सुदर्शन प्रियदर्शिनी

(खाली हथेली कहानी सुदर्शन प्रियदर्शिनी के नए कहानी संग्रह 'खाली हथेली' की प्रतिनिधि कहानी है।)

सुदर्शन प्रियदर्शिनी के सूरज नहीं उगेगा, जलाक, रेत के घर, न भेज्यो बिदेस उपन्यास, उत्तरायण, खाली हथेली कहानी संग्रह, शिखंडी युग, बराह, यह युग रावण है, मुझे बुद्ध नहीं बनना, अंग-संग, कविता संग्रह और मैं कौन हाँ पंजाबी कविता संग्रह है। अंग्रेज़ी पत्रिका फ्रेगरेंस का संपादन भी किया। कहानी संग्रह 'उत्तरायण' पर ढींगरा फ़ाउण्डेशन हिन्दी चेतना अंतर्राष्ट्रीय कथा सम्मान के अतिरिक्त कहानी 'सन्दर्भहीन' को हरियाणा साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कार, हिन्दी परिषद कैनेडा द्वारा महादेवी पुरस्कार, फेडरेशन ऑफ इंडिया ओहायो द्वारा महानता पुरस्कार प्रदान किया गया संप्रति: अमरीका की ओहायो नगरी में स्वतंत्र लेखन।

सम्पर्क : 246 stratford Drive, Broadview Hts. Ohio 44147 U.S.A

ईमेल : sudarshansuneja@yahoo.com

मोबाइल : 440-717-1699

तुम कुछ माँगती नहीं थी - न तुम्हें चाहिए था, फिर भी तुम चाहती थी हर वस्तु स्थिति में मेरा होना। घर में, दीवारों में, कारों में, आँगन में, दालान में जहाँ भी ज़रा टूट-फूट होती तुम्हें मेरे होने की प्रत्याशा रहती थी, जो मैं कभी पूरा नहीं करता- क्योंकि करना नहीं चाहता था। पता नहीं क्यों कोई वितृष्णा की गहरी लकीर थी जो तुम्हारे और मेरे बीच लक्ष्मण रेखा सी उदीप्त रहती। मैं इस रेखा के अंदर आता तो शायद जल जाता। मैं भस्म होना नहीं चाहता था। आम लोग जिसे पहले दिन बिल्ली मारना कहते हैं, पर बिल्ली मारते -मारते स्वयं ही बलि चढ़ जाते हैं, अपना -आप भूल कर विसर्जित हो जाते हैं - एक पावस भीगे आलते से रंगे पाँवों के नीचे, किसी की रुनझुन पायल की कुहुक के साथ बंध जाते हैं। मैं स्वयं को इस तरह शहीद नहीं होने देना चाहता था, मैं स्वयं को जीवित रखना चाहता था।

उस पर तुम सहस्त्र पंखों वाली स्वछन्द तितली बन-बन कर उड़ने में विश्वास रखने वाली और मैं खिड़कियाँ, दरीचे, दहलीज़ें बंद रखने की कोशिश करता--तुम फिर उड़ जातीं। यह आदत तुम्हारी कॉलिज में भी थी। कॉलिज में तुम मुझे बहुत सताती रही। उड़ी-उड़ी फिरती--कभी इस डाल तो कभी उस डाल। कभी इस मंडली की चहेती तो कभी उस मंडली की। मैं जानता था कि तुम्हारी अनन्य सुंदरता, अनूठी चाल पर सारा कॉलिज दीवाना था और इसी का लाभ तुम उठाती थी मुझे चिढ़ा कर-यों अंदर से मैं आश्वस्त था कि तुम मेरी हो, सिर्फ मेरी-और कहीं तुम भी उसी शिद्दत से यह जानती थी।

हम ने विवाह भी इसलिए किया क्योंकि हम एक जोड़ी के रूप में जाने जाते थे। हमारे घर तक में इस की स्वीकृति हो चुकी थी। सभी इस को स्वीकार कर चुके थे कि एक ही क्लास के दो डॉक्टर-बुरा भी क्या है।

मुझे याद है- जब तुम फ़ाइनल में प्रथम श्रेणी लेकर आई तो मेरे प्रति तुम्हारी बेरुखी बढ़ गई थी- क्योंकि तब तक तुम मेरा उद्देश्य जान गई थी कि मैं तुम्हारी हेकड़ी तोड़ना चाहता हूँ। और एक दिन तुम्हारी इस नकारात्मकता का खुल कर बदला लूँगा- तभी से हमारे बीच एक गाँठ पड़ गई -जिसने मेरा पशुत्व और प्रभुत्व दोनों जगा दिए। तुम नहीं चाहती थी कि यह विवाह हो और इसके लिये तुम ने प्रयत्न भी किये, पर वह समय और था। घर वालों के सामने और मेरे सामने तुम्हारे किसी तर्क ने काम नहीं किया।

आज जिस हथेली में मैं तुम्हारा कोमल हाथ थामे बैठा हूँ उसी में तुम्हें दबोच-दबोच कर अट्टहास भरी हंसी-हँसता रहा। शायद मैं ही एक ऐसा पुरुष हूँ जिसके अंदर का जानवर सदैव जीवित और बुलंद रहा। यह जानवर होता तो सारे पुरुष वर्ग में है पर कभी-कभी या शुरू-शुरू की नवेली चूमा-चाटी में पुरुष एक पालतू चौपाया बन कर अपनी दानवी -प्रवृत्ति को दबा लेता है और सारी उम्र हिनहिनाते हुए ज़िन्दगी बिता देता है या शनैः शनैः अपना रूप बदलता रहता है-कभी खूंखार-तो कभी पालतू खरगोश। लेकिन मैं जब तुम्हें यहाँ लाया तो लगा जैसे सारा अमेरिका-मेरी इस कुव्वत का एहसान मानता है। यहाँ तक कि

तुम्हारा सारा कुनवा, तुम्हारी सहेलियाँ भी- तुम्हारे भाग्य पर इतराती थी। केवल नहीं मानती थी तो तुम! और यही मैं मनवाना चाहता था। क्योंकि तुम मेरे साथ आई थी- इन्टरनशिप मुझे मिली थी। यूँ तुम कोई मुझ से कमतर नहीं थी- मेरे बराबर की डॉक्टर थी, पर यहाँ मैं नंबर मार गया था। मेडिकल कॉलिज में जहाँ हम पढ़ते थे-तुम मुझ से आगे ही रहती थी। पर जानती हो मैंने कभी उस बात को कोई तरह नहीं दी। मेरे मन में, मेरे घर में-मेरे आसपास यह इतना बुलंद था कि मैं पुरुष हूँ और तुम्हारा दर्जा या किसी भी लड़की का दर्जा मुझ से छोटा ही रहेगा। याद है जयमाला के समय मुझ से कितनी शिद्दत से मनवाया गया था कि तुम्हारे सामने सर नहीं झुकाना- नहीं तो सदा के लिए निकम्मा गुलाम हो जाऊँगा। दोस्त -मित्र भी चिल्ला -चिल्ला कर, उचक- उचक कर न झुकने की सलाह दे रहे थे। आख़िर तुम्हारे भाई ने तुम्हें तनिक उठा कर-जयमाला मेरे गले में डाल दी थी। मैं अंदर ही अंदर अपने दोस्तों का कितना आभारी था कि मुझे झुकने से बचा लिया। मुझे लगता मैं कहीं शिखर पर बैठा तुम पर गोलियाँ दागूँ और उम्र भर दागता रहा।

तुम सुबह-सुबह उठ कर मेरा और बच्चों का नाश्ता बनाती। भाग-भाग कर उन्हें तैयार करती और फिर भाग-दौड़ में - हस्पताल के लिये निकलती। कई बार तुम्हें देर हो रही होती तो मैं कार लेकर निकल जाता- बिना यह सोचे कि तुम कैसे जाओगी - कैसे पहुँचोगी - क्योंकि अस्पताल की ड्यूटी से पहले तुम्हारी क्लास भी होती थी। तब हमारे पास एक ही कार थी। पर मैंने कभी पता नही किया कि तुम उस दिन कैसे पहुँची! तुम्हारी ड्यूटी या क्लास कैसे हुई! बस मैं अपनी धुन में था। 'मैं' बस 'मैं'। मेरे आसपास दुनिया घूमती थी और मैं चाहता था- तुम्हारी दुनिया- तुम्हारा वजूद भी बस मेरे आसपास घूमें। मैं हूँ और यही सर्वोपरि है। पर तुम्हारी ओर से नकार की भावना मुझे और भी अक्खड़ और ज़िद्दी बनाती रही। मैं तुम्हारी थकान, तुम्हारी टूटन, तुम्हारी व्यस्तता, बच्चों के प्रति ज़िम्मेवारी को नकार कर चाहता कि रात को तुम्हें उसी तरह

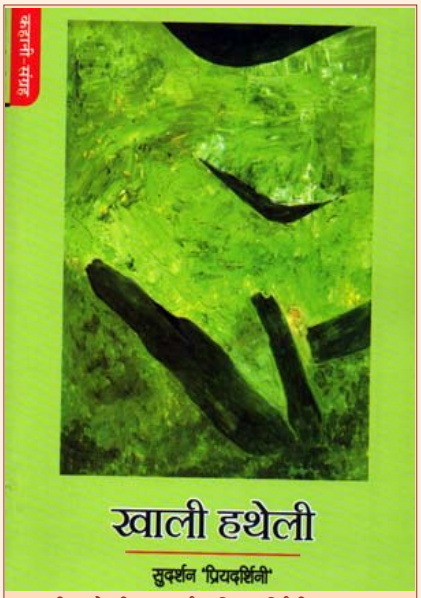

खाली हथेली, सुदर्शन प्रियदर्शिनी, प्रकाशक: बोधि प्रकाशन, 77, सेक्टर-9, रोड नं. 11, करतारपुरा इंडस्ट्रियल एरिया, बाईस गोदाम, जयपुर-302006, मूल्य: 100 रुपये

मरोड़ूँ- मसलूँ और अपनी प्यास मिटाऊँ और तुम बस मेरे पास बिछी रहो - मेरी प्यास बुझाती रहो - तब तक जब तक मैं न थक जाऊँ। तुम ने वह भी सहा और शिकायत नहीं की। यद्यपि बच्चे कभी-कभी आकर कहते- पापा! आज मम्मी रो रही थीं। मैं चुप्पी लगा जाता। सब जानते हुए भी सब कुछ अंदर घुटक जाता और पहले से भी अधिक अहमी और आक्रामक हो उठता।

मैं जानता था तुम्हें बाहर खाना, बाहर जाना, संगीत- सिनेमा- कॉनसर्ट, ड्रामा आदि बहुत पसंद थे- कभी तुम जाने की इच्छा जताती तो मैं झटक देता और तुम्हें उन के हानि-लाभ पर भाषण देने लगता और तुम्हारे परोसे हुए खाने पर नुक्ताचीनी करके तुम्हें रुआँसा कर देता। तुम चिल्लाती नहीं थीं। तुम प्रतिकार नहीं करती थीं। तुम किसी बात का विरोध नहीं करती थीं पर तुम्हारा यह नकार, यह उपेक्षा मुझे और भी भड़का देते और मैं अपना गुस्सा- दरवाज़ों को झटाक से खोलने- बंद करने, गुसलखाने में ज़ोर से पानी खुला छोड़ने और बच्चों पर झल्लाने में निकालता था।

एक दिन मेरे एक साथी ने सुझाया- यार! तुम्हें अपने भाई को यहाँ बुला लेना चाहिए- भाभी देख लेगी सारा काम और तुम्हें बाहर जाने के लिए साथी मिल जायेगा। वह दोस्त भी मेरे तरह का ही दम्भी और पुरुष वर्चस्व का हामी भरने वाला था। मैंने न आव देखा न ताव और भाई के कागज़ पत्र तैयार करने में लग गया। मैंने तुमसे भी इस बारे में कोई बात नही की। जब पता चला था तो तुम बहुत तिलमिलाई थी। इसलिए नहीं कि मैं क्यों बुला रहा हूँ बल्कि इसलिए कि मैंने तुम्हें घर का सदस्य तक नहीं समझा। भाई छह आठ महीने में यहाँ आ गया। उस के पास कोई कामगार डिग्री नहीं थी, इसलिए मैंने उसे मेक्डॉनल्ड में लगवा दिया। हर समय खाने को मीट, पहनने को वहाँ की यूनिफॉर्म- साफ़- सुथरा वातावरण- आस पास चहकती गोरी बलाएँ। भाई को तो स्वर्ग मिल गया। शाम को घर आकर हम खूब चहकते, हँसी - मज़ाक करते। लड़कियों के लिए श्लील-अश्लील जुमले गढ़ते और उन्हें बोल-बोल कर अपनी हवस पूरी करते। क्या मिलता था हमें मालूम नहीं पर एक तरह का- तुम्हें जलाने के लिये यह एक विशेष ढब अवश्य बन गया था। यूँ कह सकता हूँ कि हमने अपने पाँचों इंद्रियों को बेलगाम छोड़ रखा था और वह जिस दिशा में दौड़ना चाहतीं - दौड़तीं- कूदती- फाँदती और हमें एक अलग ही तरह का सकून दे जाती।

तुम्हारे चेहरे पर गुस्से की तरेर देख कर मन कहीं बहुत गहरे आह्लाद से भर जाता। यों मैं एक बहुत ही चुप्पा किस्म का आदमी समझा जाता था पर कोई नहीं जानता था कि मेरे अंदर एक नरकासुर विराजमान है, जिस की आसुरी भूख औरत को सता कर मिटती है। मेरा मन न जाने किस मनोविकार से ग्रस्त था कि अपना सुख पाने के लिये - औरत को कीड़े -मकोड़े की तरह मसल सकता था।

जब हमारी छोटी बेटी पैदा हुई थी तो तुम्हारा बड़ा आपरेशन हुआ यानी सिज़ेरियन। तुम नितांत निष्क्रिय और निहत्थी सी हो गई थीं। यह एक तरह का तुम्हारा दूसरा जन्म हुआ था। कुछ देर के लिए- मैं निहायत ही कोमल -हृदय, दयानतदार- सहानभूति पूर्ण डॉक्टर बन गया। पर उसी क्षण यह सोच कर कि तुम ने

फिर से लड़की पैदा कर दी मेरी सारी सहानभूति जाती रही। और मेरे अंदर का पुरुष फुत्कार उठा। यद्यपि साइंस तय कर चुकी है कि लड़का पैदा करने का दायित्व केवल पुरुष के क्रोमोज़ोन तय करते हैं पर सारी दुनिया आज तक इस बात का ठीकरा- औरत के माथे पर फोड़ती आई है तो अब क्यों नहीं। मैं डॉक्टर होते हुए, सब जानते हुए भी इस ठीकरे को ज़ोर-ज़ोर से तुम्हारे माथे पर फोड़ता रहा और तीसरे ही दिन तुम्हें बच्ची के साथ अकेला छोड़ कर बाहर पाँच दिनों के लिए किसी मेडिकल केम्प में चला गया। तब तक तो अभी भाई भी नहीं आया था। वह चोट तुम्हें उम्र भर सालती रही। तुम अब तक मेरी सारी अवज्ञाओं, सारी उपेक्षाओं को समाज में चले आए रीति - रिवाजों, घर में देखे हुए बुजुर्गों के सर मढ़ती रहीं और तुम ने अपनी इस गुलाम- धारणा से समझौता कर लिया था कि औरत को ऐसे ही जीना पड़ेगा और उसे भी जीना है। कहीं अपने अंदर तुम्हारा डॉक्टर होने का ख़िताब अवश्य तुम्हें जीने के लिए थपथपाता रहा होगा- पर यह चोट और उपेक्षा तुम्हें असहनीय थी।

आज जब मैं अपनी हथेली में तुम्हारे हाथ को लेकर सहला रहा हूँ तो मुझे लगता है- तुम किसी भी क्षण इस हाथ को झटक कर- छुड़ा लोगी। लेकिन नहीं आज भी तुम चुपचाप अपने हाथों को मेरे हाथों में दिए आँखें बंद किए पड़ी हो। कभी-कभी देख रहा हूँ- तुम्हारी बंद आँखों में नमी उतर आती है -तो क्षणांश के लिए मैं भी भीग जाता हूँ। याद करता हूँ कितनी शिद्दत से तुम्हें चाहा था और पाने की भी हर युक्ति ढूँढ़ी थी पर आज क्या कर रहा हूँ। फिर एकाएक न जाने क्या हो जाता है कि मैं अपने- आप को कोसने लगता हूँ और कहता हूँ क्यों भीग रहा हूँ! और मुझे क्यों कर भीगना चाहिए तुम्हारे लिए। अब जो मैं तुम्हारी हथेली हाथ में लिए बैठा हूँ तो वह भी कहीं घर, बच्चों और दुनिया के सामने एक दिखावा ही है। इसीलिए शायद तुम्हारे शरीर के विज्ञान से (जितना मैं पढ़ सकता हूँ) कोई आभार का चिन्ह दिखाई नहीं देता और इससे मेरी झुँझलाहट और बढ़ जाती है। तब मेरी तुम्हारे प्रति उठी करुणा, अपना उम्र भर का पश्चाताप (जो कभी-कभी मैं करना चाहता हूँ) न जाने कहाँ तिरोहित हो जाता है। मैं फिर अपने खोल से निकल आता हूँ- वैसा का वैसा- जानवर- नृशंस- नरकासुर। कहते हैं मेरी राक्षस योनि है- बहुत पहले किसी ने बताया था। आज लगता है किसी ने सच ही कहा था।

मैंने एक हिकारत सदैव तुम्हारी आँखों में देखी है, बच्चों की आँखों में भी उस की तरेर है और इसीलिए मेरे अंदर के साँप की थूथनी फूल- फूल जाती है और फुत्कारती है। जब से तुम इस तरह निष्क्रिय पड़ी हो- मुझे लगता है यह तुम्हारी सायास योजना है- तुम मुझ से बदला ले रही हो। तुम्हारे अंदर का प्रहरी- मेरी सारी हरकतों, इन क्रियाकलापों और दिनचर्या को स्वयं उठ- उठ कर घटते हुए देख रहा है और अट्टहास कर रहा है। मेरे अंदर के भेड़िये को उकसा रहा है। चलो ! मैं मान लेता हूँ कि उसी नृशंसता के वशीभूत हो कर मैंने कई बार तुम्हारा गला घोटना चाहा है। चाहा ही नहीं एक दो बार प्रयत्न भी किया - पर तुम न जाने कैसे मेरा हाथ रखते ही चीख सी पड़ती। तुम्हारे गले से अजीब-अजीब घर्र- घर्र की ऊँची-ऊँची आवाज़ें निकलने लगतीं और तभी दूसरे कमरे से दोनों बेटियाँ भागी- भागी आतीं - क्या हुआ पापा! क्या हुआ!

कुछ नहीं , कुछ भी तो नहीं।

पर यह तो मम्मी की अजीबो गरीब आवाज़ थी पापा ! यह आवाज़ तो तब आती है जब मम्मी को कहीं बहुत दर्द होता है। मैं हक्का-बक्का हो कर उन्हें देखता- और कहता देखो कुछ भी नही है। अब बिल्कुल शांत है। जाओ तुम लोग सो जाओ। कोई बात होगी तो मैं बुला लूँगा।

वे चुपचाप पीछे मुड़ कर देखती हुई अंदर चली जातीं और मैं अपनी हथेलियों में अपनी कुंठा को पीसता रह जाता। अपने पर कभी-कभी बहुत ग्लानि भी होती- कि क्या मैं इंसान हूँ ! क्या मैं मानव जाति के अंतर्गत आता भी हूँ कि नहीं और इसी उधेड़बुन में कई बार मुझे रातभर नींद भी नहीं आती और मैं अपनी किसी अव्यक्त पीड़ा में जलता रहता। मुझे विश्वास होता चला गया कि वास्तव में- मैं राक्षस -योनि का ही हूँ। क्योंकि कहते हैं राक्षस योनि के व्यक्ति दिखने में शांत-स्वभाव- कुशल- मधुर व्यवहार के धनी होते हैं और वह राक्षस की तरह अपना वार सोच -समझ कर -पूरी तरह साध कर चलते हैं। मैं वही तो कर रहा हूँ। वरना डॉक्टरों ने ब्रेन ट्यूमर के रिपोर्ट और आपरेशन के बाद बतलाया था कि ट्यूमर अपनी चौथी स्टेज में है और इन का समय अधिक से अधिक तीन चार माह का बाकी है। क्या मैं इतनी भी प्रतीक्षा शान्ति से नहीं कर सकता!

मेरा भाई, मेरे भतीजे, मेरा मौसा और उन का बेटा जिन्हें मैंने बाद में बारी-बारी यहाँ बुला लिया था कहीं दबे-घुटे मेरे तुम्हारे प्रति तेवरों की निंदा करते और साथ ही अपने हिंदुस्तानी ढंग से -अपनी मेहमान -नवाज़ी की भी अपेक्षा रखते। तब इस सब के बीच तुम टूट रही थीं। बिखर रहीं थी। आए दिन तुम्हारा स्वास्थ्य गिरने लगा था। तुम सहेलियों से ज़्यादा घुलने- मिलने लगी थीं और तुम्हारे व्यवहार में एक अवज्ञा- पनपने लगी थी और तुम्हारी वही सदियों पुरानी स्वच्छंद उड़ने वाली तितली उड़ान- कहीं तीव्र होती दिखाई देने लगी थी। मैं और भी सतर्क और भी कठोर होता चला गया।

एक दिन याद है मुझे - बड़ी कड़ाके की सर्दी थी। बाहर माइनस बारह डिग्री तापमान था। तुम्हारी कार स्टार्ट नही हुई। सुबह- सुबह तुम्हें जल्दी थी। तुम हड़बड़ाई हुई अंदर आईं और तुम ने दूसरी कार की चाबी उठाई और मुझे सुना कर बोलीं- मैं तुम्हारी बी. एम. डब्ल्यू. ले जा रही हूँ- मेरी कार स्टार्ट नहीं हो रही...।

तुम जानती थीं- मैं पैसों की चाहे जैसे बरबादी करता- अलग-अलग ब्रैंड-नेम की कारें खरीदना (सेल पर) कपड़े, सूट,स्वेटर इकट्ठे करने की भी मुझे जैसे बीमारी रही है पर मैंने तुम्हें अपनी आमदनी में से कभी- कुछ नहीं दिया। जो दिया बेटियों को दिया।

कार गैराज में पड़ी थी। वह कार मैं ऑफ़िस नहीं ले जाता था। वह विशिष्ट पार्टियों के लिए रखी थी- मैं झटके से उठा और तुम्हारे हाथों से चाबी छीनने को

झपटा- तुम भौंचक्क- हतप्रभ और हैरान खड़ी जैसे वहीं पत्थर हो गई थीं। चाबी को घुमा कर तुम ने मेरी तरफ इतनी ज़ोर से फैंका कि मेरे होठों से खून बहने लगा और तुम उसी झटके से बाहर लौट गईं।

तुमने टैक्सी बुलाई और चली गईं। आज भी सोचता हूँ तो कहीं अपने पुरुषत्व पर गर्व होता है। पर साथ ही एक ग्लानि कि मैंने अपनी नृशंसता की सीमा इतनी बढ़ा ली थी कि तुम्हें भी इस हिंसा तक उतार लाया। तुम मेरे समक्ष खड़े होने की कोशिश कर रही थी। ईंट का जबाब पत्थर से- वाली मुद्रा में। पर मैं वैसा नहीं चाहता था। मैं चाहता था तुम वैसी ही भीगी बिल्ली बनी रहो और मेरे अत्याचार सहती रहो- पलट के कभी कुछ न कहो- कुछ न बोलो।

कहते हैं परंपरा का पालन करना ही धर्म होता है, तो मैंने तो आज तक केवल परंपरा का पालन ही किया है। इसी फलस्वरूप हमारे बीच बात न कर पाने का कुहासा फैलता गया था। एक चुप्पी, एक किनारा सा बना रहता था जैसे पानी के आसपास उसे रोकने के लिए झाड़ियों की फैन्स बन गई हो और बाकी केवल सन्नाटा- पसर गया था। हर हृदय में कोई एक कोना उदास एवं सूना होता रहता है, किसी के न आने से या आने पर न पहचाने जाने पर। इस होने या न होने के बीच का खलाव ही दिलों को सालता रहता है और हम उस खाली जगह पर हाथ रख कर बिसूरते रहते हैं। जब कभी कोई नया आँधी का झोंका आता है तभी उसी क्षण हमारा हाथ सीधा दिल पर जाता है उस खाली जगह को सहलाने के लिए। कोई मानें या न मानें - कहीं वह खाली कोना मेरे अंदर भी था।

तुम्हें ब्रेन ट्यूमर हुआ है, मेरे लिए एक बड़ा झटका था। शायद मुझे होश में लाने के लिए ऊपर वाले की कोई तीरन्दाज़ी -मैं एक बारगी जड़ हो गया। पर उस दिन जब तुम अर्ध - चेतनावस्था में भी मुझे नकार कर अपने भाई के साथ अस्पताल गई, मैं आहत हुआ। सोचा तुम्हारे सोए हुए मस्तिष्क के स्नायुओं में भी मेरी क्रूरता गहरी पैंठ गई है। जब मैं उस धक्के से सँभला तो फिर सँभल कर अपने चौखटे में वापिस आ गया। तुम मुझे नकार कर भी छिटक नहीं सकोगी। तुम निहत्थी हो कर मेरी हर बात मानोगी।

अंदर से मैं आहत था और चाहता था अपनी अब तक की करनियों का प्रायश्चित करना - पर कितने दिन यह विचार रहा। आख़िर कलई तो उतर ही जाती है। मैं अपने खोल में जल्दी ही वापिस आ गया। लोकाचार के गणित से मैं एक अच्छा पति बना रहा। किन्तु अंदर ही अंदर मैं तुम्हारे विरुद्ध षड्यंत्र रचता रहा। जब मैं तुम्हारे पास होता तो डॉक्टर की हिदायतों में मनमाने हेर-फेर कर लेता। जैसे थैरैपी महीने में चार बार होनी चाहिए तो वह दो बार ही होती। जो दवाई दिन में तीन बार देने वाली होती- वह एक बार या दो बार ही दी जाती- किसी तरह बेटियों की नज़र से बचता-बचाता पार कर जाता रहा सब कुछ।

आज तुम्हारा हाथ पकड़ कर अपने गुनाहों की माफ़ी माँग रहा हूँ या सारी पुरुष जाति के अहम पर चोट कर रहा हूँ। पर यह सब मैंने तो नहीं चलाया - सदियों से यही चला आया है और पारम्परिक -पाटी पर चलना बुरा नहीं है। आज समय करवट ले रहा है और तुम ने भी कई बार आज करवट लेने का उपक्रम किया पर तब मैंने अपनी लोमड़ी चालाकी से- तुम्हें दुलराया, आश्वासन दिया, तुम्हें बाँहों में भरा और तुम्हें भी लगा होगा- जैसे युगों से पागल औरत को लगता रहा है- कि सब ठीक है- पति लौट आया है। गाँवों में आज भी औरत पर हाथ इसी परिपाटी के अंतर्गत उठते हैं, बैठते हैं, फिर उठते हैं। मैं जानता हूँ और सारी खुदाई जान गई है कि नारी पुरुष से किसी पैमाने से कमतर नहीं है फिर भी वह उपेक्षित और प्रताड़ित ही रही क्योंकि उस ने स्वयं होने दिया और सदैव पुरुष की स्वाधीनता ही स्वीकार की। दैव प्रदत्त नारी और पुरुष की भिन्न शारीरिक सीमाएँ इस का कारण रहीं पर दोनों ने ही इसे नहीं पहचाना और एक दूसरे का गलत उपयोग करते रहे।

तुम्हारी खाली हथेली में नमी उतर आई है और मैं हतप्रभ हूँ कि तुम अभी जीवित हो!

****

ग़ज़ल

प्रखर मालवीय 'कान्हा'

1

बहुत उकता गया जब शायरी से
लिपट कर रो पड़ा मैं ज़िन्दगी से
अभी कुछ दूर है शमशान लेकिन
बदन से राख झड़ती है अभी से
इसे भी ज़ब्त कहना ठीक होगा
बहुत चीख़ा हूँ मैं पर ख़ामुशी से
बस इसके बाद ही मीठी नदी है
कहा आवारगी ने तिश्नगी से
लगा है सोचने थोड़ा तो मुंसिफ
मेरे हक़ में तुम्हारी पैरवी से
मयस्सर हो गयीं शक़्लें हज़ारों
हुआ ये फ़ायदा बेचेहरगी से
सुनो वो दौर भी आएगा 'कान्हा'
तकेगा हुस्न जब बेचारगी से

***

2

एक डर सा लगा हुआ है मुझे
वो बिना शर्त चाहता है मुझे
खुल के रोने के दिन तमाम हुए
अब मिरा ज़ब्त देखना है मुझे
मर रहा हूँ इसी सुकून के साथ
साँस लेने का तजरुबा है मुझे
एक जाँ एक तन हैं हिज्र और मैं
तेरा आना भी अब सज़ा है मुझे
अब मैं ख़ामोश होने वाला हूँ
क्या कोई शख़्स सुन रहा है मुझे?
चुप रहा मैं इसी लिये 'कान्हा'
मुझसे बेहतर वो जानता है मुझे

***

3

आग है ख़ूब थोड़ा पानी है
ये यहाँ रोज़ की कहानी है
ख़ुद से करना है क़त्ल ख़ुद को ही
और ख़ुद लाश भी उठानी है
पी गए रेत तिश्नगी में लोग
शोर उट्ठा था याँ पे पानी है
ये ही कहने में कट गए दो दिन
चार ही दिन की ज़िंदगानी है
सारे किरदार मर गए लेकिन
रौ में अब भी मिरी कहानी है

***

एस- 187 ए, पांडव नगर, नई दिल्ली- 110092, मोबाइल - 9911568839

स्कूल प्रवेश

अखिलेश मिश्रा

वह हर काम योजना बनाकर करते रहे हैं। उनकी सफलता का राज़ भी यही है। जब पढ़ते थे, तब उनकी एक समयबद्ध दिनचर्या होती थी। शायद ही कभी ऐसा मौका आया हो जब उन्हें अपनी निर्धारित दिनचर्या में परिवर्तन करना पड़ा हो। उनका काम ही उनके लिए धर्म है। परिवार गाँव-समाज में इज़्ज़त भी उन्हें अपने इसी गुण के कारण मिली है। वह आज एक इज़्ज़तदार व्यक्ति हैं। वह अपनी इज़्ज़त को इसी तरह पीढ़ी दर पीढ़ी बनाकर रखना चाहते हैं।

अब वह शादीशुदा हैं। उनकी पत्नी भी उनकी ही तरह किसी बड़ी कंपनी में नौकरी करती है। दोनों मिलकर खूब सारा पैसा कमाते हैं। वह अपने माता-पिता को साथ ही रखे हुए हैं। बहुत संघर्ष किया है उन दोनों ने रमेश को पढ़ाने के लिए। वह खुद ज़्यादा पढ़े-लिखे नहीं थे पर रमेश को पढ़ाने में उन्होंने कोई कसर नहीं छोड़ी। पुत्र और बहू की सेवा से वह बुढ़ापे में भी पूरी तरह तंदुरस्त हैं। उनकी इच्छा अब पोते को खिलाने की होती है। अपने अगल-बगल जब वह किसी छोटे बच्चे को देखते हैं, बेचैन हो उठते हैं। काफी अरसा हो गया घर में किलकारी सुने हुए। समय भी तो पास नहीं होता है।

कुछ महीनों के बाद रमेश पिता बनने वाले हैं। रमेश खुश हैं पर अपने होने वाले बच्चे के भविष्य का ध्यान करके वह चिंतित रहने लगे हैं। वह बच्चे का भविष्य सुरक्षित करना चाहते हैं। उन्हें आज की स्कूलों में प्रवेश के लिए होने वाली गलाकाट प्रतियोगिता के बारे में सब पता है। वह जल्द से जल्द किसी अच्छी स्कूल में अपने होने वाले बच्चे का प्रवेश करा देना चाहते हैं। आलस्य और लापरवाही करने से देरी हो सकती है।

शहर के सबसे बड़े ज्योतिषाचार्य पंडित रामचरण अनुरागी के चरणों में एक हज़ार एक रुपए चढ़ाकर उन्होंने मुहूर्त पक्का किया। शहर के लोगों का कहना है कि पंडित अनुरागी जी से जिन लोगों ने स्कूल प्रवेश का मुहूर्त निकलवाया है, उनके बच्चे कुछ बड़ा ही बनते हैं जैसे बड़ा अफसर, बड़ा नेता, बड़ा गुंडा इत्यादि।

रमेश अपनी पत्नी के साथ स्कूल गए। सुनहरा प्रांगण और भव्य बिल्डिंग को देखकर उन्हें अपने गाँव का स्कूल याद आ गया। उनके स्कूल की बिल्डिंग चूने के गारे और पत्थर से बनी हुई थी। बिल्डिंग के हर अंश से आत्मीयता और स्नेह छलकती थी। उसी आत्मीयता को रमेश इस स्कूल में अपने होने वाले बच्चे के लिए ढूँढ़ने लगे। कुछ देर टहलने के बाद रमेश पत्नी के साथ प्रिंसिपल मैडम के चैम्बर में गए और उन्हें नमस्कार किया।

''हाँ !.....कैसे आना हुआ ?'' प्रिंसिपल मैडम ने सिर को बिना ऊपर उठाए चश्मे के ऊपर से पूछा।

''बच्चे के स्कूल में प्रवेश के लिए।''

''वेरी गुड !.....बच्चा कहाँ है?''

''पेट के अंदर धमाल मचा रहा है।''

''कब तक में पैदा होगा ?''

''तीन महीने के बाद।''

''वेरी गुड ! आज आप जैसे बहुत से जागरूक लोग हैं जो स्कूल में प्रवेश के लिए होने वाले कठोर संघर्ष को ध्यान में रखते हुए बच्चों के भविष्य के साथ किसी भी प्रकार का खिलवाड़ नहीं करना चाहते हैं।'' रमेश अपनी प्रशंसा सुनकर ओठों की लम्बाई को बढ़ा

रीवा, मध्यप्रदेश के अखिलेश मिश्रा की कहानियाँ प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित होती हैं।
एम टेक के बाद संप्रति-सरकारी सेवा में कार्यरत।
संपर्क : अखिलेश मिश्रा, द्वारा श्री रामशिरोमणि मिश्रा, ग्राम -रमकुई, पोस्ट-भोलगढ़ जे पी नगर, जिला-रीवा, मध्यप्रदेश
मोबाइल : 9752475891

दिया। वह मुस्कुराते प्रतीत हुए।

''आप लोग क्या करते हैं ?''

''हम दोनों इंजीनियर हैं।''

''तनख़्वाह कितनी है?''

''दोनों की मिलाकर लगभग दो लाख रुपए !''

''वेरी गुड !''

''आप लोगों की दिनचर्या कैसी है ?''

''सुबह नौ बजे निकलते हैं और शाम को सात साढ़े सात तक वापस आ जाते हैं।''

''घर का खाना कौन बनाता है ?''

''मेरी पत्नी ।'' रमेश ने रमा की तरफ इशारा करते हुए कहा।

''नौकर नहीं रखा है ?''

''नहीं । कभी ज़रूरत ही महसूस नहीं हुई।''

''वेरी बैड ।''

''क्यों मैडम ?''

''बच्चों को होमवर्क कौन कराएगा ?''

''नर्सरी कक्षा में कैसा होमवर्क ? फिर स्कूल में भी तो पढ़ाई होती ही होगी ?''

''काफी होमवर्क रहता है। स्कूल में हम लोग एक्स्ट्रा चीज़ें ज़्यादा कराते हैं। पढ़ाई-लिखाई का काम घर में ही करवाना पड़ता है। वैसे हम लोग पढ़ाते भी हैं। यह मत सोच लीजिएगा कि हम लोग पढ़ाते ही नहीं हैं।''

''होमवर्क मैं करा दिया करूँगा।''

''आप नहीं करा पाएँगे। मम्मी लोग ही होमवर्क करा पाती हैं। आप लोगों में धैर्य की कमी होती है। आप लोग पढ़ाना छोड़कर टीवी वगैरह देखने लगेंगे।''

''फिर क्या करें मैडम ?''

''आप लोग एक नौकरानी रख लीजिए।''

''ठीक है मैडम । हम लोग एक खाना बननेवाली रख लेंगे।''

''आपके साथ घर में और कौन-कौन रहता है ?''

''मेरे माता-पिता !'' रमेश ने कहा ।

''वह कितना पढ़े-लिखे हैं ?''

''पिता जी बारहवीं पास हैं और माता जी पाँचवीं पास हैं।''

''तब अंग्रेज़ी तो उन्हें आती नहीं होगी?''

''नहीं मैडम ।''

''ओ माइ गॉड ! फिर आपके बच्चे को प्रवेश कैसे मिल पाएगा ?''

''क्यों ? क्या समस्या आ गई मैडम ?''

''दरअसल घर में अंग्रेज़ी ही बोली जानी चाहिए।''

''मैडम, माँ-बाप को कहाँ भेजें ? हिन्दी तो अपनी भाषा है। उसको बोलने में तो गर्व महसूस होना चाहिए।''

''यह सब दकियानूसी वाले विचार हैं। ऐसे डाइलॉग बोलने सुनने में तो अच्छे लगते हैं पर प्रक्टिकल बिलकुल नहीं होते हैं। नेता लोग भी अंग्रेज़ी का विरोध करते हैं पर सब अपने बच्चों को पढ़ने के लिए विदेश भेजते हैं।''

''मतलब अपनी भाषा बच्चा कभी सीखे ही नहीं ?''

''देखिए, मैं अपनी स्कूल के नियम बता रही हूँ। बाकी आपकी इच्छा। आप बच्चे का भविष्य बनाना चाहते हैं कि नहीं ?''

''बच्चे का भविष्य बनाना चाहते हैं इसीलिए तो इतनी प्रतिष्ठित संस्था में प्रवेश की इच्छा लेकर आए हैं।''

''तो फिर हमारी बात माननी चाहिए कि नहीं... टेल मी इफ आइ अम रॉंग ?''

''ठीक है मैडम। हम लोग माता-पिता को चुप रहने के लिए कह देंगे।''

''नहीं उससे नहीं चलेगा। आप उनको कहीं और भेज दीजिए।''

''कहाँ भेज दें ?''

''वृद्धाश्रम, या फिर जहाँ आपकी इच्छा हो।''

''ठीक है मैडम, इस विषय पर मैं बाद में सोच लूँगा।''

''बाद में नहीं.....आपको अभी सब कुछ लिख कर देना होगा। हम लोग अपनी स्कूल की रेपुटेशन से खिलवाड़ नहीं कर सकते हैं।''

''ठीक है मैडम, हम लोग उन्हें कहीं और भेज देंगे।''

''आपके घर में कोई पेट (पालतू जानवर) है कि नहीं ?''

''नहीं है मैडम ।''

''आप एक पप्पी पाल लीजिए।''

''क्यों मैडम .....इसका पढ़ाई से क्या लेना देना ?''

''लेना-देना है। पप्पी को देखकर बच्चे के अंदर भावनाओं का विकास होगा। वह जीवों के प्रति दया प्रेम की भावना सीखेगा।''

''पर उसकी देखभाल कौन करेगा ?''

''एक पूर्णकालिक नौकर रख लीजिए, लेकिन उसे अंग्रेज़ी आनी चाहिए।''

''ऐसा होनहार नौकर कहाँ मिलेगा ?''

''मिल जाएगा। आजकल बहुत बेरोज़गारी है। कुछ लोग सिर्फ अंग्रेज़ी ही जानते हैं, और कुछ नहीं जानते। आप उनको पाँच सात हजार दे दीजिएगा, वह पप्पी का सब काम कर देंगे।''

''ठीक है मैडम। हम लोग पप्पी और पप्पी पालक दोनों रख लेंगे।''

''आपके घर के पास खेल का मैदान है?''

''नहीं !''

''फिर तो बच्चे को दो घंटे स्कूल में ज़्यादा रखना पड़ेगा। वह हमारे मैदान में खेल लिया करेगा। आपको इसके लिए फीस थोड़ी ज़्यादा देनी पड़ेगी।''

''छोटा बच्चा क्या खेलेगा मैदान में ?''

''हम लोग उसे बचपन से ही घुड़सवारी और तलवारबाजी सिखाएँगे।''

''जैसी आपकी आज्ञा मैडम ।''

''घर के अगल-बगल बच्चे हैं ?''

''हमारी कालोनी में कई बच्चे हैं।'' खुश होते हुए रमेश ने कहा।

''वह किस स्कूल में पढ़ते हैं ?''

''अलग-अलग स्कूलों में पढ़ते हैं।''

''हिन्दी मीडियम में पढ़ने वाले बच्चों से अपने बच्चे को अलग रखिएगा।''

''बच्चों को एक-दूसरे से दूर कैसे रखा जा सकता है ?''

''यह आपको सोचना है। बच्चे का भविष्य बनाना चाहते हैं कि नहीं ?

रमेश चुप हो गए।

''घर के अगल-बगल कोई संगीत टीचर है कि नहीं ?''

''नहीं है ।''

''आपको एक संगीत टीचर ढूँढ़ना पड़ेगा। आप चाहें तो हमारी स्कूल की

संगीत टीचर को तीन हज़ार रुपए महीने में आधे घंटे के लिए घर में बुला सकते हैं। संगीत सीखना बच्चों के लिए अनिवार्य है। आज के जमाने में नाचने गाने वालों का एक अलग महत्त्व है।''

''जैसी आज्ञा मैडम !''

''आप लोग खाना क्या खाते हैं ?''

''साधारण देशी खाना ।''

''आपको अपनी ईटिंग्स हैबिट्स बदलनी पड़ेगी।''

''क्या-क्या खाना पड़ेगा मैडम ?''

''पीज़ा बर्गर चौउमीन और कुछ विदेशी नोनवेज वगैरह खाना चालू कर दीजिए। मान लीजिए बड़ा होकर आपका बच्चा चाइना जाएगा तो उसे वहाँ दही भात थोड़ी मिलेगा।''

''हम लोग वैजिटेरियन हैं। नोनवेज कैसे खाएँगे ?''

''आदत डालिए। जो नोनवेज खाते हैं, वह भी तो आख़िर इंसान ही हैं। चाइना में तो लोग ज़िंदा साँप खा जाते हैं। वह कछुए का खून ऐसे पीते हैं जैसे हम लोग दूध पीते हैं।''

''कोशिश करेंगे मैडम ।''

''आप लोगों को छुट्टी कितनी मिलती है ?''

''साल में पंद्रह बीस दिन के आसपास।''

''ओह नो!''

''क्या हुआ मैडम ? इतनी ही छुट्टी मेरे साथ में काम करने वाले हर कर्मचारी और अधिकारी को मिलती है।''

''दरअसल हम लोग दस पंद्रह दिन के लिए हर बच्चे को फ़ॉरेन ट्रिप में ले जाते हैं। चूँकि बच्चा छोटा है अत: शुरुआत में पैरेंट्स को भी जाना पड़ता है।''

''के जी और प्राइमरी में कैसा फ़ॉरेन ट्रिप ?''

''बच्चों को मैनर आने चाहिए कि नहीं? संस्कार बचपन से ही डालने पड़ते हैं। दूसरे देश जाएगा तो वहाँ के लोगों को देखकर उसके मन में भिन्न-भिन्न संस्कृतियों के प्रति सम्मान और प्रेम की भावना जाग्रत होगी। वह विशाल हृदय और ऊँची सोच वाला व्यक्ति बनेगा।''

''ठीक है मैडम, हम लोग ज़्यादा छुट्टी लेंगे। ज़रूरत पड़ी तो कहीं और नौकरी ढूँढ़ लेंगे।''

''आपके कुछ कनैक्शन वगैरह हैं कि नहीं ?''

''इसका पढ़ाई से क्या लेना-देना ?''

''लेना-देना है। आजकल बिना जुगाड़ का कुछ भी नहीं होता है। मान लीजिए स्कूल प्रशासन को किसी समस्या ने घेर लिया,ऐसी दशा में हमें कौन बचाएगा ? बताइए ?''

''मेरे पिताजी का एक सांसद से घनिष्ठ संबंध हैं।''

''ज़रूरत में कुछ काम निकलवाया जा सकता है.....आइ मीन कुछ कहा जा सकता है ?''

''जी मैडम !''

''वेरी गुड !''

''मैडम स्कूल की फीस कितनी होगी ?''

''मात्र डेढ़ लाख सालाना और कुछ ओवर्हेड्स। हमारा स्कूल प्रबंधन अन्य स्कूलों की तरह लूटने में विश्वास नहीं करता है अत: हमारे ओवरहेड्स बहुत कम हैं।''

''ओवरहेड्स कितना होगा ?''

''करीब पचास हज़ार सालाना मानकर चलिए।''

''प्रवेश पक्का हो जाएगा न मैडम !''

''पक्का ही समझिए। यदि भीड़ ज़्यादा होगी तभी दिक्कत आ सकती है। उस समय हमारी फीस कुछ बढ़ जाती है। आप भाग्यशाली हैं कि आपके बच्चे को इतने अच्छे स्कूल में प्रवेश मिल जाएगा। आजकल ब्रांड का जमाना है। मान लीजिए आपकी लड़की हुई। जब उसकी शादी का समय आएगा और आप लोगों से कहेंगे कि आपकी लड़की हमारे स्कूल से पास हुई है तब आपकी लड़की से शादी के लिए लड़कों की लाइन लग जाएगी। ऐसे ही कई अन्य फायदें हैं भाई ।''

''धन्यवाद मैडम ! सब आपकी कृपा से ही संभव हो पाएगा।''

''आप जागरूक हैं इसीलिए आपके बच्चे को इतनी प्रतिष्ठित संस्था में प्रवेश मिल सकता है। यदि आप बच्चे को साथ लेकर प्रवेश के लिए आते तो प्रवेश मिलना असंभव होता।''

कृतज्ञता भरी मुस्कान रमेश के ओंठों पर खेलने लगी।

''आपको एडवांस में डेढ़ लाख जमा करने होंगे। यदि बच्चे का प्रवेश हो गया तो यह उसकी पढ़ाई के बाद वापस कर दिए जाएँगे और यदि आपने प्रवेश नहीं लिया तो यह वापस नहीं होगा।'' प्रिंसिपल मैडम ने आगे कहा।

''मैडम , मान लीजिए मेरा तबादला कहीं और हो गया तब तो पैसा वापस हो जाएगा।''

''नहीं होगा। स्कूल प्रबंधन किसी भी चीज़ के लिए ज़िम्मेदार नहीं है। हमारे खर्चे बहुत हैं भाई ।''

''बच्चे को स्कूल में कब दाखिल करना होगा ?''

''दो साल की उम्र के बाद कभी भी दाखिल कर सकते हैं।''

''स्कूल से आने -जाने के लिए क्या व्यवस्था है ?''

''स्कूल बस है। उसकी फीस अलग से लगती है।''

''कक्षा बारह तक लगातार इसी स्कूल में पढ़ सकता है कि नहीं ?''

''क्यों नहीं !.....हम लोग कक्षा पाँच और आठ के बाद एक टेस्ट लेते हैं। यदि बच्चा पास हो गया तो प्रवेश चालू रहता है। कक्षा छह और नवीं की फीस कुछ ज़्यादा है।''

''और यदि टेस्ट में फ़ेल हो गया?''

''सामान्यत: सब पास हो जाते हैं। यदि आप बच्चे को घर में थोड़ा बहुत भी पढ़ाते हैं तो वह आराम से यह टेस्ट पास कर लेता है। घर की पढ़ाई बहुत ज़रूरी है।''

रमेश धन्यवाद कहकर वापस आ गए। रास्ते में वह अपने माँ-बाप के बारे में सोच रहे हैं। एक तरफ उनके बच्चे का भविष्य है तो दूसरी तरफ उनका भविष्य बनाने वाले माता-पिता हैं। आज की गलाकाट प्रतियोगिता को देखकर भविष्य की प्रतियोगिता का अनुमान कोई भी लगा सकता है। रमेश काँप जाते हैं। आज के

समाज में सिर्फ उसी की इज़्ज़त है जिसके पास पैसा और हुनर है। बच्चे का भविष्य सबसे ज़्यादा ज़रूरी मुद्दा है। वह इसके लिए अपनी नौकरी को भी दाँव पर लगा सकते हैं। घर पहुँचते-पहुँचते उन्होने निर्णय कर लिया है कि माँ-बाप को वह गाँव में रख देंगे। वैसे अभी करीब दो साल का वक्त उनके पास है। दो साल तक माँ-बाप साथ में रह ही सकते हैं। कुछ महीने के बाद रमेश के बेटा पैदा हुआ है। उसके बूढ़े माँ-बाप के जीवन में खुशी का गुब्बारा फूट गया है। उनको जीने का नया लक्ष्य मिल गया है। जैसे-जैसे बेटा बड़ा होने लगा, रमेश को स्कूल प्रिंसिपल की बात याद आने लगी है। वह कुछ परेशान रहने लगा है। वह कुछ कह नहीं पा रहा है पर बूढ़ी आँखों से उसकी परेशानी कैसे छुप सकती है।

एक दिन रमेश सुबह सोकर उठा तो उसने देखा कि उसके माँ-बाप तैयार बैठे हैं बस स्टैंड जाने के लिए। वह घर जा रहे हैं.....घर जहाँ उनका बचपन बीता था.....उनके बेटे रमेश का बचपन बीता था। घर जिसकी दीवालों में उनके बाप के द्वारा ढोई हुई ईंटें लगी हैं।

रमेश ने पचास हज़ार में एक विदेशी पप्पी खरीद लिया है। वह रमेश के कमरे में एसी में सोता है। उसके द्वारा निकाले गए अपशिष्ट पदार्थ को रमेश की पत्नी फेंकती है क्योंकि नौकर और नौकरानी सुबह नौ बजे आते हैं और उन्होंने इस काम के लिए मना कर दिया है। यह पप्पी अंग्रेज़ी में भोंकता है। घर में जब कोई हिन्दी के शब्द बोलता है तब यह व्यंग्यात्मक लहजे से उनकी तरफ देखता है, मानों उसे यह भाषा समझ में नहीं आ रही है। रमेश का बेटा पप्पी के साथ नहीं खेलता है। उसका मन छोटे-छोटे बच्चों और अपने दादा-दादी के साथ खेलने में लगता है।

दो साल पूरा हो जाने पर बच्चे को स्कूल में भर्ती करा दिया गया है। फीस मंहगाई दर के हिसाब से कुछ बढ़ गई है। बच्चे को पहले ही दिन से अनुशासन, समय का महत्त्व और आने वाले भविष्य की चुनौतियों के बारे में बताया जाने लगा है।

****

लघुकथा

जाग्रति

मधुदीप

शाम का धुँधलका रात के सन्नाटे में बदल चुका था। गाँव की हर गली, हर चौराहे पर अँधेरा पसरा पड़ा था। जी हाँ पाठको! यह दिल्ली या किसी राज्य की राजधानी की नहीं, बल्कि भारत के एक दूर-देहात की लघुकथा है।

गाँव की चौपाल में जल रहे पेट्रोमेक्स की थोड़ी-सी रोशनी सामने की पगडंडी पर भी पड़ रही थी। अरे! आप तो पेट्रोमेक्स के नाम से ही चौंक गए! जी हाँ जनाब! वही गैस का हंडा जो आजकल हम शहरी लोग ब्याह-बारात में ही देखते हैं और जो अब मिट्टी के तेल से नहीं जनरेटर की बिजली से चलता है। गाँव में मिट्टी के तेल से जलनेवाले गैस के एक-दो हंडे भी तभी पहुँचते हैं जबकि रात को वहाँ कोई बहुत बड़ा आयोजन होना हो।

इसे गाँव का बहुत बड़ा सौभाग्य ही कहिए कि इस इलाके के विधायक, जो कि राज्य के बिजली मन्त्री भी हैं आज रात चौपाल में तशरीफ ला रहे थे। तशरीफ लानी ही पड़ रही थी क्योंकि चुनाव-प्रचार पूरे ज़ोरों पर था और काँटे की टक्कर होने के कारण एक-एक वोट से जीत-हार की संभावना ने सभी उम्मीदवारों की धुकधुकी बढ़ा दी थी।

चौपाल में भीड़ जुड़ने के एक घंटे बाद झंडा और लाल बत्ती लगी मन्त्री जी की कार तीन अन्य कार-जीपों के काफिले के साथ वहाँ पहुँची। भीड़ के स्वागत के लिए नीचे आने से पहले ही पूरा दल-बल ऊपर आकर वहाँ बिछी खाली चारपाइयों में धँस गया।

गण्य-मान्य व्यक्तियों द्वारा हार-फूलों से लाद दिए जाने के बाद अब मन्त्री जी अपनी लच्छेदार बातें भीड़ के सामने परोस रहे थे कि तभी बूढ़े दीनू काका उठकर खड़े हो गए।

''का हो काका, कुछ कहना है का!'' मन्त्री जी के मुख से शहद टपका।

''हाँ रे ! तनिक देखियो तो रमुआ, मन्त्री जी अपनी कार में बिजली भर के लाये हैं का !'' दीनू काका के कहने के साथ ही चौपाल में हँसी का एक ठहाका गूँज उठा।

''का कहत हो काका! बिजली का कार में भरके आत है ?'' ठहाके के उतार के साथ ही रमुआ ने कहा।

''आत है रे रमुआ ! मन्त्री जी पिछली बार कहि के जात रहिन कि अगली बार आवत रहिन तो बिजली लेकर आवत रहिन। अब मन्त्री जी कार में आत रहिन तो बिजली का पैदल आत रहिन ? ढूँढ़त रहो, बिजली उस कार मा ही होत रहिन।''

दीनू काका के कहने के साथ ही भीड़ ने चौपाल से नीचे उतरकर मन्त्री जी की कार को चारों तरफ से घेर लिया।

मन्त्री जी अब अपने दल-बल सहित वहाँ से खिसकने की जुगत लगा रहे थे।

****

138/16 ओंकारनगर-बी, त्रिनगर, दिल्ली-110 035
मोबाइल : 93124 00709 , 81300 70928

तत्त्वमसि

चन्द्रकान्ता अग्निहोत्री

दोपहर ढल चुकी थी। उसने अलसाई आँखे धीरे से खोलीं। खिड़कियों में लगे झक्क सफेद पर्दों से झाँकते सकुचाते कई सुनहरी दीपक चमचमा उठे। उसने उठकर पर्दे सरकाए। लाल गोला खिड़की से कूद कर संगमरमरी फर्श पर लोटने लगा।.....अरे किस ख़ुशी में ? वह धीरे से बुदबुदाई। अचानक उसकी नज़र अपने पैरों पर पड़ी। मेहंदी तो उसने रचाई नहीं थी, पर यह महावर? फर्श से लौटती किरणें उसे छू रही थीं। उसके हाथों की उँगलियों में सजी अंगूठियाँ भी इन्द्रधनुषी रंग बिखरा रही थीं। ओह.... कानों में ईयरिंग्स .....। वह जल्दी से ड्रेसिंग -टेबल के सामने जा खड़ी हुई।

उसके शब्द अब भी उसके कानों में गूँज रहे थे .....'यू लुक लाइक बेगम।.....दीज़ ईयरिंग्स ,....रिंग्स ,....नेकलेस एंड यू ...बेगम।'

जीवन के पैंतालिस बसंत पार करने के बाद यह कैसा बसंत आया है। उसे अपनी ही होश नहीं रही। प्रेम और विवाह को मज़ाक समझने वाली मोना को न जाने क्या हो गया था। प्रेम की पकड़ मज़बूत हो रही थी पर विवाह ....। ऐसा न हो कि वह कहीं की न रहे। ज़िन्दगी के थपेड़े खाती उसकी नाव अचानक किनारे से टकरा कर चकनाचूर न हो जाए। यहाँ उसका इतना सुंदर घर, एक अच्छी खासी सरकारी नौकरी। लेकिन वह अवश सी अनि की ओर खिंचती चली जा रही थी। खुद को अनि की दृष्टि से निहारने लगी थी। पता नहीं क्यों उसका नाम लेते ही एक सोलह साल की लड़की की तरह रोम-रोम में हो रहे स्पंदन को अनुभव कर रही थी। एक पुकार उठ रही थी ...अनि ...अनि। यह सौम्यता और कोमलता भी तो उसे अनि ने दी थी। अगर वह उसके जीवन में न आया होता तो वह रहती शुष्क, निर्गंध व असहज और न जाने क्या-क्या.... आज उसमें एक खुशबू है, प्यार की खुशबू। उसने फिर से अपने चेहरे को निहारा वाशरूम में गई , मुँह पर पानी के छींटे दिए उसे लगा छींटे नही फुहार है।

उसे अनि से मिलने भी तो जाना है। उसने सी ग्रीन कलर का सूट निकाल कर पहना और फिर जा खड़ी हुई दर्पण के सामने, महसूस किया किन्हीं हाथों का स्पर्श, उसके कानों में शब्द गूँज रहे थे ....सलवार -कमीज़....वन्डरफुल ड्रेस बट आई वुड लाइक टू सी यू इन जींस।'

पहन लेंगे न अमेरिका जाकर, वह हँस दी थी और वह भी। उसे लगा था वह सदियों बाद खुल कर हँसी है।

उसने सूट से मैच करते नैकलेस व ईयरिंग्स पहने। अपने को देखा परखा, कार की चाबी उठाई और चल पड़ी। कार की गति से भी अधिक तेज़ी से भाग रहा था उसका मन। न जाने क्यों लगा ऐसा की साथ वाली सीट पर अनि आकर बैठ गया है। उसकी अपनी ही मुस्कान शीतल बयार की तरह उसके ओठों को छू गई....और फिर यादों का लम्बा सिलसिला।

किसी को बिना बताये। एक अजीब कशिश उसे घेर लेती थी। तब उसे लगता अनि ही नहीं बल्कि पूरी कायनात उसकी है।

यह बात उसने अनि के पास पहुँचते ही कही थी।

उसने कहा था-व्हाट ए वन्डरफुल आईडिया ?

आईडिया...? ओह !...यह आइडिया नहीं मेरी फीलिंग है। मेरी अनुभूति। ..तुम नहीं समझोगे।

ठीक है। फिलासफी मत झाड़ना कह कर उसके हाथ पर हाथ रख दिया और धीरे से खींच कर अपने सीने से लगा लिया। वह उसके बालों से खेलने लगा उन पलों में उसे लगा था जैसे वह किसी समुद्र की गहराइयों में डूबती जा रही है। उसकी उँगलियों का स्पर्श किसी वीणा के तार छेड़ने जैसा लग रहा था। वह धीरे-धीरे पिघलती जा रही थी। वह एक

चन्द्रकान्ता अग्निहोत्री की ओशो साहित्य पर आधारित ओशो दर्पण, वान्या (काव्य संग्रह), सच्ची बात (लघु-कथा संग्रह), गुनगुनी धूप के साये (गीत-ग़ज़ल संग्रह), सांझा संकलन : कवितालोक, प्रथम उद्भास, गीतिका लोक में रचनाएँ प्रकाशित। सम्प्रति राजकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय,चंडीगढ़ की सेवा-निवृत ऐसोशिएट प्रोफेसर व पूर्वाध्यक्ष हिंदी -विभाग हैं।
संपर्क-404, सेक्टर - 6, पंचकूला 134109, हरियाणा।
ईमेल -agnihotri.chandra@gmail.com
मोबाइल-09876650248

ऐसी बहती नदी बन रही थी जो अपने ही हृदय के किनारों से टकरा रही थी तथा धीमी-धीमी उठती भाव लहरियाँ उसके तन-मन को आंदोलित कर रही थीं। वह उस पल में आकंठ डूब चुकी थी।

क्या तुमने कुछ अनुभव किया ? मोना ने पूछा।

यस आई लव यू ,...रियली लव यू ... ।

मोना ने आँखें बंद कर उसके कंधे पर सिर रख दिया। वह सोचने लगी -अगर प्रेम न होता तो दुनिया में कुछ भी न होता। उसे लगा जैसे उसकी उम्र उस एक पल में कैद हो गई है। कहाँ गए उसके पैंतालीस वर्ष। सच तो यह है कि जब भी कोई प्रेम करता है वह किशोरावस्था में पहुँच जाता है और प्रेम तो सदा कुँवारा।

कितने रिश्ते आये थे उसके लिए। न स्टेट्स की कमी थी न पैसे की, लेकिन किसी से बात करने पर वह आत्मीयता अनुभव नहीं कर पाई थी। जब भी किसी लड़के से मिलती यही सोचती कि क्या उसे इस लड़के के साथ रहना होगा, ओह ....नो ऐसा सोचते ही वह इनकार कर देती और इसी तरह पैंतालीस पार कर गई।.....और अब मिला अनिकेत, दो बच्चों का पिता और तलाकशुदा ....अनुभवी। अनुभव है तो क्या! प्रेम तो सदा कुँवारा है। ऐसा कुँवारापन जिसे कोई नहीं छू सकता। हवा का झोंका आया, खिड़कियों के पर्दे हिले मानों अपने होने का प्रमाण दे रहे हों।

अच्छा बताओ क्या सोचा है एंगेजमेंट के बारे में। अनि ने चुप्पी तोड़ी।

एंगेजमेंट तो हो गई।

कब.... ? उसने बच्चों की तरह पूछा।

देखो अनि !....शादियाँ भी टूट जाती है। तुम सोचते हो एंगेजमेंट नहीं टूट सकती। रिंग उतार कर फैंक दी बस हो गई बात खत्म। मेरा यह मानना है कि इन बातों में क्या रखा है, मेरा मतलब यह भी नहीं कि मैं रिंग उतार कर फैंक दूँगी। पर हैं ये सब बेकार की बातें। कर लेंगे न सगाई बता देंगे सारी दुनिया को।

न जाने कैसी बातें करती हो मोना ? उसका चेहरा उतरा हुआ था।

तुम मेरे साथ ही अमेरिका चलो।

अनि, मैंने तुम्हें कितनी बार बताया है कि पासपोर्ट अभी बना नहीं। समय लगता है फिर मेरी क्लासिज़ भी तो हैं।

पासपोर्ट का क्या है कुछ दिनों में बन जाएगा।...वह घड़ी देखने लगा।

क्या हुआ, घड़ी देख रहे हो ? मैं अभी नहीं जाने वाली। चाय-वाय नहीं पिलाओगे?

क्यों नहीं, कुछ खाना हो तो बताओ। घड़ी तो इसलिए देख रहा हूँ क्योंकि अनिल और अखिल का फ़ोन आना है।

ओह.....

तुम्हें बुरा तो नहीं लगा।

नहीं यार बिलकुल नहीं। वे तुम्हारे बेटे हैं और तुम ऐसा क्यों सोचते हो।

मैं तुम्हें खोना नहीं चाहता। तुम वही हो जिसकी इमेज सालों से मेरे मन में थी। पर न जाने कैसे इवाना के चक्कर में पड़ गया।

छोड़ो, ये सब तो होना ही था लेकिन अगर मेरे साथ भी इवाना जैसा कुछ हुआ तो?

कभी-कभी तो मुझे भी डर लगता है। क्योंकि तुम बड़ी स्टेटफॉरवर्ड हो। तुम्हारा यह कहना कि रिंग का क्या है ....उतार कर कभी भी फेंक दो।

मैंने तो सिर्फ इतना ही कहा था कि कीमत तो प्यार की है, अंगूठी की नहीं... अच्छा कल मुझे शादी में जाना है।

मत जाओ मोना। तुम्हारे बिना कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

शादी अटेंड करके यहाँ आऊँगी, तुमसे मिलने।

तुम अपने रिश्तों को बड़ी इम्पोर्टेंस देती हो। पहले तुम्हारा नेफ्यू आया हुआ था, तुम नहीं आ सकी। फिर तुम्हारी बहन ने आना था तुम बिज़ी रही। कभी तुम्हारी फ्रेंड की बेटी कि शादी है ...उसके साथ शापिंग के लिए जाना है।..अब तुम्हें शादी में जाना है।

बी प्रैक्टिकल अनि। इन पैंतालिस वर्षों में रिश्तों की जो जड़ें यहाँ वहाँ फ़ैल गई हैं उन्हें एक पल में तो नहीं तोड़ सकती। अगर मैं कहूँ जब तुम अमेरिका जाओगे, सबसे मिलोगे ....अपने ...मम्मी-पापा से, बच्चों से दोस्तों से सबसे ....क्यों ?

पापा के पास मम्मी, बच्चों के पास उनकी गर्ल -फ्रेंड्स। वहाँ ऐसा नहीं होता।

अच्छा फिर चलती हूँ। .....कह कर वह चली गई।

वह कुछ अनमनी सी थी। उसे कुछ कमी सी लग रही थी। इतना अच्छा समय बिताया फिर भी अनि कोई न कोई ऐसी बात कर देता है जिससे मन क्षुब्ध हो जाता है। सूरज डूबने वाला था और उसकी अशक्त किरणें उसे भी अशक्त बना रही थीं। ओहो, मोना डार्लिंग ! उसने अपने से ही कहा। ....कैसी बातें कर रही हो जो होगा ठीक होगा। हमें सुंदर पल बेकार की बातों की बलि नहीं चढ़ाने चाहिए। उसने जैसे सभी विचारों को झटक दिया। और खुश हो गई डूबते सूरज को देखकर। पक्षियों के झुण्ड के झुण्ड पंक्तिबद्ध हो आकाश में उड़ान भर रहे थे। उन्हें कल की कोई चिंता न थी। उनका कलरव कानों में रस घोल रहा था। घर जाकर शादी में जाने की तैयारी करने लगी लेकिन एक पल के लिए भी अनि को नहीं भूली। अनि तो बस उसके लिए साँस लेना, खाना -पीना ,पलक झपकना ,आँखें बंद करना और खोलना सब हो गया था।

शादी में जाकर भी उसे लग रहा था जैसे अनि भी उसके साथ है वह भी उसके साथ-साथ सबसे मिल रहा है।

लेकिन वापसी में वह उससे मिलने न आ सकी।

तुम आई नहीं ? अनि की आवाज़ थी .....लगभग बारह बजे थे रात के।

सुनो मेरी बात ध्यान से सुनो अनि। मेरा नेफ्यू वहीं आ गया गया था शादी में। मैं क्या करती ? मैं उसे सारी बात नहीं समझा सकती थी इसलिए मुझे घर आना पड़ा।

तुम्हें तो खूब कामप्लिमेंट्स भी मिले होंगे।

तो क्या ? यह कोई नई बात है?

आई एम् जैलेस एंड सीरियस। मेरे लिए एक शादी नहीं छोड़ सकती थी।

ओहो! क्या हो गया है तुम्हें अनि ?

यू डोन्ट लव मी मोना। कह कर उसने फ़ोन रख दिया।

कितना मुश्किल है। अब वह क्या करे? वह तो ज़िन्दगी कम्प्लीट अंडरस्टैंडिंग के साथ जीना चाहती है।.....बाहर हवाएँ

बड़ी तेज़ थीं। पर्दे उड़-उड़ कर क्यों विद्रोह सा कर रहे थे।.....क्या ज़रूरत थी इस उम्र में इश्क फरमाने की। मन में तूफ़ान सा लाते इन विचारों को वह सँभाल नहीं पा रही थी। बाहर का तूफ़ान भीतर के तूफ़ान के गले मिल रहा था। वह रुआँसी सी बिस्तर पर लेट गई। न जाने क्यों आँसुओं का सैलाब सा उमड़ आया।.....आज वह जी भर कर रोई।

कब सुबह हो गई पता ही नहीं चला। वह इस तरह इतनी बंदिशों में नहीं रह सकती।

बड़े भारी मन से उठी, रिसीवर उठाने जा ही रही थी कि फ़ोन की घंटी बजी। .....तूफ़ान थम सा गया था।

उसने फ़ोन उठाया। अनि की आवाज़ थी.. तुम आ सकती हो मोना? तुम जल्दी आओ बस। कहकर उसने फ़ोन रख दिया।

विचार थम से गए थे। क्या करे ....वह सोच ही न पाई ,जल्दी से चाबी उठाई और चल पड़ी।

मन के भँवर में उलटती-पलटती कब अनि के घर तक पहुँची उसे पता ही न चला।

सामने अनि था।

क्या हुआ अनि ?

पता नहीं मैंने कल क्या -क्या कह दिया। कह कर उसे गले से लगा लिया, मोना प्लीज़ बुरा मत मानना, पता नहीं क्यों मैं असुरक्षित सा महसूस करने लगा था। अब सब ठीक है।

हाँ अब सब ठीक है। उसके कानों में बुल्ले शाह की पंक्तियाँ गूँजने लगी.... ओहदा रब वी नहीं रुसदा, रब दी सौं.....जिनहु यार मनान दा चज हौवे...।

उसे लगने लगा उसकी 'मैं' न जाने कहाँ गुम होती जा रही है और होता जा रहा है 'तुम' का विस्तार।

चलोगी न मेरे साथ ?

पासपोर्ट मिलते ही। ...उपनिषद का वचन है....तत्त्वमसि।

क्या?

कुछ नहीं। कहकर अपनी नज़रें झुका लीं।

****

लघुकथा

अनभिज्ञ

संदीप तोमर

वो बेचारा अलसुबह से कोठी के गटर को बाँस की खरपच्ची से साफ़ करने की कोशिश करता रहा..... जब सफलता हाथ न लगी तो उसने कोठी की मालकिन से कहा – 'मेम साहब, मेन होल में घुसना पड़ेगा.. यहाँ से तो बात नहीं बन रही.....'।

'ठीक है भैया, कैसे भी करके इसे साफ़ कर दो.... शाम से गटर बंद पड़ा है। टॉयलेट सीट से पानी और गंद नहीं निकल पा रहा..... आज सुबह से कोई फ्रेश भी नहीं हो पाया..'।

'जी मेम साहब' –कहकर उसने अपने कपड़े खोले और गटर में उतर गया.. तकरीबन डेढ़ –दो घंटे की मशक्कत के बाद उसे सफलता हाथ लगी.. वो फावड़े से मेन होल का गंद बाहर निकालता रहा..

जब वो साफ़ सफाई कर बाहर निकला तो उसने देखा, उसकी कमीज़ पर भी गंद पड़ गया था..

उसने कोठी की मालकिन को कहा – 'मेम साहब, मेरी कमीज़ ख़राब हो गई है अगर बाबूजी की कोई पुरानी कमीज़ मिल जाती तो मैं आराम से घर तक पहुँच जाता.... आप मेरे मेहनताने में से पैसे काट सकती हैं..... '

'देखती हूँ भैया' –कहकर वो अन्दर गई और थोड़ी देर बाद एक टी-शर्ट लेकर बाहर आई...और उसे दे दी..

टी-शर्ट पहन और अपनी मज़दूरी ले वो घर की ओर चल पड़ा ...टी शर्ट पर लिखा था– If being sexy is a crime, arrest me..... रास्ते में जो भी उसे देखता हँसने लगता।.... उसे समझ नहीं आया कि लोग क्यों हँस रहे हैं.....क्या लिखा है वह उससे अनभिज्ञ था।

****

डी-2 / 1, जीवन पार्क , उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059, दूरभाष : 8377875009

लाखों पाए

कृष्णलता यादव

माँ ने देखा, बहन ने देखा – रज्जू बोरी-बिस्तर लिए आ रहा था। माँ बेचैन थी, हो-न-हो, रज्जू का मन नहीं लगा होगा। बहन चकराई थी, फ़ोन पर बड़ी-बड़ी बातें बनाता था – 'मुझे यहाँ कोई परेशानी नहीं। आऊँगा तब बहुत पैसा लाऊँगा। कम्मो के लिए सूट, माँ के लिए साड़ी .....।'

घर पहुँचते ही रज्जू ने माँ और बहन के चेहरे पढ़ लिए। उसके अन्दर का ज्वार बाहर आ ही गया, 'माँ, तुमने कहा था न कि जिस दिन मालिक की नीयत में खोट दिखाई दे काम छोड़ देना। दारू के लालच में मालिक देर-देर तक काम करवाता था। लल्लन, तिरखा, बीनू, चिम्मन नशे के लोभ में हाड़-तोड़ मेहनत करते हैं। मैं किसी की बातों में नहीं आया। माँ, ठीक किया न मैंने ?'

खिली-खिली मुस्कान से माँ ने बेटे को गले से लगा लिया।

****

संपर्क : 1746, सैक्टर 10-ए, गुड़गाँव- 122001
इमेल: krishanlatayadav@gmail.com

क्या-क्या बताऊँ.....

डॉ. अफ़रोज़ ताज

डॉ. अफ़रोज़ ताज, एशियन स्टडीज़ विभाग, यूनिवर्सिटी आफ़ नॉर्थ कैरोलाइना, चैपल हिल, यू एस ए में प्रोफ़ेसर हैं। पीएॅच.डी. का विषय है-हिन्दी-उर्दू के काव्यात्मक रंगमंच का आलोचनात्मक अध्ययन (अंग्रेज़ी में), और यू एन सी स्टडी अब्रौड इन इन्डिया, एशियन स्टडीज़ विभाग में दक्षिणी एशिया भाग, गीत बाज़ार रेडियो, ताज कनैक्शन टीवी शो, बोर्ड आफ़ ट्रस्टीज़: उर्दू मजलिस, इन सबके संचालक हैं। डॉ.अफ़रोज़ ताज की प्रकाशित पुस्तकें हैं-इन्द्र सभा और उत्तरी भारत के रंगमंच का पुनर्जन्म (अंग्रेज़ी), हिन्दी के द्वारा उर्दू-देवनागरी की सहायता से नस्तालीक़ (अंग्रेज़ी)।

ए डोर इन टू हिन्दी: सायबर स्पेस के द्वारा हिन्दी भाषा का कोर्स-यू.एस. शिक्षा विभाग , दरवाज़ा: सायबर स्पेस के द्वारा उर्दू भाषा का कोर्स-यू.एस.शिक्षा विभाग, तनहाइयाँ, अनकही और अहसास, पाकिस्तानी ड्रामों पर अध्ययन और पारसी थियेटर की किताब पर काम चल रहा है। कई सम्मानों से सम्मानित, जिनमें प्रमुख हैं--कालिज आफ़ ह्यूमैनिटीज़ ऐण्ड सोशल साइन्सज़ आउटस्टैण्डिंग टीचर अवॉर्ड, एन .सी.एस .यू. आउटस्टैण्डिंग टीचर अवॉर्ड, कालिज आफ़ ह्यूमैनिटीज़ ऐण्ड सोशल साइन्सज़ लेखक अवॉर्ड, बैस्ट एक्टर अवॉर्ड, उत्तर प्रदेश, भारत, बैस्ट पोइट अवॉर्ड, नग़मा-ए अलीगढ़ पर, ए.एम.यू. के द्वारा।

ईमेल: taj@unc.edu,

फ़ोन: 919-851-1119

संपर्क: Campus Box 3267 201 New West, University of North Carolina, Chapel Hill, 27599

मैंने दरवाज़ा खोला।

मेरी आँखें खुली की खुली रह गईं। यह मैं क्या देख रही थी? मेरे सामने वही खड़ी थी। इतने सालों बाद। उसके चहरे पर वही ताज़गी, आँखों में वही गहराई, वही रोई-रोई भीगी- भीगी पलकें... इतने साल के बाद।

लाहौर में आने के बाद अतीत के वे लम्हे, वे गुज़रे हुए दिन मैं कभी याद नहीं करना चाहती थी, सिवाए उस ख़ुशनुमा चहरे के जो आज अचानक मेरे सामने था। लाहौर में गंगा का पवित्र चेहरा।

वह दरवाज़े पर खड़ी थी। उसको देखते ही एक क्षणभर के झोंके में मुझ पर गुज़रा हुआ एक-एक पल मुझे याद आ गया।

सन् 1947 का वह मनहूस अगस्त का महीना, जब भी याद करती हूँ तो सारे शरीर में अंगारे से दौड़ने लगते हैं और एक कपकपाहट सी छा जाती है। लगता था आसमान रो-रो कर सारी दुनिया को बहा देगा। बारिश थमने का नाम न लेती थी और उधर आग भी थमने का नाम न लेती थी, बदले की आग। इन बदलों ने औरतों को निशाना बनाया हुआ था।

मैं रातों को भागती थी और दिन में खेतों में छुप जाती थी।

आज पाँचवाँ दिन हो गया था पता नहीं कहाँ भाग रही थी मैं। बस किसी ने बता दिया था कि पाकिस्तान उस तरफ़ है। बस उसी दिशा में भागती रही। अब कपड़ों के फटने की नौबत आ चुकी थी। मेरा दुपट्टा एक चीथड़ा बन चुका था। यह वही दुपट्टा था जो मेरे पति ने मुझे मेरी शादी की सातवीं सालगिरह पर दिया था। कितना प्रिय था मुझे। धानी रंग हल्की मलमल पर कारचौबी के फूल कढ़े थे। अब यह दुपट्टा पहचान में न आता था। मुझे मेरे पति की बड़ी याद आती रही। अगर वे मुझे इस हालत में देख लें तो दिल फट जाए उनका। भूख ने मेरी सारी शक्ति ले ली थी। दिन में खेतों में उल्टा सीधा जो मिल जाता खा लेती और रात को फिर भागने की हिम्मत जुटाती। पता नहीं कब यह तूफ़ान आया और कब मैं अपने प्यारों के कारवां से बिछड़ी। कुछ पता नहीं। चीख़ते पुकारते मेरे प्यारे पीछे रह गए और मैंने ख़ुद को अकेले भागता हुआ पाया।

पटियाला में मेरे पति राहत की मौसी रहती थीं। मैं उनसे मिलने आई थी। सोचा था कुछ दिन मौसी के यहाँ बाग़ों में झूले झूलूँगी मल्हारें गाऊँगी। राहत का प्यारा और हमदर्द चेहरा मुझे रह रह कर याद आता था। बड़े प्यार से वे मुझे अपनी मौसी के यहाँ छोड़ते समय कह गये थे कि ''पूरे मज़े लेना, ख़ूब खाना-पीना और पैसा ख़र्च करने में कंजूसी न करना। अगले सप्ताह तुम्हें लेने आऊँगा।''

मेरी ससुराल की ख़ानदानी ज़मीन जायदाद काफ़ी थी, खेती-बाड़ी और बाग़ात भी अच्छे ख़ासे थे। इसके अलावा उनकी सदर बाज़ार में बहुत बड़ी जूतों की दुकान भी थी। हालाँकि वे पढ़े लिखे थे मगर कभी नौकरी नहीं की। मेरे माता-पिता ने मेरे बी.ए. के दौरान मेरी शादी कर दी थी। मैं तो शादी से इनकार कर देती लेकिन जब मैंने उन्हें देखा तो देखती रह गई। कितने ''क्यूट'' थे वे - हमारी शादी बड़ी धूम-धाम से करवाई गई। भरपूर प्यार मिला उनसे। मुझे याद है कि एक बार आँगन में किसी चूड़ी के टुकड़े से पैर में थोड़ा सा

ख़ून निकल आया था तो वे कितने बेचैन हो गए थे। रात भर वे मुझे समझाते रहे, ''कौसर, ध्यान से पैर रखा करो .....'' और मैं न जाने कब सो गई।

आज पैर कहाँ-कहाँ पड़ रहे हैं, कोई राह दिखाने वाला नहीं। हर समय जान का ख़तरा था। मौसी का क्या हुआ, उनके बेटे और बहू और बेटी का क्या हुआ कुछ पता नहीं। लोगों ने मौसी के घर में आग लगा दी। हम सब निकल भागे। भागे तो साथ थे। बिछड़े कहाँ पता नहीं। बस यह सोचती हूँ कौन सा बुरा समय था जब मैं घर से निकली थी। दो देशों की राजनीति का वज़न हम औरतों को ढोना पड़ रहा था। किसको कौन सी कुर्सी मिली? इससे हमें क्या सरोकार? हम औरतें क्यों सयासत की चक्की के दो पाटों के बीच में पीसी जा रही हैं? ज़मीन पर रेखा ही तो खींचने का फैसला हुआ था, पेड़ों को जड़ से उखाड़ने का तो नहीं। जो जहाँ है वह वहीं क्यों नहीं रह सकता?

शरीर का जोड़-जोड़ भूख से जवाब दे चुका था। रात भर की दौड़ी हुई। एक खेत की पगडण्डी के किनारे पर बैठ गई। मेरी निगाहें फ़सल के पौधों में छिपने और कुछ खाने के लिए देख रही थीं।

''कौन है तू?''

किसी के सवाल से मैं चौंक पड़ी। दिल धड़कने लगा। वह देखने में भला आदमी लगता था। हाथ में दातुन थी। लंबा तड़ंगा मोटी गर्दन मोटे-मोटे हाथ-पैर, सिलेटी लुंगी बाँधे, सिर पर पीली पगड़ी बाँधे, मुझे घूरने लगा।

दातुन थूक कर फिर बोला ''अरे मैं पूछूँ हूँ तू कौन है क्या चोरी करने आई है खेत में?''

मैंने सहम कर कहा, ''नहीं नहीं मैं थकी हूँ, अभी चली जाऊँगी भैया।''

वह हँस पड़ा, ''साली भैया कहती है।''

एक ही पल में उसका हाथ मेरी चोटी पर था। मेरी गर्दन झटका खा गई। मेरा बदन शक्ति न जुटा पाया। बारिश के पानी से कच्ची ज़मीन लथपथ थी। मैं गिरते-गिरते बची। यहाँ कौन था मुझे बचाने वाला?

''चल, तेरी मुलाक़ात थानेदार से करवाऊँ।''

पता नहीं कब एक दूसरा आदमी भी आ गया। उसने कभी मेरी कमर में हाथ डाला तो कभी मेरी कलाई को पकड़ा और देखते ही देखते मैंने ख़ुद को किसी घर के आँगन में पाया।

उसकी पत्नी ने ज़ोर से चिल्लाना शुरू कर दिया।

''अरे ओ ज़ालिम। यह कहाँ से पकड़ लाया करम जली, भाग की मारी, सुंदर बला को, कहाँ से उठा लाया बेशरम इस मुसलमाननी को?''

वह ज़ोर से अपने बीवी पर चीख़ा ''चुप रह, वरना तेरी ज़ुबान खींच लूँगा।''

वह और ज़ोर से चीख़ी। ''खींच ले मेरी ज़ुबान, तेरी बेरहमी पर और चीख़ूँगी। अरे शर्म कर। किसकी बहन, किसकी धी, किसकी बहू, किसकी पत्नी और किसकी माँ ढोर जानवर की तरह खींच कर यहाँ ले आया है। उसके घर वाले उसके लिए तड़प रहे होंगे। कुछ तो शर्म खा।''

मुझे मेरा आठ साल का बेटा जावेद मेरी निगाहों में घूम गया। जिसे मैं उसके पिता के साथ छोड़ आई थी। राहत किस हाल में होगा मेरे बिना। मेरे माता-पिता जीवित हैं या मार डाले गए।

मैं एकदम चौंक पड़ी।

वह ज़ालिम शेर की तरह अपनी पत्नी पर कूद पड़ा और जुनून के साथ उसे पीटना शुरू कर दिया। वह अभागी नीचे गिर पड़ी, वह रोती जाती थी और कोसे गालियाँ देती जाती थी। साफ़ लगता था कि इस घर में यह सब नई बात नहीं थी। वह वहीं आँगन में रोती रही कराहती रही।

एक पल में वह जानवर मेरी ओर बढ़ा। इससे पहले मैं कुछ कहती या करती उसने ज़ोर से मेरे चेहरे पर थप्पड़ मारा और मुझे अपनी कोठरी में खींचता हुआ ले गया।

मेरे हाथ में कुछ नहीं था सिवाय लुट जाने के। मेरे साथ क्या हुआ क़लम में लिखने की ताब कहाँ। हाँ इतना याद है कभी वह मुझे मारता और कभी उस करम जली को, जो मुझे करम जली कहती थी।

जब वह दो पहर के निकट अपने खेत पर काम करने के लिए निकलता, बाहर से ताला लगा कर जाता। घर की दीवारें इतनी ऊँची थीं कि हम औरतों की हिम्मत न थी आवाज़ तक बाहर पहुँचाने की।

मेरे बदन पर जहाँ-जहाँ नील थे इस औरत ने हल्दी का लेप लगाया।

''कितनी सुन्दर है तू। क्या हाल किया है तेरा इस जानवर ने। कहाँ तू इस बेरहम के हाथ लग गई।'' मैंने अपनी पूरी व्यथा उसे सुनाई। वह चुपचाप सुनती रही।

''मेरा नाम कौसर है। मैं चौधरी परिवार की बेटी हूँ । समय ने मेरे परिवार को मेरे देश के साथ बाँट दिया। मेरे प्यारे कब मुझसे बिछड़े, कहाँ गए, मुझे कुछ पता न चला। लोगों के बताए हुए रास्ते पर भाग पड़ी और भाग मुझे यहाँ ले आया। मुझे पता न था कि मैं एक रात में ही अपने वतन में बेवतन हो जाऊँगी।''

वह औरत भभक-भभक कर रो पड़ी। फिर अपने को सँभाल कर बोली, ''बहन कौसर मेरा नाम गंगा है। जैसे तेरा घर बिछड़ा वैसे मेरा घर बिछड़ा। जैसे तेरी दुनिया उजड़ी ऐसे मेरी भी। जिस दिन तू मेरे घर लाई गई उस एक ही रात में मैं अपने ही घर में बेघर हो गई। तेरे साथ जो बलात्कार हो रहा है इससे यह पता लगा कि इस आदमी के हाथों मेरा शादी के दिन से बलात्कार हो रहा था। हम दोनों एक ही तीर के घायल हैं।''

यह कह कर वह मुझसे लिपट कर फूट-फूट कर रोने लगी। मैं कहाँ अपने को रोक पाती और घंटों गंगा यमुना बहती रही। वह हिचकियाँ ले ले कर बोलती रही। ''मुझे किसी का नाम नहीं मालूम कि किसने यह बँटवारा करवाया पर इतना जानती हूँ ये सब मर्द हैं। बदलों के बहाने औरतों के साथ अत्याचार हो रहा है। देश का बँटवारा तो एक बहाना है। असली उद्देश्य है औरतों और ज़मीन के साथ बलात्कार करना। परिवार की मान मर्यादा की ज़िम्मेदारी स्त्रियों पर क्यों है? इसी के कारण राजनीति और बदले की भावना बलात्कार के रूप में औरतों को भुगतनी पड़ती है। कहीं-कहीं अपनी स्त्रियों को ही परिवार की मर्यादा बचाने के लिये मारा जा रहा है।'' मैं उसकी ये बातें सुन कर उसे

देखती रह गई।

पहाड़ की तरह आठ महीने बीत गए। आँगन में, कोठरी में उस आदमी के साथ जिसका नाम राजेन्दर था; जो मैं याद रखना नहीं चाहती। इन आठ महीनों के दौरान न जाने कितनी बार गंगा पिटी और न जाने कितनी बार मैं।

मैं गंगा के हाथों की मसीहाई कभी नहीं भूल सकती। मेरे दुखों और घावों पर जब वह हाथ रखती थी तो मुझे वह आराम मिलता था मानों मेरा बेटा, मेरा जावेद मुझे छू रहा हो। जब वह मेरे आँसू पोंछती तो मुझे मेरी अम्मी का गुमान होता। उसकी आवाज़ का दुख मेरी रूह तक पहुँचता था। वह कम सुंदर नहीं थी। नाशुकरा राजेन्दर उसको बाँझ कह कर बुलाता था क्योंकि उसकी कोई संतान न थी।

गंगा ने मेरे पिंजरे की तीलियों को काटने की बड़ी कोशिशें कीं, लेकिन इस नामुराद राजेन्दर की निगाहों के दायरे बड़े सख़्त थे। जब कोई बाहर वाला मिलने आता तो मैं कमरे के अंदर छुपा दी जाती। मैं भी डर से अंदर चुपचाप पड़ी रहती।

एक दिन कम नसीब फ़रिश्ता सिफ़त गंगा ने मुझे बतलाया कि अमृतसर और लाहौर में हिंदुस्तान और पाकिस्तान सरकार की ओर से घोषणाएँ हो रही हैं कि अगर कोई हिंदू या सिख महिला मुसलमान के घर लाहौर में या मुसलमान महिला अमृतसर में किसी के घर में रख ली गई है तो पड़ोसियों की ज़िम्मेदारी है कि वे पुलिस को बताएँ ताकि उन्हें वहाँ से निकाल कर उनके घरों तक पहुँचाया जाए। पड़ोसियों से अनुरोध है कि वह हमारी मदद करें।

मैं मुस्कुराई थी।

मुझे किसी कवि का वह शेर याद आ गया :

जब ख़ाक-ए नशेमन ही न रही तो झूम के बरसा पानी भी,

उस वक़्त कहाँ थी काली घटा जब आग लगाई लोगों ने।

बहुत देर हो चुकी थी मगर फिर भी यह ख़बर बहुत अच्छी लगी।

गंगा ने कहा, ''कौसर चाहे राजेन्दर मेरी गर्दन काट दे मगर मैं पुलिस स्टेशन जाकर यह ख़बर ज़रूर दूँगी.... लेकिन... लेकिन'' वह रुक कर बोली ''क्या तुम्हारे पति या परिवार वाले तुमको अब स्वीकार कर लेंगे?''

मैं फिर मुस्कुराई।

गंगा ने घर से बाहर निकलने की काफ़ी कोशिशें कीं लेकिन वह ज़ालिम बड़ा दुष्ट था। हम दोनों की गर्दनें उसके मज़बूत पंजों में थीं। गंगा बेचारी पढ़ी-लिखी नहीं थी और न ही उसका आदमी। उसके घर में काग़ज़ का एक टुकड़ा भी न था।

गंगा बड़ी समझदार थी। उसने एक मिट्टी का घड़ा फोड़ कर उसके ठीकरे मेरी तरफ़ बढ़ा दिये। मैं कोयले से उर्दू में अपना नाम ''कौसर'' लिख-लिख कर हर रोज़ कई बार दीवार से उस ओर गली में फेंकती रही।

एक दिन मेरी सुनवाई हो गई। किसी पुलिस वाले के हाथ मेरा नाम लग गया।

फिर क्या हुआ, यह लंबी कहानी है लेकिन हाँ इतना ज़रूर कहूँगी कि मुझे गंगा से बिछड़ने का उतना ही दर्द हुआ, जितना मेरे अपनों से। मेरी आत्मा की गाँठ गंगा की आत्मा से बंध चुकी थी; जिसका खुल जाना बड़ा मुश्किल था। मैं अनुमान लगा सकती हूँ कि मेरे जाने के बाद उसके साथ क्या हुआ होगा। जब राजेन्दर मेरी ओर बढ़ता था तो गंगा मेरे ऊपर गिर पड़ती थी लेकिन आज उसे बचाने वाला कौन होगा?

मुझे अपनों से मिले और गंगा से बिछड़े न जाने कितने साल हो चुके हैं। मेरे होश आने के बाद मैंने उस तक ख़बर पहुँचाने की कोशिश की कि मेरे साथ लाहौर आने के बाद क्या हुआ।

आज बड़ा अजीब दिन था मेरे जीवन का। जब मुझे मालूम हुआ कि वह आ रही है लाहौर मुझसे मिलने ... अकेली।

अब उसके आने का दिन आ चुका था। दरवाज़े की घण्टी ने मेरे बदन में रूह सी फूँक दी।

बढ़ कर दरवाज़ा खोला। यक़ीन नहीं होता था। गंगा ज्यों की त्यों वैसी ही हसीन, अनछुई, पाकीज़ा सूरत खड़ी थी मेरे सामने लाहौर में, मेरे दरवाज़े पर। बिल्कुल बेथकी वही मसीहाई आँखों में लिए। हम एक दूसरे से ऐसे लिपटे कि मोहल्ले वालों को छुड़ाना मुश्किल हो गया। मेरे बच्चे आश्चर्य से तक रहे थे कि यह कौन है जिसका माँ ने कभी ज़िक्र तक नहीं किया। आँखों से गंगा यमुना की बाढ़ रुकती न थी।

मैं उसकी सुन्दरता देखकर रह-रह कर सोचती कि यह सच है कि हज़ारों ख़िज़ाओं के बीतने के बाद भी कुछ बहारों की ताज़गी पर कोई असर नहीं होता। हम दोनों पूरी रात जागे बातें करते रहे। बिछड़ने के बाद की कहानियों सुनते रहे, सुनाते रहे। मज़े की बात यह कि न उसने अपने पति के बारे में कुछ बताया और न ही मेरे पति के बारे में कुछ पूछा। रात ख़त्म हो गई। बातें खत्म नहीं हुईं। खिड़कियों से सुबह की रोशनी झलकने लगी। हालाँकि यह सिर्फ़ एक कहानी है, बहुत सी कहानियाँ थीं जो सुनाई नहीं गईं। अचानक गंगा पूछ बैठी।

''हाँ तो कौसर बताओ कि तुम्हारे पति ने तुम्हें स्वीकार किया?''

अभी मैं जवाब नहीं दे पाई थी कि पीछे से मेरी सबसे छोटी बेटी ने मेरे गले में बाहें डाल दीं और पूछा, ''अम्मी जान, ये कौन हैं?''

गंगा की आँखें उसे देखती की देखती रह गईं। बहुत सँभलकर गंगा ने पूछा, ''मुझे ऐसा क्यों लगता है कि मैंने इस बच्ची को कहीं देखा है।''

फिर वह रुककर बोली। ''मेरी बात का जवाब नहीं दिया कौसर।''

मेरे सामने तीन सवाल थे जिसका जवाब एक था, मगर बड़ा मुश्किल।

अचानक पड़ोस के रेडियो से आ रही नग़में की आवाज़ ने तीनों सवालों को दबा दिया।

नूरजहाँ गा रही थीं-

''कहाँ तक सुनोगे, कहाँ तक सुनाऊँ
हज़ारों ही शिकवे हैं क्या-क्या बताऊँ।''

हम दोनों के हाथ एक दूसरे के हाथों में आ गये। मेरे आँसू उसकी आँखों से और उसके आँसू मेरी आँखों से फूट पड़े। गंगा और कौसर की धाराओं का संगम फिर हुलारे लेने लगा।

****

दूसरा नरक

रजनी गुप्त

रजनी गुप्त के कहीं कुछ और, किशोरी का आसमां, एक न एक दिन, कुल जमा बीस, ये आम रास्ता नहीं, अपने अपने कफस उपन्यास हैं और एक नई सुबह, हाट बाज़ार, प्रेम संबंधों की कहानियाँ कहानी संग्रह है। सुनो तो सही (स्त्री विमर्श आलोचनात्मक पुस्तक)। रजनी जी की सम्पादित पुस्तकें हैं- आज़ाद औरत कितनी आज़ाद, मुस्कराती औरतें, आख़िर क्यों लिखती हैं स्त्रियाँ। 'कहीं कुछ और' राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन ओपन यूनिवर्सिटी के स्त्री विमर्श पाठ्यक्रम में शामिल। 'सुनो तो सही' हिंदी साहित्य के इतिहास में शामिल। कथाक्रम (साहित्यिक पत्रिका) में संपादकीय सहयोग। रजनी गुप्त युवा लेखन सर्जना पुरस्कार (उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान द्वारा), आर्यस्मृति साहित्य सम्मान (किताब घर प्रकाशन), 'किशोरी का आसमाँ' पर अमृत लाल नागर पुरस्कार और कलमकार फ़ाउण्डेशन द्वारा अखिल भारतीय कहानी प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार से पुरस्कृत हैं। विभिन्न यूनिवर्सिटी में कई उपन्यासों व कहानी संग्रहों पर शोध कार्य सम्पन्न एवं कई में शोध कार्य जारी।

संपर्क : 5 / 259 विपुल खंड गोमतीनगर लखनऊ

मोबाइल: 09452295943

ईमेल gupt.rajni@gmail.com

बड़ा मासूम होता है बचपन और किशोरवय। न किसी के चेहरे को परखने की अक्ल, न उसकी मंशा को भाँपने वाला भेदक नज़रिया और न आज की तरह वैसा एक्सपोजर। मगर इनसे परे भी एक भाव भाषा होती है, जिसे हम अपनी अबोधावस्था में ही अपने ज़ेहन में कुछ शब्दचित्र जोड़ लेते हैं और कुछ नामालूम किस्म की घटनाएँ स्मृति कोठरी में इतने गहरे जाकर धँस जाती हैं कि तीन दशक बाद भी वही चेहरा हमारी यादों में जस का तस टँका रह गया; जहाँ उसके मन ने आज़ादी का लुत्फ उठाने का जोखिम उठाया तथा सही मायने में लोकतंत्र को जीने का दुस्साहस किया।

बुंदेलखंड के उस कस्बे चिरगाँव की जहाँ हिंदुस्तान के बाकी कस्बों की तरह घर परिवार में आज़ादी के फूल खिलते नज़र आने लगे थे, पर लड़कियों के हिस्से की माटी में आज़ादी के बीज पर्याप्त रूप से नहीं छिड़के गए। सालों पुरानी उस लड़की की जन्मकुंडली बनाम कर्मकुंडली को टटोलने बैठी तो तीन दशक पुराने कस्बे में रहती उस लड़की के हिस्से आई थी काँच जैसी टूटी-फूटी आज़ादी की किरचनें, जिस पर पैर रखकर वह लहुलुहान होती रही। जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण पायदान पर पैर टेके लड़की किसी भी पल धम्म से गिरकर अपनी जान जोखिम में डालने निकल पड़ी थी अकेले ही अपने बूते।

प्रेम के उस अद्भुत, अविस्मरणीय और रोमांचक पजल के फेर में फँसी लड़की बाहर निकल ही नहीं पा रही थी सो उसका हश्र देखकर बाकी लड़कियाँ सिर नवाए चुपचाप माँ-बाप के रटाए पाठ सुमिरती उनकी पकड़ाई राह पर चलने में ही अपनी भलाई समझतीं। वे अपने बेशकीमती किशोर वय को नकारते हुए यथास्थिति में जीने को ही अपनी नियति समझ जीती रहतीं। पर उसने दुर्द्धर्ष योद्धा की तरह अपने चुने रास्तों पर अपने दम पर चलने का जोखिम उठाया और अपनी जान हथेली पर रखकर उस अँधेरे बियावन में दूर से टेरते अपने प्रेमी की आवाज़ सुनकर उसी तरफ चलने का साहस किया। हाँ, इस खतरनाक राह पर चलने का शौक था किरन को, जिसे सजने सँवरने का भी खूब शौक था। फिर नए कपड़े पहनकर गुड गर्ल का मोह तजकर अपनी मर्ज़ी से अपनी ज़िन्दगी को मुट्ठी में दबाकर जो जी में आए, वह वही करती। मैं अक्सर उसे ड्रीम गर्ल कहकर बुलाती। वह सचमुच खूबसूरत थी - दो लंबी चोटियाँ, छरहरी देह और लंबे कद की किरन का रंग साफ आसमां

में सुबह के समय चाँद जैसे कपड़े पहने सूरज की तरह उजला था। उसकी खूबसूरत आँखें बात-बात में चमकती। बात-बात पर खी-खी करके बिखरती खीलों जैसे धवल हँसी के दमकते हुए अनगिनत टुकड़े वह बेतरतीबी से यहाँ- वहाँ बिखेरती जाती। ज़िन्दगी से भरी उसकी बड़ी-बड़ी आँखों में जीने का जोश महकता रहता सो जब मैं उससे पूछती - 'तू शादी के लिए मना क्यों कर रही है' तो फट से हँसते हुए बोल पड़ी - 'दीदी, उस बूढ़े और कलुए संग धुर देहात में नही टिकूँगी मैं, हाँ कहे देती हूँ।'

'यदि फिर भी तेरी बात नहीं सुनी गई तो?'

'अगर जबरन शादी कर दी गई तो शादी के बाद पक्का तोड़ दूँगी। पलटकर फिर कभी नहीं जाऊँगी वहाँ। हाँ, पक्की बात कहे देती हूँ।'

सचमुच, वक्त ने उसे कड़ी टक्कर दी। उसने वही किया जैसा सोचा था। जब उसे घर की कोठरी में बंद करके शादी के लिए मजबूर किया गया तो वह खामोश शिला सी बन गई। मगर जब एक बार ससुराल से लौटी तो फिर कभी जाने का नाम नहीं लिया। अब वह कैसे अपने सपनों को नए पंख देगी, कंटीले सवाल उसकी आँखों में जब तक उगने लगते मगर बा-बात पर खी खी हँसी कितना कुछ कह भी तो देती थी।पति की बात पर ज़ोरदार ठहाका लगाते हुए कान में फुसफुसातीं- 'जानना चाहती हो पूरा सच तो ध्यान से सुन। यहाँ , वहाँ, इतनी बेरहमी से काटता था ससुरा जैसे मैं कोई जानवर होऊँ। किस कदर रोंद कर रख दिया नासपीटे ने। नौकरानी की माफिक दिन भर घर के काम में खटती और रात होते ही वो जानलेवा घिनौनी मालिश। ओह, उसे याद करते ही उबकाई आने लगती। अब तुम्हें क्या क्या बताएँ बिन्नू, नामर्द था वो। सोच लिया है कि चाहे मेरी जान निकल जाए पर वहाँ जाने का तो सवाल ही नहीं। हाँ किसी पर बोझ नहीं बनूँगी, सो अस्पताल वाली बहन जी से बात कर ली है। उन्होंने कहा है कि वे मुझे नर्स बनवा देंगी तो खुद ही कमाएँगे, खाएँगे। ठसक से रहेंगे, ठीक है न?' बताते हुए फिस्स से हँस दी। उसकी वे बड़ी-बड़ी आत्मविश्वासी आँखों में गज़ब का तेज था।

मुहल्ले के जिस किसी के घर में कोई फंक्शन होता, किरन को विशेष रूप से बुलाया जाता और वह बेझिझक वहाँ गाने-बजाने पहुँच जाती। वह ढोलक पर ज़ोरदार थाप देते हुए ऊँची आवाज़ में सुर उठाकर गाने में घंटों मगन रहती। मिलते ही सबसे पहले हँसती फिर कान में कुछ कहकर खिखयाने लगती। ऐसी अल्हड़ थी वह। माँ-बाप जब वापस ससुराल भेजने पर ज़ोर देने लगे तो वह तुनककर जवाब देती - 'जब पहले मना किया था तब तो ज़बरदस्ती करके मेरे गले में ढोलकनुमा बुड्ढे को टाँग दिया पर अब आप लोग ज़बरदस्ती नहीं कर सकते। हाँ, वरना जान दे दूँगी।'

उसकी वे बड़ी-बड़ी आँखें, हास-परिहास की अलग-अलग मुद्राएँ, बेफिक्र अंदाज़ में अपने दुखों पर हँसते हुए ऐसे बताने लगी गोया ये दुख उसका नहीं किसी और का दुख हो, जबकि उसी की जीती जागती कहानी चल रही थी। बताने लगी कि हमने अस्पताल में नर्स का कोर्स करने का फार्म डाल दिया था सो जिस गाड़ी को पकड़कर कानपुर इंटरव्यू देने गई, वहीं टकरा गया था अंकुर, जिससे उसकी दोस्ती जल्दी ही पनपती गई; लेकिन शादी के नाम पर उसने दोटूक लहजे में मना कर दिया।

'आख़िर क्यों पीछे पड़े रहते हो मेरे? एक से ही पेट भर गया मेरा तो। न, बिना शादी के ऐसे वैसे संबंध कतई नहीं। क्या समझे ?' उसने उसकी आँखों में आँखें डालते हुए साफ लफ़्ज़ों में कह दिया।

'मगर मेरा पेट तो नही भरा मैडम। देखो, अगर एक आदमी ठीक नहीं निकला तो इसका मतलब ये तो नहीं कि बाकी दुनिया के लोग वैसे ही हैं। तुम्हारे माँ-बाप ने कराई हड़बड़ी में शादी जबकि तुम इस शादी का मतलब ही ठीक से नहीं समझती थी।'

'इसी प्रसंग की चीर-फाड़ क्यों करते रहते हो बार-बार? उस सड़े गले चैप्टर को तो कब का ज़िन्दगी से काटकर फेंक चुकी हूँ। बस, बात खतम। अब इस घनचक्कर में नहीं पड़ना। समझे थानेदार साब।'

उसके बाद अंकुर उसके घर आने जाने लगा। सबसे पहले पिताजी को विश्वास में लेकर खेतीबाड़ी से जुड़े मुकदमों में अपने प्रभाव के इस्तेमाल से तमाम पेचीदे मसले सुलझाए फिर अम्मा के पास जाकर उनके कान भरने शुरू कर दिए- 'ऐ अम्मा, किस बुड्ढे संग बाँध दिया आपने इस फूल सी सुकुमार किरन को ? देखो तो, चिंता के मारे सूखकर काँटा हो गई है।'

'ठीकै कह रहे। ससुराल जाने के नाम पर ही रोने लगती पर क्या करूँ बेटा, सबके अपने-अपने पूर्व जन्मों का हिसाब-किताब होती हैं जिंदगानी। पिछले जनम के कर्मो का फल भुगतने जन्म धरता है इंसान।' हाथ से मलती तमाखू को मुँह के दाएँ तरफ धकियाती हुए बोलीं-'बचुआ, तू काहे इसकी फिक्र में दुबलाय रहा? तू करेगा इससे दूजा ब्याह?'

'हाँ, हाँ अम्मा, करुँगा, पक्का करुँगा....' कहते हुए वह उनसे लाड़ जताते हुए गले में बाँहें डाल नजदीकियाँ बढ़ाने लगा।

'हूँ.....' कहकर उन्होंने लंबी चुप्पी की चादर खेंच ली। धूप छाँही वक्त आगे सरकता रहा और धीरे-धीरे घर वाले भी समझ गए कि ये वहाँ नहीं जाएगी सो वहाँ से राजीनामा लिखवाकर संबंध खारिज करवा दिया गया। न जाने उसकी बातों का जादू था या उस उम्र का तूफानी वेग कि उसके द्वारा शादी से मनाही पता नहीं कब और कैसे हामी में बदल गई।

आर्यसमाजी ढंग से शादी हुई थी, जिसमें अंकुर के कुछ दोस्त व किरन के घर वाले शामिल हुए। कुछ महीने यूँ ही खेलते-कूदते बच्चे की तरह छलांग लगाकर निकल गए। वह अभी तक अंकुर के घर नहीं जा पाई थी, न ही अंकुर के घर वाले इस शादी में शमिल हो पाए। पूछने पर एक ही गोल-मोल जवाब देता- 'वे लोग इस शादी के लिए कैसे भी तैयार ही नहीं हो रहे सो आप ही लोगों को करवानी पड़ेगी ये शादी। दूरस्थ गाँव में जाने के नाम पर ही वह कोई न कोई बहाना बनाकर टाल देता। मगर एक दिन अचानक कुछ सरकारी काम से उसे वहाँ जाना पड़ा और - मैं भी

चलूँगी, अपने रूठे सास-ससुर को मनाने का हक है और हमें मनाना आता है।' का तर्क देकर ज़िद करके साथ लग ली। ससुराल में आते ही सबसे पहले अंकुर ने जिससे परिचय कराया- 'ये है तुम्हारी दीदी सरीखी जेठानी, पैर छुओ इनके।'

यंत्रवत जैसे ही वह उनके पैर छूने लगी तभी उनकी आँखों से टप्प से गिरी थीं वे गर्म बूंदें - 'क्या हुआ दीदी, आप रो रही हैं ? क्या हुआ ? कुछ भूल चूक ?'

'नहीं, नहीं, कोई बात नहीं.....' रूखे मन से दो शब्द बोलकर वे भीतरी कुठरिया में चली गई और धड़ाम से दरवाजा बंद कर लिया।

'वो मेरी अम्मा है और ये हैं मेरे पापा मगर आप कौन ?' उस बच्चे की आवाज़ ऐसी लगी जैसे टूटती दीवार से अनायास गिरने लगे तड़-तड़ पत्थर उसके कानों को सुन्न करने लगे हों। सुनते ही अचानक लगा जैसे हँसते खिलखिलाते बच्चे को किसी ने ज़ोर से ठोकर मारकर पटक दिया हो।

बस यहीं से शुरूआत हुई उसके दूसरे नरक की।

अवाक, स्तब्ध, अवसन्न रह गई वह और फटी-फटी आँखों से अंकुर की तरफ देखते हुए पूछा- 'सच कै रिया ये लड़का ? बोल, बक्कर कुछ ?' मगर वह उसे खींचकर बाहर ले गया और रिरियाते हुए बोला - 'तू मुझे समझने की कोशिश कर प्लीज़, तेरी पक्की नौकरी की बात हो चुकी है। घर वालों ने बचपन में ही बाँध दिया था इस अनपढ़ गँवार से । क्या करता ? डर के मारे तुझे बताने की हिम्मत ही नहीं बटोर पाया। जानता था, तुझे बताऊँगा तो तू सह नहीं पाएगी। माफ कर दे मुझे।'

किरन ने जो टुकड़ों-टुकड़ों में बताया, सुनकर लगा जैसे अमावस की अँधेरी रात में अकेले चलते-चलते वह किसी अंधकूप में जा गिरी हो। किसी तरह खुद को टटोलते-टटोलते कुएँ की मुंडेर पर लटकते रस्से को पकड़ना चाहा परंतु यह क्या ? घिसा रस्सा कमज़ोर था सो कुएँ की झड़ती दीवारों का सहारा लेना चाहा मगर वे भी भुर-भुरी हो चुकी थीं, ऐसे में क्या करती वह ? किसी तरह अपने को समझाया और अगली सुबह वापस आकर रोते-रोते पूरी दास्ताँ सुनाती रही, किस तरह अंकुर उससे कोरे कागजों पर साइन कराता रहा। न जाने कब से उसे अँधेरे में रखकर किया यह सब। वह शादीशुदा दो बच्चों का बाप निकला, सुनकर पिताजी सदमे में आ गए। मेरा दुर्भाग्य कि तब तक पेट में यह बच्ची आ चुकी थी सो शांत मन से सोचा कि इसे बाप का नाम तो चाहिए। अंकुर बात-बात पर सफाई देने लगा- 'जैसे धर्मेंदर ने हेमा मालिनी से शादी की थी, वैसे ही हम भी तो ज़िंदगी चला सकते हैं ? कोई न कोई रास्ता निकाल लेंगे।'

रोते-रोते उसके आँसू सूख चुके थे पर आवाज़ में सख्ती आ गई 'ज़रा भी दाँवपेंच, चालाकी या होशियारी की तो तू जानता है कि मैं किस हद तक जा सकती हूँ, समझ ले मुझे ठीक से। दफ्तर से पूरा कच्चा चिट्ठा निकलवा लूँगी तेरा और ज़्यादा तीन पाँच की तो तुझे नौकरी से निकलवा दूँगी और जो तूने हाथ उठाने की हिम्मत की तो घरेलू हिंसा में रपट लिखवाकर जेल में ठुँसवा दूँगी। समझे तुम, हाँ,' उसके गुस्से में चीखती आवाज़ सुनकर वह उसे खींचकर छत पर ले गया और आश्वासन की पुड़िया चटाने लगा

- 'किरन, तू जो कहे, सब मंजूर है पर मुझे, पर चीखना चिल्लाना बंद करेगी? तेरे पैर पड़ता हूँ , न , कोई कानून नहीं तोड़ा मैंने, कल बात करता हूँ वकील से। सब्र कर तू। देख, कुछ न कुछ रास्ता निकालता हूँ , मुझ पर भरोसा रख?'

'भरोसा ? ये किस चिड़िया का नाम है, तू जानता है भरोसा ? घटिया और धोखेबाज़ आदमी पुलिस में नौकरी करता है , है न अजीब बात?' घायल शेरनी की तरफ बिफरते हुए बोल पड़ी वह।

'देख, चुप कर। तमीज़ से बात कर। मैं कहीं भागा नहीं जा रहा सो इतना लाल-पीला होने की ज़रूरत नहीं। चल, अब यहाँ से घर चलते हैं। तू माँ बनने वाली है न तो सबसे पहले तेरा चैकअप कराएँगे।' वह उसे हाथ में लेकर पोटने लगा।

अपनी दास्ताँ सुनाते-सुनाते अचानक चुप हो गई तो मैंने पूछा - 'कहाँ है आजकल अंकुर?'

उसके साथ मुश्किल से साल भर खिंच पाई गाड़ी। वह धीरे-धीरे हमसे कन्नी काटने लगा। आए दिन किसी न किसी बात पर उलझ जाता या किसी बहाने से यहाँ से खिसक वहीं पहुँच जाता। उसका ये गैर ज़िम्मेदाराना रवैया नहीं सह पाती थी मैं सो एक दिन ऐलान कर दिया- 'अब जा मर वहीं, जहाँ जा रहा है, वहाँ से लौटकर मत आना। खबरदार जो फिर कभी मेरी बेटी से मिलने की कोशिश की। पाल लूँगी अपने दम पर। टुकड़खोर, भड़ुआ साला..... मुँह तक भर आई गालियों को फेंककर बोली - 'दीदी, मर्द जात बड़ी बेशर्म होती है। वो अभी भी मेरा संग साथ चाहता है सो गाहे ब गाहे अस्पताल चला आता है। कभी मेरे पीछे बच्ची से मिलने आ धमकता पर कितना भी रो पीट लूँ , लेकिन ज़िंदगी का पहिया जब पटरी से एक बार उतर जाए तो फिर कभी जस का तस पकड़ में नही आता। शायद अम्मा ठीक कहती थी, न जाने कौन से जन्म के दुष्कर्मों का फल भुगत रही हूँ।'

'ऐसा कहकर तू खुद को अपराधबोध में मत डाल किरन। तूने तो उन परिस्थितियों का डटकर मुकाबला किया और उस कायर से अलग रहने का फैसला लिया जो काबिले तारीफ़ है।' अनायास मेरे मुँह से सराहना सुनकर उसके चेहरे पर विलुप्त आभा फिर से फैलने लगी सो शांत आवाज़ में बोली - 'दीदी, ये बच्ची है न, इसे पढ़ा-लिखा कर काबिल बनाना ही मेरे जीवन का एकमात्र उद्देश्य बचा है सो वही करूँगी। बाकी सब ठीक ही है?'

तब से अब तक पूरे बीस सालों बाद उसे देख पा रही हूँ, जिसकी बेटी आज बैंक में प्रबंधक पद पर है। सचमुच सालों बाद जब किरन से मिली तो उसके चेहरे पर सुकून की सफेद चाँदनी देखकर ऐसा लगा जैसे अमावस की काली रात के अँधेरों से घिरी रहने के बावजूद आसमान में न जाने कौन सा ऐसा सुराख हो गया जिससे धरती अलौकिक रोशनी से चमकने लगी और उसकी बच्ची को देखकर मेरा दिलोदिमाग भी जगर मगर हो उठा।

****

एक सच्ची मुच्ची की प्रेम कहानी

सुभाष चंदर

सुभाष चन्दर की व्यंग्य की 11 पुस्तकों सहित कुल 41 पुस्तकों का लेखन। चर्चित कृति हिन्दी व्यंग्य का इतिहास। व्यंग्य कृतियाँ हैं- अक्कड़-बक्कड़ (व्यंग्य उपन्यास), इंसानियत का शो, कल्लू मामा ज़िंदाबाद, आइये स्वर्ग चलते हैं, थोड़ा हँस ले यार, बजरंगी लल्ला की बरात, श्रेष्ठ हास्य व्यंग्य। सुभाष जी इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय पुरस्कार, भारत सरकार, डाक्टर मेघनाथ साहा पुरस्कार भारत सरकार, व्यंग्य श्री सम्मान 2016, शरद जोशी सम्मान 2015 ,उ.प्र .सरकार, अट्टहास सम्मान, हरिशंकर परसाई सम्मान आदि प्राप्त कर चुके हैं

संपर्क : जी 186 ए, एच आई जी फ्लैट्स, प्रताप विहार, गाज़ियाबाद(उ.प्र.) - 201009

मोबाइल: 09311660057, 08826525302 (व्हाट्सेप)

कहानी कुछ ऐसे शुरू करता हूँ।

एक शहर में एक अदद लड़का था और एक नग लड़की थी। लड़का और लड़की दोनों ही इश्किया फिल्मों के शौकीन थे। इश्किया फिल्म देखकर आहें भरते थे और रोज़ प्रार्थना करते थे - हे भगवान् काश हमें भी ये निगोड़ा इश्क हो जाये।

लड़के ने तो बाकायदा मन्नत माँग रखी थी कि जिस दिन वो इश्क के इम्तिहान में पास हो जायेगा। ठाकुर जी के मंदिर में सवा किलो देसी घी के लड्डू चढ़ाएगा। इसके लिए वह काफ़ी यतन भी करता था। मसलन वह प्रचलित फैशन के हिसाब से बालों का फुग्गा बनाता था, रंगीन छींटदार शर्ट पहनता था, उसके नीचे घिसी हुई जीन्स धारण करता था। दिन हो या रात, आँखों पर काला चश्मा चढ़ाए रखता था। दिन में कई घंटे आइने को भेंट करता था। उसे कई फिल्मों के डायलॉग याद थे जिन्हें वह अपनी भावी प्रेमिका को सुनाने के लिए बेताब था। पर उसकी यह मनोकामना सिद्ध नहीं हुई। हारकर उसने एक प्रेम विशेषज्ञ से सम्पर्क किया। ये लवगुरू महाराज वाकई गुरू थे, एक अदद बीबी और नौ प्रेमिकाओं को एक साथ अफोर्ड करते थे। कहीं कोई लफड़ा भी नहीं होने देते थे। ऐसे महानुभावों के तो दर्शन करने से भी पुण्य मिलता है। सो हमारा हीरो, उस लव गुरू की शरण में पहुँचा। जाकर सीधे उसके चरणों में गिर गया।

लव गुरू ने पहले लड़का देखा, उसका जुगराफिया जांचा, उसकी जेब का हाल मालूम किया। इश्क पर उसके इन्वेस्टमेंट की सम्भावनाएँ तलाशीं। तब जाकर उवाचे- 'बालक, तेरा भविष्य उज्ज्वल है। इश्क की बिसात पर तेरी गोटी ज़रूर फिट बैठेगी। मैं तुझे एक लव लैटर डिक्टेट करा देता हूँ। तू इसकी कम्प्यूटर पर सात आठ कॉपी तैयार कर लियो और जहाँ-जहाँ तुझे थोड़ी सी भी संभावना लगे, इन्हें बाँट दियो। कामदेव ने चाहा तो तू जल्दी ही इश्क के मैदान में कबड्डी खेलने लगेगा।' हीरो ने डिक्टेशन ली। पत्र पढ़कर उसकी बाँछें खिल गई। उसके मुँह से बेसाख्ता निकल पड़ा - 'ये मारा पापड़वाले को।' उसने लव गुरू के दुबारा पैर पकड़ लिया। लव गुरू प्रसन्न भए। उसे विजयी भव का आशीर्वाद दिया। लड़का जब जाने लगा तो उसे पीछे से टोककर बोले- 'बालक इश्क के मैदान में एक बार घुस जाने के बाद कदम पीछे मत हटाईयो। हो सकता है कि लड़कियों के भाई-बाप, नाते-रिश्तेदार तेरे दो-चार दाँत तोड़ दें। तेरा एकाध हड्डी चटका दे। पर उनसे डरने का नहीं है। दाँत नकली लग सकते हैं, हड्डी दुबारा जुड़ सकती है पर इश्क का चांस एक बार निकल गया तो आसानी से हाथ नहीं आएगा।' कहकर लव गुरू ने पान का बीड़ा मुँह के हवाले कर

लिया। लड़के ने बड़े श्रद्धाभाव से गुरू की बातें गाँठ में बाँध लीं और अपने कर्तव्य पथ पर आगे बढ़ गया।

पहले राउन्ड में उसने प्रेम-पत्र की सात कॉपियाँ कम्प्यूटर पर तैयार कराई। तीन प्रतियाँ उसने कॉलेज में, दो पड़ौस में और दो उस टाइम सेंटर में इंवेस्ट कर दीं, जहाँ वह टाइप सीखने जाता था। सात कन्याओं को प्रेमपत्र वितरित करने के बाद वह उनके जवाब के इंतज़ार के काम में लग गया। छह पत्रों का जवाब जल्दी आ गया। कॉलेज वाली दो कन्याओं ने तो उसे लगे हाथ थप्पड़ों का भुगतान कर दिया तो तीसरी कन्या के भाई और उसके दोस्तों ने यह काम सम्पन्न किया। हीरो का मन कॉलेज से तो खट्टा हो गया पर मीठे की आशा अब भी थी क्योंकि पड़ोस और टाइप सेंटर के विकल्प अब भी खुले थे। अगले दिन तक पड़ोस का भी जवाब आ गया। एक कन्या ने बताया कि वह पहले से ही इन्गेज्ड है, इसलिए सॉरी। दूसरी की अम्मा, हीरो की अम्मा से मिलने आ पहुँची। कहना ना होगा कि प्रेम पत्र उसके हाथ में था फिर क्या था अम्मा ने पहले अपना माथा ठोका, फिर लड़के को। मामला फिर भी काफ़ी सस्ते में निपट गया क्योंकि अम्मा ने सिर्फ चार-पाँच चप्पलें मारी और गालियाँ भी एक दर्जन के करीब ही दीं। अब उसकी आशा टाइप सेंटर पर केन्द्रित हो गई। वहाँ दो पत्रों का इन्वेस्टमेंट था। एक लड़की ने तो उसे अपनी शादी का कार्ड थमा दिया। मतलब यहाँ भी भैंस पानी में थी। पर सातवाँ पत्र जिस पर कन्या रत्न के पास था, उसी पर सारी उम्मीदें टिकी थीं।

अब कहानी को थोड़ा लड़की यानी कहानी की हीरोइन की तरफ मोड़ देता हूँ। पहले ही बता चुका हूँ कि लड़की फिल्मों की शौकीन थी और उसका पसंदीदा गाना भी था- ऐ काश किसी दीवाने को हम से भी मुहब्बत हो जाए। वह दिन में तीन बार कपड़े बदलती थी और तीस बार आईना देखती थी। मतलब हर तरह से हीरोइन बनने की पात्रता रखती थी। वैसे उसके मन मंदिर में तो सलमान खान बसा था पर अपनी व्यस्तताओं के कारण न तो वह उसका मोबाइल चार्ज करा सकता था, ना अपनी मोटर साईकिल पर मॉल ले जा सकता था और तो और वह उसे पिक्चर भी नहीं दिखा सकता था। सो इन हालातों में उसे एक फुलटाइम आशिक की ज़रूरत थी, जो ये सब पात्रताएँ पूरी कर देता। वह हमेशा सपनों में देखती कि उसका आशिक उसे कनॉट प्लेस में चाट-पकौड़ी खिला रहा है, महँगे-महँगे गिफ्ट दिला रहा है, बॉक्स में फिल्में दिखा रहा है और इनसे समय बचने के बाद प्यार की गाड़ी भी हाँक रहा है। सो वह एक अदद इश्क के लिए बेचैन थी और खासी बेचैन थी। इसी बेचैनी के हालातों में उसे हमारे हीरो का लवलैटर मिल गया। बस फिर क्या था, उसका दिल मीटरों उछल गया। पर उसने दिल के भावों को चेहरे पर आने नहीं दिया। रात भर में उसने प्रेम पत्र को बीस-पच्चीस बार पढ़ा। चालीस-पचास बार चूमा और फिर पिया मिलन की आस वाला गाना गाकर सो गई। कहना ना होगा कि आज उसके सपने में सलमान खान की जगह अपना हीरो गाना गा रहा था।

अगले दिन लड़का और लड़की... नहीं अब उन्हें हीरो और हीरोइन कहेंगे.... तो अगले दिन हीरो-हीरोइन पत्र में लिखी जगह पर मिले। हीरो सच्चे भारतीय आशिक की तरह समय से आधा घंटे पहले पहुँच गया। अलबत्ता हीरोइन ने प्रेमिका के किरदार की लाज रखी। वह सिर्फ एक घंटे लेट पहुँची। हीरो ने धड़कते दिल से हीरोइन को गुलाब भेंट किया। लड़की ने थोड़ी ना-नुकुर के बाद स्वीकार कर लिया। उसके बाद बातों का सिलसिला चल पड़ा। कुछ संवाद यहाँ प्रस्तुत है... कृपया ध्यान दें कि कोष्ठक के संवाद पात्रों के मन से फूट रहे हैं-

-क्यों जी... इतनी चुप क्यों हो... कुछ बोलो ना?

-(चुप्पी)... क्या बोलूँ... आपने तो मुझे फँसा दिया है। आप जानते हैं मैंने तो इस बारे में कभी सोचा भी नहीं था। सच्ची... मैं ऐसी लड़की नहीं हूँ (मन में सोचती तो हर वक्त रहती थी, पर किसी कमबख़्त ने घास ही नहीं डाली)

-सच कहूँ जी -मैं भी ऐसा लड़का नहीं हूँ - मेरा भी यह पहला प्यार है। मैंने भी आज तक किसी लड़की की तरफ आँख उठाकर नहीं देखा (जब भी देखा, टकटकी लगाकर देखा)

-फिर मुझमें ऐसा क्या था...खिस्स...हँसने की आवाज़....

-आप में तो वो बात है जो दुनिया की किसी लड़की में नहीं। आपकी आँखें प्रियंका चोपड़ा जैसी है, नाक कैटरीना जैसी और होंठ तो बिल्कुल करीना जैसे हैं- (बोलना तो आगे भी कुछ चाहता हूँ... पर पहली मुलाकात में... नो... नो... पाँच सात मुलाकात के बाद ही कुछ बोलूँगा... हो सका तो...)

-हुम्म (शर्माकर) - मैं कहाँ ऐसी हूँ... मैं तो बिल्कुल सिम्पल सी हूँ...पता नहीं, आपने मुझमें क्या देख लिया (कमबख़्त मेरी तुलना इन फटीचर हीरोइनों से कर रहा है, ये तो मेरे आगे पानी भरती हैं... दो चार मुलाकातें और हो जाने दे... फिर देखूँगी, तू कैसे हीरोइनों का नाम लेता है)

-ये आप क्या कह रही हैं। मैं तो पहली नज़र में ही आप का दीवाना हो गया था। सोचता था कि प्यार करूँगा तो सिर्फ आपसे ही... वरना जीवन भर कुँआरा रहूँगा (कब से सोच रहा था, ये डायलॉग मारूँगा, पर ससुरा मौका ही नहीं मिला। अब तुम्हें क्या बताऊँ कि सात को लव लैटर दिए थे, पसंद तो मुझे अपनी क्लास फैलो तृष्णा थी... पर ठीक है जो मिल गया)

-क्या हुआ... जी... किस सोच में पड़ गए। अच्छा, अभी आपने कहा था कि मैं अगर आपको नहीं मिलती तो आप जीवन भर कुँआरे रहते। क्या इतनी दूर की सोच रहे हैं... बोलिए ना चुप क्यों हैं?

-ऐं... (अब क्या बोलूँ, घबराहट में ऐसी बेवकूफियाँ तो हो ही जाती है, गज़ब कर दिया- अपने पैरों पर पहली मुलाकात में ही कुल्हाड़ी मार ली। लड़की सैंटी हो गई तो आफ़त आ जाएगी)

-सुनो जी... क्या सोच रहे हैं?

-कुछ नहीं... अब बताइये... आपको देखने के बाद सोचने को रह ही क्या जाता है। वो क्या कहा है शायर ने... तुमको देखें कि तुमसे बात करें (बात तो थोड़ी बनी

प्यारे)

–खिस्स... आप भी ना... (शर्माना)... अच्छा सुनिए जी... मुझे शिप्रा मॉल जाना है। एक दो ड्रेस खरीदनी है– आप मुझे वहाँ छोड़ देंगे (पट्ठे पता चल जायेगा मॉल में कि तू कितने पानी में है)

–(ड्रेस खरीदवायेगा तो मामला फाइनल वरना जै राम जी की, सोच लूँगी, कोई बहाना) हाँ जी बोलिए छोड़ देंगे, मोटर साइकिल से।

–अरे... क्यों नहीं... क्यों नहीं... मोटर साइकिल आपकी... हम आपके, चलिए ना... इसी बहाने आपके साथ कुछ वक्त और गुज़र जाएगा (वक्त तो गुज़रेगा बेटे, पर सारा जेब खर्च स्वाहा हो जाएगा, लोंडिया को ड्रेस तो दिलवानी ही पड़ेगी... आख़िर फर्स्ट इम्प्रेशन का मामला है)

–चलिये जी... क्या सोचने लगे... (ये तो सोचने लगा, कमबख़्त कहीं बाहर छोड़कर ही ना चला जाए)

–आइए जी... बैठिये ... मोटर साइकिल की घर्र–घर्र...

–सुनिए... थोड़ा आगे सरककर बैठिये... पिछले पहिये में हवा कम है...

–जी... ठीक है... (ये तो काफी शरारती लगता है... चलो अपना क्या जाता है।) मोटर साइकिल की घर्र–घर्र...

आगे की कहानी में जुड़ता है। हीरो हीरोइन के साथ मॉल जाता है। ड्रेस की दुकान के पास हीरो के कदम ठिठकते हैं, लड़की तड़ाक से हीरो का हाथ अपने हाथ में ले लेती है। नतीजा अच्छा निकलता है। हीरो तीन ड्रेस खरीद देता है। हीरोइन खुश हो जाती है और मोटर साइकिल पर हीरो से चिपककर बैठती है। हीरो का इन्वेस्टमेंट सार्थक हो जाता है।

तीन चार मुलाकातों में इश्क काफी आगे बढ़ता है। हीरो हीरोइन का मोबाइल चार्ज कराता है। चाय पकौड़ी का रसास्वादन करता है। सिनेमा दिखाता है। गाहे–बगाहे गिफ्ट देता है। बदले में किसी पार्क के कोने में या सिनेमा हॉल के अँधेरे में छुआ–छुई, पुच–पुच का सुख पाता है। हीरोइन खुश है। हीरो इश्क की परीक्षा में पास हो गया। हीरो अपने खर्चे का हिसाब लगाता है, इश्क का सुख उसे खर्चे से बड़ा लगता है और लगभग साल भर तक लगता रहता है। लड़की सुरक्षित दूरी की सीमा को पीछे छोड़कर आधुनिक सीमाओं में प्रवेश करती है। यानी इश्क की गाड़ी अपनी मंजिल तलाशने लगती है।

कहानी कुछ ज़्यादा ही फुटेज ले रही है, सो अब थोड़ा दी एंड की ओर बढ़ा जाए।

एक दिन लड़की के रिश्ते वाले घर आते हैं। उन्हें लड़की पसंद है। लड़का अपने बाप की इकलौती संतान है। बैंक में प्रोबेशनरी ऑफिसर है। घर का मकान है। देखने–सुनने में अच्छा है। हीरो से अच्छा। रिश्ता पक्का हो जाता है। हीरोइन और हीरो फिर मिलते हैं। उनके डायलॉग (मन वाले कोष्ठक के डायलॉगों के साथ पाठकों की सेवा में प्रस्तुत हैं)

–सुनो जी.... आज मेरा मन बहुत खराब है।

–क्या हुआ जानू?

–पता है आज सुबह मेरा रिश्ता पक्का हो गया (ऊँ ... ऊँ ... ऊँ...)

–हे भगवान्... ये किस की हमारे प्यार की नज़र लग गई। (गहरी साँस) ... रोओ मत... ठीक करेगा। भगवान् तो जो करता है, ठीक ही करता है। मैं तो सोच रहा था कि मेरे गले ना पड़ जाए, वरना बापू बहुत मारता, लाखों का दहेज मारा जाता)

–तुम बताओ जी... अब मैं क्या... मन तो करता है कि ज़हर खाकर जान दे दूँ (सिसकियाँ) (जान दें मेरे दुश्मन)

–अरे... अरे... रोओ मत... तुम रोती हो तो दर्द मेरे दिल में होता है (वाह क्या फंडू डायलॉग मारा है प्यारे)

–सच्ची कहती हूँ... मैं तुम्हारे बिना एक पल भी नहीं रह पाऊँगी... तुम कहो तो मैं शादी के लिए इंकार कर दूँ... तुम्हारी नौकरी लगने तक मैं इंतज़ार कर लूँगी (निठल्ले तू बस इश्क के मतलब का ही है, वरना क्या अब तक नौकरी ना पा जाता, तेरा इन्तज़ार करे मेरी जूती। मैं तो बैंक अफसर की बीबी बनूँगी) बोलो ना जी... क्या कहते हो?

–(गहरी साँस)– मैं क्या कहूँ जानू... मैं तो किसी लायक हूँ ही नहीं, माँ–बाप के टुकड़ों पर पल रहा हूँ .. और पता नहीं... नौकरी कब तक मिलेगी... (मिल भी जाए तो क्या तुझसे शादी करुँगा, तेरा कंजूस बाप कुछ देगा भी)

–(सिसकियाँ)– तो तुम क्या कहते हो... मैं जीते जी उस नर्क में गिर जाऊँ। सच कहती हूँ जी तुम्हारे बिना तो मैं एक पल भी नहीं जी पाऊँगी.... (गहरी साँस)

– क्या कहा जानू... मज़बूरी है। तुम मेरा इन्तज़ार भला कब तक करोगी। तुम्हारी दो बहनें और भी तो हैं... मेरी मानों तो... (गहरी साँस)... तुम शादी कर ही लो (सिसकियाँ)

–सुनो जी... अब तुम रोने लगे... प्लीज़ मत रोओ ... देखो, हम दोनों एक–दूसरे से हमेशा प्यार करते रहेंगे, शादी के बाद भी।

–सच कहती हो ना... मुझसे शादी के बाद भी प्यार करोगी...

–हाँ हाँ ... हमेशा करुँगी .. मेरे देवता... (सिसकियाँ) तो जानू अब पक्का रहा ना कि मुझे अपने घर वालों की मर्ज़ी से शादी करनी पड़ेगी। रिश्ते को हाँ कर दूँ ना... (रिश्ता तो पहले ही पक्का हो गया है, लल्लू, मैं तो तुझे सिर्फ ख़बर कर रही हूँ।)

–हाँ .. हाँ... हाँ कर दो... सच कहूँ, मेरा दिल फटा जा रहा है (अच्छा हुआ, बला टली)

–तो जानू... अब में चलूँ ... लड़के वाले अब भी घर पर हैं....

–ठीक है जानू... तुम जाओ...

–अच्छा चलती हूँ... सुनो... मैंने सुना है लड़के वाले शादी के लिए जल्दी कर रहे हैं अगले महीने ही शादी हो जाएगी। सुनो... अब हम आगे नहीं मिल पाएँगे... मेरी मज़बूरी समझ रहे हो ना... प्लीज़... समझ लेना... (लल्लू, ये सब मैं इसलिए कह रही हूँ कि तू शादी में कोई बवाल ना कर दे)

–हाँ ..हाँ ... जानू... मैं नहीं चाहता कि बदनामी से तुम्हारी शादी टूट जाए। ठीक है तुम्हारी ख़ातिर मैं अपने दिल पर पत्थर रख लूँगा... पर तुमसे कभी नहीं मिलूँगा... बाय... जानू...

–बाय मेरे राजा... मेरे हीरो... अच्छा हाँ... सुनो... मेरा मोबाइल रिचार्ज करा देना... चलती हूँ ...

हीरोइन चली जाती है। हीरो कुछ देर वहीं खड़े होकर मुक्ति का आनंद लेने के लिए एक सिगरेट फूँकता है। अपने मोबाइल से संभावित गलफ्रैण्ड का नम्बर मिलाता है। कुछ पुराने डायलॉग दोहराता है। भावी गलफ्रैण्ड से मिलने का टाइम फिक्स हो जाता है। अब वह निर्णय लेता है कि वह लड़की का मोबाइल रिचार्ज नहीं कराएगा। इस प्रोजेक्ट पर और इन्वेस्टमेंट करना बेकार है।

इस घटना के कुछ दिन बाद हीरोइन की सहेली मिलती है।

– क्यों री... मैंने सुना है तू शादी कर रही है..

– हाँ... री.. अगले हफ्ते ही तो शादी है। मेरे होने वाले वो ना... बैंक में अफसर हैं। देखने में बिल्कुल हीरो जैसे हैं... हमारी जोड़ी खूब जमेगी।

–अरी वो तो ठीक है पर वो लड़का... जिससे तेरा अफेयर चल रहा था... उसका क्या होगा?

– मैंने क्या उसका ठेका ले रखा है वो भी कर लेगा, कहीं शादी.. हुम्म...

–पर तुम लोग तो एक दूसरे के पीछे दीवाने थे एक साथ जीने मरने की कसमें खाते थे...

– तो क्या हुआ...

–फिर भी बता ना... तूने उससे शादी क्यों नहीं की?

– अरी तू पागल है क्या... उस निठल्ले से शादी करके क्या करती। क्या कमाता... क्या खिलाता... खाली इश्क से पेट भरता क्या... और सुन.. एक बात और कहूँ... अपने कान ज़रा पास ला।

– हैं.....बोल...

–(फुसफुसाकर)– शादी तो मैं किसी अच्छे कैरेक्टर के लड़के से ही करूँगी.. वो तो कमीना...

सहेली का मुँह खुला रह जाता है, इतना खुला कि एक मक्खी उसमे घुस जाती है और कुछ देर घुम घामकर साबुत बाहर निकल आती है।

आधुनिक युग की एक सच्ची प्रेम कथा का अन्त यूँ भी होता है।

****

ग़ज़ल

आलोक मिश्रा

1

खाक़ होकर भी कब मिटूँगा मैं
फूल बनकर यहीं खिलूँगा मैं
तुझको आवाज़ भी मैं क्यों दूंगा
तेरा रस्ता भी क्यों तकूँगा मैं
इक पुराने से ज़ख़्म पर अबके
कोई मरहम नया रखूँगा मैं
घेर लेंगी ये तितलियाँ मुझको
खुशबुएँ ज्यों रिहा करूँगा मैं
ख़ुद से बाहर तो कम निकलता हूँ
जी में आया तो फिर मिलूँगा मैं
वरना जीना मुहाल कर देगा
दर्द को अब ग़ज़ल करूँगा मैं
धुकधुकी सी लगी है क्यों जी को
इतनी जल्दी कहाँ मरूँगा मैं
साँसें देती रहीं जो चिंगारी
एक जंगल सा जल उठूँगा मैं
थक गया हूँ मैं इस ज़ज़ीरे पर
फिर समुन्दर का रूख़ करूँगा मैं
रूह का ये लिबास बदलूँगा
भेष दूजा कोई धरूँगा मैं

***

2

फिर तिरी यादों की फुंफकारों के बीच
नीमजां है रात यलग़ारों के बीच
ऊँघता रहता है अक्सर माहताब
रात भर हम चन्द बेदारों के बीच
गूंजती रहती है मुझमें दम-ब-दम
चीख़ जो उभरी न कोहसारों के बीच
देखता आख़िर मैं उसको किस तरह?
रौशनी की तेज़ बौछारों के बीच
खो ही जाता हूँ तिरे क़िस्से में मैं
बारहा गुमनाम किरदारों के बीच
एक अदना सा दिया है आफ़ताब
मेरे मन के गहरे अंधियारों के बीच
क़ैद से अपनी निकलते क्यों नहीं?
ज़ख़्म कब भरते हैं दीवारों के बीच?
सानिहे छपने लगे हैं आँखों में
नब्ज़ थम जाए न अख़बारों के बीच
था महावट और फिर जुड़वाँ बहाव
बह गया मैं गुनगुने धारों के बीच

***

3

सवालों में ख़ुद भी है डूबी उदासी
कहीं ले न डूबे मुझे भी उदासी
शबो रोज़ चलती है पहलू से लगकर
गले पड़ गई एक ज़िद्दी उदासी
फ़जाओं की रंगत निखरने लगी है
हुई शाम फिर दिल में लौटी उदासी
ज़रा चाँद क्या आया मेरी तरफ़ को
सितारों ने जल-भुन के ओढ़ी उदासी
शबिस्तां में ग़म की न शम्में जलाओ
कहीं जाग जाये न सोयी उदासी
ज़रा देर लोगों में खुल कर हँसी फिर
सरे-बज़्म आँखों से टपकी उदासी
उसे याद थी कल की तारीख़ शायद
सिसकती रही लेके हिचकी उदासी
जमी थी मिरे सर्द सीने में कबसे
तपिश पाके अश्कों की पिघली उदासी
कुतरती है दिल के शजर की ये ख़ुशियाँ
तिरी याद है या गिलहरी उदासी
कभी हम थे जिनकी दुआओं में शामिल
उन्हीं तक न पहुँची हमारी उदासी
तिरी याद के अब निशाँ तक नहीं हम
मगर दिल में रहती है अब भी उदासी
निगाहों में हद्दे नज़र तक है रक़्सा
उदासी उदासी उदासी उदासी

***

4

मेरे ही आस पास हो तुम भी
इन दिनों कुछ उदास हो तुम भी
बारहा बात जीने मरने की?
एक बिखरी सी आस हो तुम भी
सीले नग़मों पे इतनी हैरत क्यों?
इस नमी से शनास हो तुम भी
मैं भी डूबा हूँ आसमानों में
ख़ाब में महवे-यास हो तुम भी
मैं हूँ टूटा सा एक पैमाना
एक ख़ाली गिलास हो तुम भी
ग़र मैं दुःख से सजा हुआ हूँ तो
रंज से ख़ुशलिबास हो तुम भी
अपनी फ़ितरत का मैं भी मारा हूँ
अपनी आदत के दास हो तुम भी
मेरी मिट्टी भी रेत की सी है
और सहरा की प्यास हो तुम भी

***

द्वारा- श्री अमित शर्मा, ब्लौक सी 8, हाउस नंबर 42, यमुना विहार, नई दिल्ली-110053, मोबाइल 9711744221, alok.mishra.rkg@gmail.com

आइना

(जापानी कहानी)

मूल लेखक : हारुकी मुराकामी

अनुवाद : सुशांत सुप्रिय

सुशांत सुप्रिय के हत्यारे, हे राम, दलदल (तीन कथा-संग्रह), अयोध्या से गुजरात तक, इस रूट की सभी लाइनें व्यस्त हैं (दो काव्य-संग्रह) और कई कहानियाँ व कविताएँ अंग्रेज़ी, उर्दू, पंजाबी, उड़िया, मराठी, असमिया, कन्नड़, तेलुगु व मलयालम आदि भाषाओं में अनूदित व प्रकाशित। कहानियाँ कुछ राज्यों के कक्षा सात व नौ के हिंदी पाठ्यक्रम में शामिल। कविताएँ पुणे वि.वि.के बी. ए.(द्वितीय वर्ष) के पाठ्य-क्रम में शामिल। कहानियों पर आगरा वि.वि., कुरुक्षेत्र वि. वि., पटियाला वि. वि., व गुरु नानक देव वि. वि., अमृतसर के हिंदी विभागों में शोधार्थियों द्वारा शोध-कार्य। अंग्रेज़ी व पंजाबी में भी लेखन व प्रकाशन। अंग्रेज़ी में काव्य-संग्रह 'इन गाँधीज़ कंट्री' प्रकाशित। अंग्रेज़ी कथा-संग्रह 'द फ़िफ़्थ डायरेक्शन' और अनुवाद की पुस्तक 'विश्व की श्रेष्ठ कहानियाँ' प्रकाशनाधीन।
संपर्क : ए-5001, गौड़ ग्रीन सिटी , वैभव खंड , इंदिरापुरम , ग़ाज़ियाबाद - 201014 (उ. प्र.)
इमेल : sushant1968@gmail.com
मोबाइल : 8512070086

आज रात आप सब जो कहानियाँ सुना रहे हैं, उन्हें दो श्रेणियों में रखा जा सकता है । एक तो वे कहानियाँ हैं जिन में एक ओर जीवित लोगों की दुनिया है, दूसरी ओर मृत्यु की दुनिया है, और कोई शक्ति है जो एक दुनिया से दूसरी दुनिया में आना-जाना संभव बना रही है। भूत-प्रेत आदि भी इसी श्रेणी में आते हैं। दूसरी तरह की कहानियों में परा-भौतिक क्षमता, पूर्वाभास और भविष्यवाणी करने की क्षमता शामिल है। आप सब की सारी कहानियाँ इन्हीं दो श्रेणियों से संबंधित हैं ।

असल में आप लोगों के सारे अनुभव भी लगभग इन्हीं दो श्रेणियों में रखे जा सकते हैं । मेरे कहने का अर्थ है, जिन लोगों को भूत दिखते हैं, उन्हें केवल भूत ही दिखते हैं। उन्हें कभी किसी अनहोनी का पूर्वाभास नहीं होता। दूसरी ओर, जिन्हें ऐसा पूर्वाभास होता है, उन्हें कभी भूत नहीं दिखते। मुझे नहीं पता, ऐसा क्यों है।

शायद यह पहली या दूसरी बात के प्रति आपके व्यक्तिगत झुकाव की वजह से हो। कम से कम मुझे तो यही लगता है।

पर कुछ लोग इन दोनों में से किसी श्रेणी में नहीं आते। उदाहरण के लिए मुझे ही ले लें । अपने तीस बरस की उम्र में मैंने कभी कोई भूत नहीं देखा, न ही मुझे कभी कोई पूर्वाभास हुआ, या भविष्यवाणी करने वाला कोई सपना ही आया। एक बार मैं एक लिफ़्ट में कुछ मित्रों के साथ था। उन्होंने क़सम खा कर कहा कि लिफ़्ट में हमारे साथ एक भुतहा परछाईं भी थी। पर मुझे कुछ भी नहीं दिखा। उन्होंने दावा किया कि मेरे ठीक बगल में सलेटी वस्त्र पहने एक महिला की धुँधली आकृति मौजूद थी। पर हमारे साथ कोई महिला उस लिफ़्ट में थी ही नहीं। कम-से-कम मुझे तो कोई आकृति नहीं दिखी। मैं, और मेरे दो अन्य मित्र -- हम तीन ही उस लिफ़्ट में मौजूद थे। मैं मज़ाक नहीं कर रहा। और मेरे ये दोनों मित्र ऐसे लोग नहीं थे जो मुझे डरा कर बेवक़ूफ़ बनाने के लिए झूठ बोलें। तो यह सारा मामला बेहद

असामान्य था, पर असली बात यही है कि मुझे आज तक कोई भूत दिखाई ही नहीं दिया ।

पर एक बार की बात है -- केवल एक बार -- जब मुझे ऐसा डरावना अनुभव हुआ था कि मेरी घिग्घी बँध गई थी। इस भयावह घटना को घटे दस बरस से भी ज़्यादा अरसा हो गया, पर मैंने कभी किसी को इसके बारे में कुछ नहीं बताया। मैं इस घटना का ज़िक्र करने के ख़्याल से भी डरता था। मुझे लगता था कि उल्लेख मात्र से यह घटना दोबारा घटित होने लगेगी। इसलिए मैं इतने साल चुप रहा। लेकिन आज रात आप सभी ने अपना-अपना कोई भयावह अनुभव सुनाया है, और मेज़बान होने के नाते मेरा भी यह फ़र्ज़ है कि मैं अपना ऐसा ही कोई अनुभव आप सबको सुनाऊँ। तो प्रस्तुत है मेरे उस डरावने अनुभव की कहानी :

1960 के दशक के अंत में छात्र-आंदोलन अपने पूरे शबाब पर था। यही वह समय था जब मैंने विद्यालय की शिक्षा पूरी कर ली । मैं 'हिप्पी पीढ़ी' का हिस्सा था, इसलिए मैंने आगे की पढ़ाई के लिए विश्वविद्यालय में दाख़िला लेने से इंकार कर दिया। इसकी बजाए मैं जापान भर में घूम-घूम कर जगह-जगह श्रमिकों के लिए उपयुक्त नौकरियाँ करता रहा । मुझे पक्का यक़ीन हो गया था कि जीवन जीने का सबसे सही तरीका मेहनत-मज़दूरी करना ही था। मेरे ख़्याल से आप मुझे युवा और अधीर कहेंगे। आज पीछे मुड़ कर देखने पर मुझे लगता है कि उस समय मैं एक मज़ेदार जीवन जी रहा था। ऐसे जीवन का मेरा चुनाव चाहे सही था या ग़लत, यदि मुझे फिर से चयन का मौक़ा मिलता तो मुझे पूरा यक़ीन है कि मैं दोबारा वही जीवन चुनता ।

पूरे देश में घूमते रहने के मेरे दूसरे बरस के पतझर के दौरान मुझे कुछ महीने के लिए एक विद्यालय में रात के चौकीदार की नौकरी मिली। यह विद्यालय निगाता क्षेत्र के एक छोटे-से शहर में था। गर्मियों में लगातार मेहनत-मज़दूरी वाला काम करने की वजह से मैं बेहद थकान महसूस कर रहा था। इसलिए मैं कुछ समय के लिए थोड़ी आसान-सी नौकरी चाहता था। रात के समय चौकीदार का काम करने के लिए विशेष कुछ नहीं करना पड़ता। दिन के समय मैं स्कूल के परिचारक के दफ़्तर के एक कमरे में सो जाता था। रात में मुझे केवल दो बार पूरे विद्यालय का चक्कर लगा कर यह सुनिश्चित करना होता था कि सब कुछ ठीक है। बाक़ी बचे समय में मैं संगीत सुनता, पुस्तकालय में जा कर किताबें पढ़ता और जिम में जा कर अकेले ही बास्केटबॉल खेलता। किसी स्कूल में पूरी रात अकेले रहना इतना बुरा भी नहीं होता। क्या मैं भयभीत था ? बिलकुल नहीं। जब आप अठारह या उन्नीस साल के होते हैं तो आपको किसी चीज़ की परवाह नहीं होती ।

मुझे नहीं लगता कि आप में से किसी ने रात में चौकीदार के रूप में काम किया होगा, इसलिए मुझे आपको चौकीदार के काम-काज के बारे में बता देना चाहिए। आपको रात में रखवाली करते हुए दो चक्कर लगाने होते हैं -- एक नौ बजे और दूसरा तीन बजे। यही आपका कार्यक्रम होता है। जिस विद्यालय में मुझे नौकरी मिली थी, उसकी एक पुख़्ता तिमंज़िला इमारत थी। उसमें लगभग बीस कमरे थे। यह एक बहुत बड़ा स्कूल नहीं था। कक्षा के कमरों के अलावा संगीत-शिक्षण के लिए एक कमरा था, कला-शिक्षण के लिए एक स्टूडियो था और एक विज्ञान-प्रयोगशाला थी। इसके अतिरिक्त शिक्षकों के बैठने के लिए एक बड़ा कमरा था और प्रधानाचार्य का दफ़्तर था। कॉफ़ी पीने की एक दुकान, एक तरण-ताल, एक व्यायामशाला और एक नाट्यशाला भी विद्यालय का हिस्सा थे। रात में दो बार इन सब का चक्कर लगाना मेरे काम में शामिल था।

जब मैं रात में रखवाली करते हुए स्कूल में चक्कर लगा रहा होता, तो मैं साथ-साथ एक बीस-सूत्री जाँच-सूची पर भी निशान लगाता चलता। शिक्षकों के बैठने का कमरा -- सही ... विज्ञान-प्रयोगशाला -- सही ... मुझे लगता है, मैं परिचारक के कमरे के बिस्तर पर बैठे-बैठे भी सही के निशान लगा सकता था। तब मैं रात में विद्यालय का चक्कर लगाने की ज़हमत से बच जाता। लेकिन मैं इतना ग़ैर-ज़िम्मेदार व्यक्ति नहीं था। यूँ भी विद्यालय का चक्कर लगाने में ज़्यादा समय नहीं लगता था। इसके अलावा, यदि कोई रात में चोरी के इरादे से स्कूल में घुस आता तो जवाबदेही तो मेरी ही बनती।

जो भी हो, हर रात मैं दो बार -- नौ बजे और तीन बजे, रखवाली करते हुए पूरे विद्यालय का चक्कर लगाता था। मेरे बाएँ हाथ में टॉर्च होती, जबकि दाएँ हाथ में लकड़ी की एक पारंपरिक तलवार होती। मैंने अपने स्कूल के दिनों में पारंपरिक तलवारबाज़ी सीखी थी, इसलिए मुझे किसी भी हमलावर को भगा देने की अपनी योग्यता पर पूरा भरोसा था। यदि कोई हमलावर पेशेवर नहीं होता और उसके पास असली तलवार होती, तो भी मैं उससे नहीं घबराता। याद रखिए , उस समय मैं युवा था। अगर आज की तारीख़ में ऐसी कोई बात हो जाए, तो मैं ज़रूर वहाँ से भाग जाऊँगा।

ख़ैर ! यह घटना अक्टूबर महीने की एक तूफ़ानी रात में घटी । असल में, साल के इस माह के हिसाब से मौसम बेहद उमस भरा था। शाम से ही मच्छरों के झुंड मँडराने लगे। मुझे याद है, मैंने मच्छरों को भगाने वाली कई टिकिया जलाईं ताकि इन बदमाशों को दूर रखा जा सके। बाहर आँधी का कर्ण-भेदी शोर था। तरण-ताल का दरवाज़ा टूटा हुआ था और तेज़ हवा में खटाखट बज रहा था। मैंने सोचा कि कील ठोककर दरवाज़े को दुरुस्त कर दूँ, लेकिन बाहर घुप्प अँधेरा था। इसलिए वह दरवाज़ा सारी रात यूँ ही बजता रहा।

उस रात नौ बजे रखवाली के लिए लगाए गए स्कूल के चक्कर में सब ठीक-ठाक रहा। मैंने जाँच-सूची के सभी बीस मदों पर सही का साफ़ निशान लगा दिया। सभी कमरों के दरवाज़ों पर ताला लगा था और हर चीज़ अपनी जगह पर थी। कहीं कुछ भी अजीब नहीं लगा। मैं वापस परिचारक के कमरे में गया, जहाँ मैंने घड़ी में तीन बजे उठने के लिए अलार्म लगाया। बिस्तर पर लेटते ही मुझे नींद आ गई।

तीन बजे अलार्म बजने पर मैं जग तो गया लेकिन मुझे कुछ अजीब महसूस हो रहा था। मैं आप को ठीक से यह समझा नहीं सकता, लेकिन मुझे कहीं कुछ अलग-

सा लगा। मेरा उठने का मन भी नहीं हो रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे कोई चीज़ बिस्तर से उठने की मेरी इच्छा को दबा रही थी। आम तौर पर मैं उछल कर बिस्तर से उठ खड़ा होता हूँ, इसलिए मैं भी कुछ नहीं समझ पा रहा था। मुझे जैसे खुद को धक्का दे कर बिस्तर से उठाना पड़ा, ताकि मैं स्कूल की रखवाली वाला तीन बजे का चक्कर लगाने जा सकूँ। बाहर तरण-ताल का टूटा दरवाज़ा अब भी तेज़ हवा में बज रहा था, पर उसके बजने की आवाज़ अब पहले से अलग लग रही थी। कहीं-न-कहीं कुछ तो ज़रूर अजीब है -- बाहर जाने के प्रति अनिच्छुक होते हुए मैंने सोचा। किंतु फिर मैंने अपना मन बना लिया कि चाहे कुछ भी हो जाए, मुझे अपना काम करने जाना ही है। यदि आप एक बार अपने कर्तव्य से विमुख हो गए, तो आप बार-बार अपने कर्तव्य से विमुख होंगे, और मैं इस झमेले में नहीं पड़ना चाहता था। इसलिए मैंने अपनी टॉर्च और अपनी लकड़ी की तलवार उठाई और विद्यालय का चक्कर लगाने के लिए निकल पड़ा।

यह वाकई बहुत अजीब-सी रात थी। जैसे-जैसे रात गहरी हो रही थी, हवा की रफ़्तार बेहद तूफ़ानी होती जा रही थी, और हवा में नमी भी बढ़ती जा रही थी। मेरे शरीर में जगह-जगह खुजली होने लगी, और किसी भी चीज़ पर अपना ध्यान केंद्रित कर पाना मेरे लिए मुश्किल होने लगा। मैंने पहले व्यायामशाला, नाट्यशाला और तरण-ताल का चक्कर लगाने का निश्चय किया। वहाँ सब कुछ ठीक-ठाक था। तरण-ताल का अधा-टूटा दरवाज़ा तूफ़ानी हवा में इस तरह लयहीन-सा बज रहा था जैसे उसे पागलपन का दौरा पड़ा हो। उसके बजने की आवाज़ डरावनी और अजीब लग रही थी।

स्कूल की इमारत के भीतर स्थिति सामान्य थी। मैं हर ओर देखते हुए अपनी बीस-सूत्री जाँच-सूची पर सही का निशान लगाता जा रहा था। हालाँकि मुझे कहीं कुछ अजीब लग रहा था, लेकिन वास्तव में अब तक ऐसा कुछ भी नहीं हुआ था जिसे अजीब कहा जाता। चैन की साँस ले कर मैं परिचारक के कमरे की ओर लौटने लगा। मेरी जाँच-सूची में अब केवल अंतिम जगह 'विज्ञान-प्रयोगशाला' बच गई थी। यह प्रयोगशाला इमारत के पूर्वी हिस्से में कॉफ़ी पीने की दुकान के बगल में स्थित थी। परिचारक का कमरा यहाँ से ठीक उलटी दिशा में पड़ता था। इसका मतलब था कि लौटते हुए मुझे पहली मंज़िल के लम्बे गलियारे को पार करना था।वहाँ घुप्प अँधेरा था। जब आकाश में चाँद निकला होता, तो उस गलियारे में हल्की रोशनी होती थी। पर जब ऐसा नहीं होता, तो वहाँ कुछ भी दिखाई नहीं देता। उस रात भी घुप्प अँधेरे में आगे का रास्ता देखने के लिए मुझे टॉर्च की रोशनी का सहारा लेना पड़ रहा था। दरअसल मौसम विभाग के अनुसार उस इलाक़े में एक चक्रवात के आने का अंदेशा था। इसलिए चाँद दिखाई नहीं दे रहा था। बाहर आकाश में केवल बादलों की भीषण गड़गड़ाहट थी और नीचे ज़मीन पर तूफ़ानी हवा का भयावह शोर था।

मैं और दिनों की अपेक्षा तेज़ी से उस गलियारे को पार करने लगा। मेरे जूतों में लगे रबड़ के फ़र्श पर हो रहे घर्षण से उस सन्नाटे में एक अजीब-सी आवाज़ पैदा हो रही थी। वह फ़र्श काई के रंग का था। मुझे आज भी याद है। स्कूल का प्रवेश-द्वार आधा गलियारा पार करने के बाद आता था, और जब मैं वहाँ से गुज़रा तो मुझे लगा ... वह क्या था? मुझे लगा जैसे मुझे अँधेरे में कोई चीज़ दिखी। मैं बुरी तरह घबरा गया। मेरे माथे और कनपटियों से पसीने की धारा बह निकली। तलवार की मूठ पर अपनी पकड़ मज़बूत करते हुए मैं उस ओर मुड़ा जिधर मुझे कुछ दिखा था। मैंने अपनी टॉर्च की रोशनी जूते रखने के खाने के बगल वाली दीवार पर डाली।

ओह ! तो यह बात थी। दरअसल वहाँ एक आदमकद आइना रखा था जिसमें मेरा प्रतिबिम्ब नज़र आ रहा था। लेकिन पिछली रात तो यहाँ कोई आइना नहीं रखा था। यानी कल दिन में ही किसी ने यह आइना यहाँ डाल दिया होगा। हे भगवान्, मैं कितना घबरा गया था।

जैसा कि मैंने बताया, वह एक आदमकद आइना था। आइने में वह महज़ मेरा प्रतिबिम्ब था , यह देख कर मुझे थोड़ी राहत महसूस हुई। लेकिन साथ ही मुझे अपने बुरी तरह घबरा जाने की बात बेहद बेवक़ूफ़ाना लगी। तो सिर्फ़ यह बात थी -- मैंने खुद से कहा। क्या बेवक़ूफ़ी है ! मैंने अपनी टॉर्च नीचे रख कर जेब से एक सिगरेट निकाली और सुलगा ली। मैंने एक गहरा कश ले कर उस आइने में अपने प्रतिबिम्ब की ओर निगाह डाली। बाहर सड़क से एक मद्धिम रोशनी खिड़की के रास्ते उस आइने तक पहुँच रही थी। मेरे पीछे स्थित तरण-ताल का अध-टूटा दरवाज़ा तूफ़ानी हवा में अब भी लयहीन-सा बज रहा था।

सिगरेट के कुछ गहरे कश लेने के बाद मुझे अचानक एक अजीब बात नज़र आई -- आइने में दिख रहा मेरा प्रतिबिम्ब दरअसल मैं नहीं था। बाहर से वह बिलकुल मेरी तरह लग रहा था, लेकिन यक़ीनन वह मैं नहीं था। नहीं, यह बात नहीं थी। वह 'मैं' तो था लेकिन कोई 'दूसरा' ही मैं था। कोई दूसरा मैं, जिसे नहीं होना चाहिए था। मुझे नहीं पता, मैं इसे आपको कैसे समझाऊँ। मुझे उस समय कैसा महसूस हो रहा था, यह बयान कर पाना कठिन है।

जो बात मैं समझ पाया वह यह थी कि आइने में मौजूद वह प्रतिबिम्ब मुझसे बेइंतहा नफ़रत करता था। उसके भीतर भरी घृणा अँधेरे समुद्र में तैर रहे किसी हिम-खंड-सी थी। एक ऐसी नफ़रत जिसे कोई कभी मिटा न सके।

मैं कुछ देर वहाँ हक्का-बक्का-सा खड़ा रह गया। मेरी सिगरेट मेरी उँगलियों से फिसल कर फ़र्श पर गिर पड़ी। आइने में मौजूद सिगरेट भी फ़र्श पर गिर पड़ी। एक-दूसरे को घूरते हुए हम वहाँ खड़े रहे। मुझे लगा जैसे किसी ने मेरे हाथ-पैर बाँध दिए हों। मैं हिल भी नहीं पा रहा था।

आख़िर उसका हाथ हिला। उसके दाएँ हाथ की उँगलियों ने उसकी ठोड़ी को छुआ, और फिर एक कीड़े की तरह धीरे-धीरे वे उँगलियाँ उसके चेहरे की ओर बढ़ीं। अचानक मैंने महसूस किया कि मेरी उँगलियाँ भी ठीक वैसी ही हरकतें कर रही थीं। गोया मैं आइने में बैठे व्यक्ति का प्रतिबिम्ब था और वह मेरी हरकतों पर

कब्ज़ा करने की कोशिश कर रहा था।

भीतर से अपनी अंतिम शक्ति एकत्र कर के मैं ज़ोर से चीख़ा, और मुझे अपनी जगह पर जकड़ कर रखने वाले बंधन जैसे टूट गए। मैंने अपने हाथ में पकड़ी लकड़ी की तलवार ऊपर उठाई और उस आदमकद आइने पर ज़ोर से दे मारी। मैंने काँच के चटख कर चूर-चूर होने की आवाज़ सुनी, पर अपने कमरे की ओर बेतहाशा भागते हुए मैंने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। कमरे में पहुँचते ही मैंने दरवाज़ा भीतर से बंद किया और बिस्तर पर पड़ी रज़ाई में घुस गया। हालाँकि मुझे अपनी जलती सिगरेट के वहाँ फ़र्श पर गिर जाने की चिंता हुई, पर अब मैं वहाँ वापस तो किसी हालत में नहीं जाने वाला था। बाहर तूफ़ानी हवा प्रचण्ड वेग से शोर मचाती रही। तरण-ताल का अधटूटा दरवाज़ा भी सुबह तक बौराया और लयहीन-सा उसी तरह बजता रहा ...

मुझे पूरा विश्वास है, आपने मेरी कहानी का अंत जान लिया होगा। दरअसल वहाँ कभी कोई आइना था ही नहीं।

सूर्योदय होने से पहले ही चक्रवात का क़हर ख़त्म हो चुका था। तूफ़ानी हवा चलनी बंद हो गई थी, और बाहर एक धुपहला दिन निकल आया था। मैं स्कूल के मुख्य द्वार पर गया। मेरी उँगलियों से फिसल कर गिर गई सिगरेट का टुकड़ा अब भी वहीं था। मेरी टूटी हुई तलवार भी वहीं पड़ी थी। लेकिन वहाँ कोई आइना नहीं था। टूटे हुए काँच के टुकड़े भी नहीं थे। बाद में पूछताछ करने पर मुझे पता चला कि वहाँ कभी किसी ने कोई आइना रखा ही नहीं था। मैंने वहाँ जो देखा, वह भूत नहीं था। वह तो मैं ही था। मैं इस बात को कभी नहीं भूल पाता कि मैं उस रात कितना डर गया था। जब भी मुझे वह रात याद आती है, मेरे ज़हन में यही विचार कौंधता है : कि विश्व में सबसे डरावनी चीज़ हमारा अपना ही रूप है। आप इस के बारे में क्या सोचते हैं ?

आपने पाया होगा कि यहाँ मेरे इस घर में एक भी आइना नहीं है। मेरी बात पर विश्वास कीजिए -बिना आइने के दाढ़ी बनाना सीखना कोई आसान काम नहीं था।

****

ग़ज़ल

पूजा भाटिया

1

शब् भर चाँद जिस पर ऐंठता है
ये किस की रौशनी है ,कुछ पता है?
बहुत ख़ुश आजकल रहने लगा है
वो ख़ुद से ही नहीं सब से ख़फ़ा है
लकीरों से मिरी धोका न खाओ
मेरे हाथों से सब कुछ छिन गया है
यही रस्ता मुझे भटकाएगा अब
ये रस्ता मंज़िलों से जा मिला है
नया था इश्क़ में सो पूछता था
महब्बत से बड़ी कोई सज़ा है?
रखा है काम पर सूरज को मैंने
मिरा सारा उजाला ढो रहा है
मेरी चुप्पी के थे मतलब कई... सो
जो चाहा जिसने बस वो ही सुना है
मुझे लगता है डर तन्हाइयों से
तेरी यादों को तो ये पता है !
बिखर जाती हूँ जब भी ओढ़ती हूँ
ये गुज़रे वक़्त की कैसी रिदा है
कई अशआर का है शोर लेकिन
ग़ज़ल कितनी अकेली है...पता है?

***

2

नींद नहीं थी आँखों में, ख़ाब मगर अक्सर आये
इस घर की उम्मीद में वो छोड़के अपना घर आये
सूखे पत्ते हैराँ थे, बिन मौसम की बारिश से
तेरी मेरी बातों से, क्या अच्छे मंज़र आये
वीरानी में जंगल की, पत्तों की आवाज़ें थीं
जंगल बच्चा था सो हम, दिल रखने को डर आये
सब कुछ सूखा -सूखा था, सूखी शाखें, सूखे पेड़
तेरी बातें कर कर के,जंगल धानी कर आये
रस्ते बातें करते थे, क़दमों की आवाज़ों से
यूँ ही बातों बातों में डर दिल के बाहर आये
मायूसी का मौसम था, मायूसी ही ग़ायब थी
एक गुज़ारिश मौसम से, आये तो खुल कर आये
अश्कों का वो मेला था, अश्क बिके बाज़ारों में
तुमको अश्क नहीं लेने फिर बाहर क्यूँ कर आये?
एक इशारा एक झलक पहला बोसा पहला लम्स
वैसे के वैसे ही थे, जब भी हम छत पर आये

***

3

चलते चलते अक्सर रुक कर सोचा भी
क्या मंज़िल पर याद रहेगा रास्ता भी?
इसको कहते हैं पौ बारह हो जाना
वो भी मुझसे ख़ुश है और ज़माना भी
बीच भंवर में मैं ही डूबी कब तन्हा
साथ मेरे डूबा था तेरा किनारा भी
ख़ाब नगर के मालिक हैं हम वैसे तो
इश्क़ गली में है अपना वीराना भी
काश अदाकारी ये आ जाती हमको
तन्हा रहते हैं तो तन्हा लगना भी
छोड़िये,जाने दीजिये..अच्छा तो सुनिए
कुछ न बताना फिर सब कुछ बतलाना भी
वो किसका है..इस से क्या लेना देना
बाज़ दफ़ा काफ़ी है उसका होना भी
दूर किनारे पर जो लड़का बैठा है
उस से छुपना है..उस तक है जाना भी
हर कमरे में इक खिड़की , इक पर्दा है
और दोनों से रूठा इक दरवाज़ा भी
इक आँसू, दो आँसू.. आँसू ही आँसू
यूँ तैयार हुआ दरिया में सहरा भी
दो जोड़े थे होटों के, थी इक मंज़िल
कितना मुश्किल था मंज़िल से आना भी
तुम ही थोड़ी बाट में मेरी बैठे हो?
दूर कहीं बैठा है एक ख़राबा भी

***

4

सारी शब ढूँढ़ता फिरा है मुझे
ख़ाब इक चाहने लगा है मुझे
मैं उसे देखती रहूँ इक टुक
यानी बस उस को देखना है मुझे
अब वो डरता है,खो न जाऊँ मैं
उसने ख़ुशबू बहुत लिखा है मुझे
जिसने खोया हो आ के ले जाए
चाँद कल रात इक मिला है मुझे
लुत्फ़ जो है समेटने में है
सो वो पागल बिखेरता है मुझे
एक लड़का था..एक लड़की थी
ये कहानी थी इक.. पता है मुझे
जब वो बहकी थी तब नदी सी थी
फिर हुआ क्या ये जानना है मुझे

***

801-बेला, क्रिस्टल पैलेस, रौनक प्लाजा, प्लॉट नंबर 89, सेक्टर 20
सीबीडी बेलापुर, नवी मुंबई-400614, मोबाइल- 842584550

हर पल कुछ सिखाती है...ज़िन्दगी...

प्रियंका गुप्ता

ज़िन्दगी में जब भी 'गुरू', 'शिक्षक' या 'टीचर' का ज़िक्र आता है तो सामान्यत: हम अपने स्कूल-कॉलेज के अध्यापकों में से सिर्फ़ दो ही तरह के शिक्षकों को याद करते हैं । या तो अपने पसन्दीदा शिक्षक को या फिर उनको, जो किसी-न-किसी वजह से हमको नापसन्द रहे हों...। पर क्या इत्ती लम्बी ज़िन्दगी में सिर्फ़ यही वो चन्द लोग होते हैं, जिनसे हमको कुछ सीखने को मिलता है...?

आज मैं भी जब अपनी ज़िन्दगी के कुछ पुराने पन्ने पलटने चली, तो सहसा माँ की बहुत बार सुनाई एक घटना याद आ गई ।

बात बहुत पुरानी है...मेरे जन्म से पहले की...। माँ-पापा जिस किराये के मकान में रहते थे, वह सुरक्षा की दृष्टि से बहुत खराब कहा जा सकता है...। सच कहूँ तो माँ की क़िस्मत में जितने भी किराये के मकान आए, सभी बहुत असुरक्षित रहे...। लेकिन ख़ैर, अभी बात उस मकान की...जहाँ ये लोग मेरे जन्म से पहले रहने आए थे।

जाड़े के दिन थे शायद...। अब वैसे माँ को भी इतने अच्छे से याद नहीं कि जाड़ा था या गर्मी-बरसात में से कोई मौसम...पर उन्होंने जब भी ज़िक्र किया, सर्द-सुनसान रात का ही किया...। रात का यही कोई एक बजा रहा होगा...। पूरा मोहल्ला गहरी नींद में था । उस मकान में रसोई बाहर आँगन में थी...और आँगन के पार ही एक छोटा सा गेट...इतना छोटा कि कोई भी बड़ी आसानी से फाँद जाए...। माँ की नींद बाहर रसोई में ही हो रही हल्की खटर-पटर से टूट गई। उन्होंने कमरे की झिरी से झाँक कर देखा तो रसोई का दरवाज़ा खुला हुआ था। माँ थोड़ा संशय में आ गई...। इतनी लापरवाह तो वो थी नहीं कि ताला बन्द किए बग़ैर रसोई ऐसे खुली छोड़ कर सो जाएँ...पर फिर भी, क्या पता...? छोड़ ही दिया हो तो...? अभी वे कुछ करने की सोच ही रही थी कि तभी बगल के मकान की ऊपरी मंज़िल में रहने वाले कुलश्रेष्ठ जी की ज़ोरदार दहाड़ सुनाई दी...कौन है वहाँ...? गुप्ता जी...ये आपके आँगन में कौन है इतनी रात गए...?

कुलश्रेष्ठ साहब के छज्जे से माँ का आँगन साफ़ दिखता था...और बाथरूम के लिए उठे मि. कुलश्रेष्ठ बस एक सावधानीवश आसपास का जायज़ा लेने के लिए अपने कमरे से बाहर छज्जे पर आए ही थे कि उन्हें हमारे यहाँ रसोई से गैस का सिलेण्डर खींच कर बाहर निकालता हुआ कोई शख़्स दिख गया। पापा को आवाज़ लगाने के साथ-साथ उन्होंने हमारे मकान-मालिक के तीन जवान-जहान, थोड़े दबंग किस्म के लड़कों, अपने बगल में रह रहे सिंह साहब, हमारे ही ऊपर के हिस्से में रहने वाले गंगवार साहब...सिंघल साहब...यानी कि जिसका-जिसका नाम याद आता गया, वे पुकारते गए...गुप्ता जी के यहाँ कोई चोर है...पकड़ो...।

माँ बताती हैं कि पतले-दुबले होने के बावजूद कुलश्रेष्ठ साहब में बला की फ़ुर्ती और हिम्मत थी...। जिन-जिन का नाम उन्होंने लिया...सबके सब दिलेर किस्म के लोग...। इत्तेफ़ाकन ये सब लोग गाँव की पृष्ठभूमि से होने के कारण भी इस तरह की स्थितियों से निपटने में अच्छी तरह सक्षम थे। बेचारा...क़िस्मत का मारा चोर जब तक कुछ समझ पाता...भाग पाता...वो बुरी तरह घिर गया था। सबको इकट्ठा हुआ देख माँ भी बाहर आ गई थी । माँ को छोड़ कर वहाँ आ चुके हर व्यक्ति ने इतनी ठण्ड में रजाई से निकल कर बाहर खुले में आने की खुन्नस उस पर हाथ जमा कर निकाली...। चोर कुछ मार खा कर और शायद थोड़ा अपने अंजाम से डर कर पिटता हुआ रोता जा रहा था। जितना गिड़गिड़ा कर वो

एम.आई.जी-292 , कैलाश विहार, आवास विकास योजना, संख्या-एक, कल्याणपुर, कानपुर-208017,(उ.प्र)
मोबाइल नं : 09919025046
ईमेल priyanka.gupta.knpr@gmail.com
ब्लॉग
www.priyankakedastavez.blogspot.in

वहाँ इकट्ठा भीड़ से रहम माँग रहा था, उतनी ही बेचैनी से माँ भी सबको रोके जा रही थी...छोड़ दीजिए...मत मारिए...। चोट लग रही होगी इसे...। माँ और चोर की इस संयुक्त गुहार से परेशान होकर वहाँ मौजूद कुछ बड़े-बुजुर्गों ने सबसे पहले माँ को डाँट कर चुप कराया, फिर चोर को अच्छी तरह ठोंक-पीट कर वहीं रसोई की खिड़की से बाँध कर यह तय पाया गया कि अब थाने में चल कर रपट लिखाई जाए । आगे की कार्यवाही पुलिस देखेगी ।

चोर को चूँकि हमारे ही घर पर बाँध दिया गया था, सो वहाँ मौजूद कुछ महिलाओं के साथ माँ को भी ध्यान देने का समझा कर सब लोग इलाके के थाने की ओर चल पड़े। कुछ देर तक तो अड़ोसी-पड़ोसी महिलाएँ माँ के पास बैठी रही, फिर शायद जाड़े की नींद उन सब पर हावी होने लगी, सो एक-एक कर के सावधान रहने और कोई ज़रूरत होने पर आवाज़ देने को कह कर वे सब अपने-अपने घर चली गई । रह गए तो सिर्फ़ माँ और सुबकियाँ भरता...कराहता चोर...।

बीच रात में ये सारा काण्ड हो जाने से अब भोर होने तक माँ कुछ थक भी गई थी और ठण्ड से उनको चाय की तलब भी लग रही थी । सो जो सिलेण्डर चोर ने घसीट कर बाहर निकाला था, माँ ने थोड़ी मशक्कत के बाद आख़िरकार उसे वापस फिट करके चाय चढ़ा दी । इतनी मार खाकर रोते-सुबकते चोर भी पस्त पड़ गया था। माँ को तो वैसे ही उसको पिटते देख कर बहुत बुरा लगा था, ऊपर से उसकी ऐसी हालत देख कर माँ ने उसे भी एक कप चाय पकड़ा दी।

चुपचाप चाय पीते हुए जाने माँ को बोरियत महसूस हुई या क्या हुआ, वे चोर से ही बतियाने लगी। पता चला, ये उसकी पहली चोरी थी...। घर में कोई कमाने वाला नहीं और खाने वाले चार मुँह...ऐसे में उसे यही सबसे तेज़ और असरदार रास्ता लगा कमाई का...। पढ़ा-लिखा ज़्यादा था नहीं...सरकारी स्कूल में कक्षा आठ तक ही पढ़ा पाए उसके पिता। फिर बीमार पड़ कर वो भी ख़त्म हो गए और साथ ही घर में कमाई का एकमात्र सहारा भी छिन गया। माँ ने पूछा...कोई रोज़गार क्यों नहीं शुरू कर दिया, तो बड़ी मासूमियत से उसने पूछा...दीदी...उसके लिए पैसा कहाँ से लाऊँ...? छूटते ही उन्होंने सवाल कर दिया...अगर तुमको पैसा मिल जाए तो कोई ईमानदारी का काम करोगे या उसे शराब-जुआ में उड़ा कर वापस चोरी करने लगोगे ? उसने अपनी माँ की क़सम खा कर ईमानदारी का जीवन बिताने की बात कही...पर उसका प्रश्न तो अब भी ज्यों-का-त्यों...पैसा कहाँ से आएगा...?

माँ का कहना है कि उस समय जाने क्यों उन्हें उसकी बातों पर यक़ीन आ रहा था, सो पता नहीं क्या सोच कर वे अन्दर गई और अपनी गुल्लक ले आईं। घर के खर्चों से बचा कर, मायके से मिले तीज़-त्योहार के पैसे, सब थे उस गुल्लक में...यानी कई महीनों की अपनी पूरी बचत माँ ने उसे दे दी...।

माँ ने उसकी रस्सी खोलते वक़्त उससे वायदा लिया कि वो उन पैसों से कोई भी छोटा-मोटा काम शुरू कर देगा...। जब तक सब लोग एक पुलिसवाले को लेकर वापस आए, माँ की कहानी तैयार थी...। वो दस मिनट के लिए बाथरूम क्या गई, जाने किसने उसकी रस्सी खोल दी...। बाहर आई तो वो गायब था...बिना कुछ लिए, बस अपनी जान बचा के भाग गया वो...। पुलिसवाला तो लौट गया, पर उनका स्वभाव जानने वाले कई लोगों को माँ की इस बात पर हल्का शक़ था...। ख़ैर...!

इस घटना को बीते तीन-चार महीने निकल चुके थे। एक दिन माँ किसी काम से बाज़ार गई। लौटते समय वो रिक्शा ढूँढ़ ही रही थी कि तभी किसी ने उन्हें 'दीदी...रुकिए तो...' कह कर पुकारा। पलट के देखा, एक नौजवान वहीं मोड़ पर खोमचा लगाए खड़ा उन्हें आवाज़ दे रहा था। पहले तो माँ को लगा, किसी और को बुलाया होगा क्योंकि वे उसे पहचान तो रही नहीं थी...पर जब वह लगभग दौड़ता हुआ उनके पास आया तो पक्का हुआ, उन्हीं को 'दीदी' कह कर पुकारा था उस अनजान युवक ने...।

हाथ में मीठे पान का बीड़ा लेकर आए उस युवक ने समझ लिया कि वे उसे पहचान नहीं पा रही, सो उसने खुद ही अपना परिचय दे दिया, 'पहचाना नहीं न दीदी...? मैं वही आपके घर आने वाला चोर हूँ, जिसे आपने पैसे दिए थे कोई काम शुरू करने के लिए...। याद आया...? देखिए, आपके पैसे से मैने पान का खोमचा लगा लिया है, दुबारा कभी चोरी के बारे में सोचा भी नहीं...। मेरा पूरा परिवार आपको दुआ देता है दीदी...। आपको देखते ही मैं पहचान गया था, ये मीठा पान तो खा लीजिए...।'

माँ थोड़ा शॉक्ड-सी अवस्था में एकदम अवाक खड़ी थी। उन्हें समझ ही नहीं आ रहा था कि इस अप्रत्याशित स्थिति में उन्हें क्या करना चाहिए। उसी ने माँ के लिए रिक्शा बुलाया, उसे तय किया और फिर घर तक का किराया रिक्शेवाले को देता हुआ माँ से बोला...आपका उधार, अगर समर्थ हो गया तो भी, कभी नहीं चुका पाऊँगा...। काश! आप जैसा कोई और भी सोच पाता...। रुँधे-से गले और नम आँखों के साथ दूर तक माँ को जाते हुए देखते रह गए उस अजनबी चोर से माँ की फिर कभी मुलाक़ात नहीं हुई...। कुछ तो इस कारण कि माँ बहुत कम ही बाज़ार जा पाती थी, और कुछ इस कारण कि जाने क्यों, माँ उस बाज़ार की उस गली, उस मोड़ से बच कर ही निकलती रही...बरसों-बरस...।

माँ के लिए तो यह बस एक अच्छी लगने वाली याद भर है, पर मैं जब इस सुनी हुई याद का आकलन करती हूँ तो इससे दो बातें सीखने को मिलती हैं...। पहली ये कि इस दुनिया में लाख छल-फ़रेब, धोखे और विश्वासघात होते हों, पर उनके बीच भी किसी ज़रूरतमन्द पर यक़ीन करते हुए की हुई मदद कभी व्यर्थ नहीं जाती। दूसरी ये, कि ज़िन्दगी के सफ़र में हम किसी ग़लत राह पर भले ही कितनी दूर निकल जाएँ, पर सही रास्ते की ओर कदम बढ़ाने के लिए देर कभी नहीं होती...। एक नई शुरुआत हमेशा आपके स्वागत में बाँहें फैलाए खड़ी होती है, ज़रूरत है तो बस आगे बढ़ कर उन बाँहों को थामने की...।

****

दोहे

डॉ. गोपाल राजगोपाल

चाहे ठंडी छाँव के, प्रश्न मिले हैं आप्त ।
कॉपी खाली छोड़ दी, आख़िर लिखा समाप्त॥

*

पहले जैसी अब पकड़, रही नहीं मज़बूत।
धीरे-धीरे हाथ से, डोरी जाती छूट॥

*

दुनियादारी में गए, दिवस महीने साल।
ढूँढ़ रहा हूँ पल जिसे, कह दूँ अपना माल॥

*

कॉपी सप्लीमेन्टरी, नहीं मिलेगी छात्र।
प्रश्नों के हल के लिये, इक ही जीवन मात्र॥

*

मन को मन्दिर मान कर, शीश नवाया रोज़।
मन्दिर-मस्जिद ना गए, ना इसका अफसोस॥

*

क्या कब कैसे हो गया, दर्पण कह दे हाल।
चेहरे पर इक नूर था, पड़ीं झुर्रियाँ भाल॥

*

मिल कर दोनों ने किया, नैन-मटक्का खूब।
अब ना फूटी आँख से, सुहा रहा महबूब॥

*

बँटवारे ने खींच दी, घर में इक दीवार।
पिक्चर का पर्दा बनी, लगी फिल्म परिवार॥

*

वो बैठे हैं तीर पर, हम पहुँचे मझधार।
आधा तय करना हमें, उनको पूरा पार॥

*

जीवन के हर खेल में, जीत बड़ी दुशवार।
पल के सौवें भाग से, धावक जाते हार॥

*

वृद्ध नहीं आकाश से, टपके रातों-रात।
बचपन-यौवन की मिली,उनको भी सौगात॥

***

225, सरदारपुरा, पेट्रोल पंप के पीछे,
उदयपुर (राज.) 313001
grajgoparv@gmail.com

आलोक चतुर्वेदी

दोहे भोर पर

आयु हमारी क्या करे, मन पे रति का ज़ोर
पिघली-पिघली देह सब, होते-होते भोर

*

राधा जी हैं किशोरी, मोहन भये किशोर
महारास, तरुवर तले, छन-छन निरखे भोर

*

चन्दा तेरी चाँदनी, कपट भरी मुँहजोर
चुन-चुन पीड़ा बाँटती, तभी सुहाती भोर

*

निशा, शशि और चाँदनी, तीनो निकले चोर
पल भर में ओझल हुए, आते देखी भोर

*

तन की बैरन कामना, मन पे डाले ज़ोर
पगला मन भी चाहता, अब ना उतरे भोर

*

अपना-अपना सच लिए, हम कितने कमज़ोर
सच पर तम की कालिमा, कैसे निकले भोर

*

जीवन पथ कंटक भरा, विषम समय भी घोर
चिथड़े-चिथड़े यामिनी, कटी-फटी सी भोर

*

चन्दा मेरा खो गया, इधर उधर किस ओर
रैना तो थक हार ली, अब ढूँढ़ेंगी भोर

*

रजनी ने झिड़का मगर, रुक न सकी मुँहज़ोर
इधर-उधर की बात कर, फिर आ धमकी भोर

*

मधुकर, कमल, छुई-मुई, पंछी, मानुष, ढोर
इनके कारण घर तजे, ममता मरती भोर

*

शब्दों के संसार में , सन्नाटों का शोर
आख़िर को ढल ही गई, ग़ज़ल सरीखी भोर

*

दोनों हैं मन मोहिनी, दोनों ही चितचोर
काजल-काजल यामिनी, पायल-पायल भोर

आख़िर दुविधा मिट गई, घर लौटे चित चोर
रैना-रैना सी लगी, लगी भोर भी भोर

*

प्रीत पगी पगडंडियाँ, लिए चलीं उस ओर
करवट-करवट कामना, सलवट-सलवट भोर

*

अपने तम से ही डरी, सहमी सी कमज़ोर
रात भिखारन माँगती, एक कटोरा भोर

*

सावन सूखा ही गया, अब भादों पर ज़ोर
गोरी करती कामना, भीगी-भीगी भोर

*

घर जब आये, बालमा, खिला नूर सब ओर
रौशन घर भर देख कर, मैंने समझा, भोर

*

रोज महाभारत यहाँ, अनाचार भी घोर
लानी होगी साँवरे, गीता वाली भोर

*

सौ-सौ बिनती की मगर, पिघला नहीं कठोर
हर्जाने में, अंततः, लेकर माना भोर

*

बिटिया झोली डाल कर, करती फिरती शोर
दो आने में रात लो, दो पैसे में भोर

*

आख़िर यह प्रतिकूल भी, मोड़ा अपनी ओर
उसने तो रैना लिखी, हमने बाँची भोर

*

कुछ दिन कायम और रख, ये साँसों की डोर
अभी देखनी है मुझे, आँगन उगती भोर

*

तनिक लजा कर प्रियतमा, निरखे नैनन कोर
लगा तिमिर को भेद कर, मुझ तक पहुँची भोर

*

मन का अपना राज है, मन पर किसका ज़ोर
चाहे तो देखे तमस, भले खिली हो भोर

*

रूप तेज ऐसा प्रबल, हर वर्णन कमज़ोर
हर बिटिया हर आँगने, चलती फिरती भोर

***

संपर्क : ए-53, त्रिवेणी नगर, गोपाल नगर बायपास, जयपुर, राजस्थान
मोबाइल : 9413954163

कविताएँ

लालित्य ललित

मेट्रो,उम्मीद और प्रेम की पींगे

आप मेट्रो में हैं
प्रेम का प्रवेश पत्र आपके हाथ है
आप बेशक प्रेम करें
चुगली करें, फुस्फुसाये
किसी को कोई फ़िक्र नहीं.....
आप का मोबाइल बहुत देर से शान्त है
फिर भी आप
उसे खुजलाने में लगे हैं
सोच रहे हैं नेटवर्क नहीं
या बन्दी या बंदा आज फ़ोन पिक
नहीं कर रहा
कुछ करना पड़ेगा....
कुछ लोग सटे खड़े है
उन्हें सटने में मज़ा मिलता है
तो किसी को सटाने में
लोग उतरना चाहते हैं
आओ नहीं चाहते कि बगल वाली
इतनी जल्दी उतर जाए
अभी तो कहानी शुरू ही हुई है
मतलब
मतलब साफ़ है कि
इंटरवल पसंद नहीं.....
बुज़ुर्ग औरतें
बिंदास घर का कबाड़ लेके चलती हैं
पता है भौंदू किसिम के लोग हैं
सीट दे ही देंगे
अपनी चल रही बेटी से फुसफुसाती है
इस फुसफुसाहट को
पूरा डिब्बा सुनता है
तेरी बुआ तीनों ही तेज़ हैं
आती है तो
झुनझुना ले आती हैं
अच्छा,तू बता शादी में लहँगा पहनेगी
या सूट
मेहंदी वाले दिन का क्या सोचा!
पग फेरे वाले दिन
बेटा, हनीमून पर हेवी कपड़े न ले जाइयो
बेटी-मम्मा, बस भी करो
क्यों लाइव शो करे जा रही हो
डिब्बे में ख़ुशी है
कि अब आगे क्या होगा
क्या लड़की हनीमून पर गोआ जाएगी
कुछ तो इतने उतावले
कि अपनी बाइट देने को तैयार
कुछ अपने अनुभव सुनाने को
कुछ खो चुके थे अपने दिनों में
इस चक्कर में कई अपना स्टेशन भूल कर
आगे दो स्टेशन पहुँच चुके थे
कुछ की आँखे बन्द थी
वे अभी लाइव मधुमास में व्यस्त थे
कुछ की इसी चक्कर में
जेब कट चुकी थी
वे सटने में मगन थे
अब सटोगे तो कुछ तो कटोगे....
कई लड़कियाँ अपने दोस्तों के साथ हैं
वे सोचती हैं आज मिला मक़द्दर
खर्च कर दो
यहाँ खर्च उनका प्रेमी है
जो जानते बुझते खर्च हो रहा है
यह आज की फिलासफी है
उसकी मँगनी हो चुकी है
लड़की अनजान है
पर खरीद और खर्च का
शून्यकाल सत्र जारी है
और यह विंडो शॉपिंग दोनों को पसंद है....
सभी यात्रियों से अनुरोध है
कि फर्श पर न बैठें
यात्रियों को असुविधा हो सकती है
अगला स्टेशन मंडी हाउस है
सभी दरवाज़ें दाँई और खुलेंगे
आँखों के इशारे तेज़ हुए
झप्पी और पप्पी के सत्र भी
सब तीस सेकिण्ड से भी कम
मेट्रो चली गई
एहसास की नदी दिल में
पहले से ज़्यादा बहने लगी थी
अब मंडी हाउस से बाटा चौक जाना था
येलो लाइन से अगली मेट्रो
नया प्रेमी
नई लड़की
हाथों में हाथ
फुसफुसाहट जारी है
भीड़ भी
किसी को परवाह नहीं
आप किस्स के एडवांस सत्र में या
प्रेम के रिफ्रेशर कोर्स में हैं
मेट्रो दौड़े जा रही है
आगे।

***

समझना मुझे कुछ ऐसे

तुम्हारे होठों की कसम
आज भी
उस तपिश को
महसूस करता हूँ
गज़ब है यह संसार
इसके संसाधन
इसकी चमत्कृत सी दुनिया
कभी इससे अचंभित भी होता हूँ
मुस्कराता भी हूँ
अकेले में
सोचता हूँ कि
कितने भरे-भरे दिन थे हमारे
शामों का सुरमई एहसास भी
आज भी
उन दिनों की स्मृति को वजूद में
बनाये रखता है
जो काफी है
मेरे जीवन को
हवा-पानी देने के लिए
यह प्यार का मीटर
कितनी फ्रीक्वेंसी पर फिक्स होता है
इसको
आज तक नहीं जान पाया
पर मेरे दिल में अभी भी
नाम तुम्हारा ही धड़कता है
यह सच है
अब क्या गीता पर हाथ रखूँगा
तभी सच मानोगी
पगली साहिबा....

***

नए सिरे से प्यार

मैं चाहता हूँ
जिस तरह हम साल में
घरों की पुताई और साफ़ सज्जा पर
ध्यान देते है
उसी तरह एक दूसरे पर भी दें
आज से सारे अवगुणों की सफ़ाई
कल से मन की, परसों से तन की
अरे!
वाह केवल तीन दिन में ही घर महकने लगा
किताबें अपनी जगह
किचन अपनी जगह
भगोना,कड़छी,चम्मच सब व्यवस्थित
अलमारी से लेकर अलगनी तक
सब चाक-चौबन्द
आँखों ने समझ ली आँखों की भाषा
अब हम प्रेम में थे
कई-तरह की परिभाषाओं को समझने में
उसके निष्कर्ष तक पहुँचने में
उसको अमलीजामा पहनाने तक
सुबह बिस्तरा बताने लगा
कि कल क्या निष्कर्ष हुआ
क्या दूरगामी परिणाम आए
तृप्ति का एक समंदर हम दोनों में
रह-रह कर दौड़ने लगा
फिर से एक बार
अभी कई परीक्षाएँ बाकी थीं
पूरे एक माह की छुट्टियाँ थीं
घर को घर बना
हम निकल गए पहाड़ पर
जहाँ कई सवाल सुलझाने थे
वैसे भी जीवन ही वही है
जो आपस में सूझते बूझते निकल जाए
आज वाकई में
प्यार का क क हरा सीख लिया
बहुत दिनों बाद
एहसास की नदी बहने लगी
एक बार फिर हम में
अपनी रफ़्तार से
बेधड़क रफ्ता-रफ्ता।

***

बी-3/43, शकुन्तला भवन, पश्चिम
बिहार, नई दिल्ली-110063
lalitmandora@gmail.com

ग़ज़ल

आशीष नैथानी

1

ज़िन्दगी के सफ़े पलटते हुए
तुझको समझा हूँ उम्र ढलते हुए
तुमने देखा न पंछियों का जतन
हमने देखा है शहर जलते हुए
उफ़! तेरे शहर की रआनाई
मुझको दिखती है क्यों पिघलते हुए
ज़िंदगी इक निगारखाना है
कितने क़िरदार हैं बदलते हुए
दर्द था, लफ्ज़, माँ की दुआ
चन्द अशआर थे निकलते हुए
फ़र्श पर पैर देखकर रखना
ख़्वाब टूटे हैं आँख मलते हुए

***

2

दूर दिखता तो है, आसमाँ हो न हो
मैं वहाँ जाऊँ पर वो वहाँ हो न हो
मैं न करता फ़िरूँ उसपे दावा मेरा
पूछ तो लूँ उसे, उसकी हाँ हो न हो
मील के पत्थरों मैं ज़रूर आऊँगा
अब सफ़र में कोई कारवाँ हो न हो
बारिशें धुल गई मेहनतों के निशाँ
वक़्त पर बारिशों का निशाँ हो न हो
अब मिले हैं तो पल भर करें गुफ़्तगू
फिर समय हो न हो, दास्ताँ हो न हो
हाथ में हाथ रख ख़्वाब बुनते रहें
मैं रहूँ ना रहूँ, तू यहाँ हो न हो

***

3

राज़ की बात हम तलक ही रहे
ये मुलाक़ात हम तलक ही रहे
कुछ सवालात पूछ बैठे हम
कुछ सवालात हम तलक ही रहे
उनके इल्ज़ाम सब थे झूठे मगर
सारे इस्बात हम तलक ही रहे
डर है तुमको बहा न ले जाये
ऐसी बरसात हम तलक ही रहे
इन सितारों को बाँट ले दुनिया
चाँदनी रात हम तलक ही रहे

***

(इस्बात - प्रमाण/सुबूत)

4

देखा है ख़ाब आपको पाने के वास्ते
अच्छी दवा है दर्द भुलाने के वास्ते
माचिस की तीलियों से कोई पूछता नहीं
कुरबाँ हुई जो शम्अ जलाने के वास्ते
देखी न जाए ऐसी फटेहाल ज़िन्दगी
चप्पल रखे थी अपने सिराने के वास्ते
मैंने कहा उसे कि मुझे भूल भी जा अब
फ़ाका किये थी जो मेरे आने के वास्ते
तस्वीर पोंछते हुए किस्सा सुनाये माँ
बेटा गया विदेश कमाने के वास्ते
छीने न आँख से कोई बनता हुआ 'सलिल'
ईंधन यही है आग जलाने के वास्ते

***

5

क्या हुआ कोशिश अगर ज़ाया गयी
दोस्ती हमको निभानी आ गयी
बाँधकर रखता भला कैसे उसे
आज पिंजर तोड़कर चिड़िया गयी
चूड़ियों की खनखनाहट थी सुबह
शाम को लौटी तो घर तन्हा गयी
लहलहाते खेत थे कल तक यहाँ
आज माटी गाँव की पथरा गयी
कैस तुमको फ़ख्र हो माशूक पर
पत्थरों के बीच फिर लैला गयी
आज फिर आँखों में सूखा है 'सलिल'
ज़िंदगी फिर से तुम्हें झुठला गयी

***

6

एक बीमार की दवा जैसे
तुम मेरे पास हो ख़ुदा जैसे
साँस-दर-साँस ज़िन्दगी का सफ़र
और तुम आख़िरी हवा जैसे
उनकी आँखों में बस मेरा चेहरा
आइनों से हो सामना जैसे
रूह बिन जिस्म का वजूद इतना
इक लिफ़ाफ़ा है बिन पता जैसे
आपकी मुस्कुराहटों की कसम
हो गया जन्म दूसरा जैसे

***

नैथानी भवन, अम्बीवाला, प्रेमनगर, देहरादून-248007
मोबाइल- 7032703496, ashish.naithani.salil@gmail.com

कविताएँ

संजय वर्मा 'दृष्टि'

प्रदूषण के गुबार

भौरे की निंद्रास्थली
होती बंद कमल में
उठाती है सूरज की पहली किरण
देती दस्तक
खुल जाती द्वार की तरह
पंखुड़ियाँ कमल की

गुंजन से करते स्वागत
फूलों का
मुग्ध समर्पित हो
फूल देते है दानी की तरह
किट -पतंगों को मकरंद

भोरें कभी
कृष्ण की राधा के लिए
बन जाते थे ,सन्देश वाहक
मूछों पर मकरंद लिए
कृष्ण की माला का

बालों में सजे
राधा के फूलों में बैठ
बतियाते गुंजन से-
कृष्ण याद कर रहे

आज वो बात कहाँ ?
फूलों से खुशबू छीन रहे
प्रदूषण के गुबार
इसलिए संदेशवाहक भोरें
हो गए अपने कर्तव्य से विमुख
***

गुलमोहर की अर्जी

गुलमोहर किसी से
कुछ नहीं कहता
वो देता है आँखों को
आकर्षण ,मन को सुकून
गर्मी की तपिश से
सुख जाते है कंठ
तब ,मिट्टी के मटकों से
हो जाती है दोस्ती इंसानो की
लकड़ी कवेलू से बनी
झोपड़ियाँ देने लगती सुखद नींद
आम, नीम, पीपल के पेड़
बन जाते है माँ का आँचल
तब लगने लगता
क्यों काट दिए हमने
बेजुबान वृक्षों को
सुख सुविधाओं के
मतलबों के कारण
अब शहरों में
कुछ गुलमोहर ही बचे
जो प्रतिनिधित्व कर रहे
गाँव में बचे पेड़ों का
और लगा रहे
अर्जी सुर्ख फूलों से
बचे पेड़ों को बचाने
और नए लगाने की
***

बेटी की यादें

मन में दु:ख की बदली
घुमड़ जाती
यादें आँखों से आँसू बन
बरस जाती

बिदाई को जैसे आँखों को
रुलाने का प्रमाण-पत्र मिला हो
घर-आँगन की तस्वीरों में
कैद यादें
रह-रहकर हमें रुलाती है
जब याद बेटी की आती है

दरवाज़े पर दस्तक
भले ही हवाओं ने दी हो
बावले मन को पग-पग
दौड़ा जाती है

बिदाई और यादों की
राजदार नहीं होती है आँखे
क्योकि ये दु:ख-दर्द की
वेदना को पचा नहीं पाती

ये आँखे बिना कहे बता जाती
इनके रिश्तों को
आँसू बन
जब याद बेटी की आती।
***

125 शहीद भगत सिंह मार्ग, मनावर
जिला, धार (म.प्र.) 454446
antriksh.sanjay@gmail.com

फार्म IV
समाचार पत्रों के अधिनियम 1956 की धारा 19-डी के अंतर्गत स्वामित्व व अन्य विवरण
(देखें नियम 8)
विभोम स्वर
1. प्रकाशन का स्थान :
सीहोर, मध्य प्रदेश
2. प्रकाशन का अंतराल : त्रैमासिक
3. मुद्रक का नाम : जुबैर शेख़
पता : शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एमपी नगर, भोपाल, मप्र 462011
4. प्रकाशक का नाम : पंकज कुमार पुरोहित
पता : पी. सी. लैब, शॉप नंबर 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मप्र, 466001
5. संपादक का नाम : पंकज सुबीर
पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
6. उन व्यक्तियों के नाम / पते जो समाचार पत्र / पत्रिका के स्वामित्व में हैं
स्वमी का नाम : पंकज कुमार पुरोहित
पता : रघुवर विला, सेंट एन्स स्कूल के सामने, चाणक्यपुरी, सीहोर, मप्र 466001
मैं, पंकज कुमार पुरोहित, घोषणा करता हूँ कि यहाँ दिए गए तथ्य मेरी संपूर्ण जानकारी और विश्वास के मुताबिक सत्य हैं।

हस्ताक्षर
पंकज कुमार पुरोहित
प्रकाशक

कविताएँ

धनंजय कुमार

वह कविता

उसने कहा
आज मैं हूँ उदास
लिखो कोई कविता
जो कर दे मेरा मन परिवर्तित।
मैंने शायद ऐसी कविता
लिखी नहीं थी,
इसलिए एक खाली पन्ना
थमा दिया उसके हाथों में।
एकाग्रचित्त और शांत हृदय
उसकी नज़रें कुछ देर
दिखीं खाली पन्ने पर
और कुछ देर मेरे चेहरे पर
होठों की मुस्कान
लिए आँखों में,
मुझसे हाथ मिला कर चला गया।
रह गया ढूँढ़ता मैं
खाली पन्ने पर
वह कविता
जिसको उसने पढ़ ही लिया।
***

सब छुपा गई

फूल के चेहरे पर
जड़ी हुई मुस्कराहट
बिखेर गई खुशबू
खिला गई दिलजलों को
बाकी सब छुपा गई-
नन्हें बीज का स्फुरण

पुस्तक : अधखुली खिड़की
लेखक : धनंजय कुमार
प्रकाशक : अयन प्रकाशन, 1/20, महरौली, नई दिल्ली- 110030
मूल्य : 400 रुपये
पृष्ठ संख्या : 208

कली के सूखे आँसू
माली के माथे पर पसीने की बूँदें
गुलदस्ते की सिसकियाँ
भँवरे का प्रेमासक्त चुम्बन
और एक ताज़ी मज़ार का
ठंडा आलिंगन।
***

बूँद सी ज़िंदगी

एक-एक पल के साथ
बूँद-बूँद सी टपकी
चली जाती है ज़िंदगी
लेकिन आज खड़ा हूँ
उसी लम्हे की आड़ में
जो कभी न गुज़रेगा
क्योंकि वह अभी
शुरू ही कहाँ हुआ
अब नहीं टपकने वाली
जीवन की वह एक बूँद
जिसे मैं डुबो आया हूँ
सागर में।
***

एक दूसरे में

यह सब बह जाना ही तो है
नाव का नदी में
नदी का सागर में
सागर का धरती में
धरती का आकाश में।
यह सब पी लेना ही तो है
आकाश का पर्वत को
धरती का समन्दर को
और प्रकाश का अंधकार को।
यह सब समा जाना ही तो है
अनुभूतियों का स्मृति में
वासना का स्वप्न में
और हमारा एक दूसरे में।
***

संपर्क : 7806, Wendy Ride Lane, Annandale, VA-22003, USA
dkyoga@hotmail.com

लेखकों से अनुरोध

'विभोम स्वर' में सभी लेखकों का स्वागत है। अपनी मौलिक, अप्रकाशित रचनाएँ ही भेजें। पत्रिका में राजनैतिक तथा विवादास्पद विषयों पर रचनाएँ प्रकाशित नहीं की जाएँगी। रचना को स्वीकार या अस्वीकार करने का पूर्ण अधिकार संपादक मंडल का होगा। प्रकाशित रचनाओं पर कोई पारिश्रमिक नहीं दिया जाएगा। बहुत अधिक लम्बे पत्र तथा लम्बे आलेख न भेजें। अपनी सामग्री यूनिकोड अथवा चाणक्य फॉण्ट में वर्डपेड की टैक्स्ट फाइल अथवा वर्ड की फाइल के द्वारा ही भेजें। पीडीएफ़ या स्कैन की हुई जेपीजी फ़ाइल में नहीं भेजें। कृपया रचनाओं की साफ़्ट कॉपी ही ईमेल के द्वारा भेजें, डाक द्वारा हार्ड कॉपी नहीं भेजें, उसे प्रकाशित करना हमारे लिए संभव नहीं होगा। रचना के साथ पूरा नाम व पता, ईमेल आदि लिखा होना ज़रूरी है। आलेख, कहानी के साथ अपना चित्र तथा संक्षिप्त सा परिचय भी भेजें। पुस्तक समीक्षाओं का स्वागत है, समीक्षाएँ अधिक लम्बी नहीं हों, सारगर्भित हों। समीक्षाओं के साथ पुस्तक के कवर का चित्र, लेखक का चित्र तथा प्रकाशन संबंधी आवश्यक जानकारियाँ भी अवश्य भेजें।

-संपादक
vibhomswar@gmail.com

कविताएँ

विजय कुमार

मोहब्बत

तुम अपने हाथों की मेहँदी में
मेरा नाम लिखती थी और
मैं अपनी नज़्मों में तुझे पुकारता था जानां;
लेकिन मोहब्बत की बातें अक्सर किताबी होती हैं
जिनके अक्षर
वक्त की आग में जल जाते हैं
किस्मत के दरिया में बह जाते है;
तेरे हाथों की मेंहदी से मेरा नाम मिट गया
लेकिन मुझे तेरी मोहब्बत की कसम ,
मैं अपने नज़्मों से तुझे जाने न दूँगा...
ये मेरी मोहब्बत है जानां !!
***

अलविदा

सोचता हूँ
जिन लम्हों को;
हमने एक दूसरे के नाम किया है
शायद वही ज़िन्दगी थी!
भले ही वो ख़्यालों में हो,
या फिर अनजान ख़्वाबों में ..
या यूँ ही कभी बातें करते हुए ..
या फिर अपने-अपने अक्स को,
एक दूजे में देखते हुए ....
पर कुछ पल जो तुमने मेरे नाम किए थे...
उनके लिए मैं तेरा शुक्रगुज़ार हूँ!!
उन्हीं लम्हों को;
अपने वीरान सीने में रख,
मैं तुझे अलविदा कहता हूँ.....!!!
अलविदा !!!!!!
***

झील

आज शाम सोचा
कि ,
तुम्हें एक झील दिखा लाऊँ...
पता नहीं तुमने उसे देखा है कि नहीं..
देवताओं ने उसे एक नाम दिया है...
उसे ज़िन्दगी की झील कहते हैं...
बुज़ुर्ग,अक्सर आलाव के पास बैठकर,
सर्द रातों में बताते हैं कि
वह दुनिया कि सबसे गहरी झील है
उसमें जो डूबा,
फिर वह उभर कर नहीं पाया।
उसे ज़िन्दगी की झील कहते हैं...
आज शाम,
जब मैं तुम्हें,अपने संग,
उस झील के पास लेकर गया,
तो तुम काँप रही थी,
डर रही थी;
सहम कर सिसक रही थी
क्योंकि,
तुम्हे डर था, कहीं मैं
तुम्हें उस झील में डुबो न दूँ.....
पर ऐसा नहीं हुआ....
मैंने तुम्हें उस झील में
चाँद सितारों को दिखाया
मोहब्बत करने वालों को दिखाया
उनकी पाक मोहब्बत को दिखाया
तुमने बहुत देर तक
उस झील में,
अपना प्रतिबिम्ब तलाशा
तुम ढूँढ़ रही थी..
कि
शायद मैं भी दिखूँ ..
तुम्हारे संग,
पर
ईश्वर ने मुझे छला
मैं क्या.. मेरी परछाईं भी,
झील में नहीं थी.....तुम्हारे संग !!!
तुम रोने लगी ....
तुम्हारे आँसू , बूँद-बूँद
खून बनकर झील में गिरते गए ..
फिर झील का गन्दा और ज़हरीला पानी
साफ होता गया..
क्योंकि अक्सर ज़िदगी की झीलें ..
गन्दी और ज़हरीली होती है ..
फिर, तुमने
मुझे आँखे भर कर देखा...
मुझे अपनी बाँहों में समेटा ...
मेरे माथे को चूमा..
और झील में छलाँग लगा दी ...
तुम उसमें डूबकर मर गई
और मैं...
मैं ज़िंदा रह गया,
तुम्हारी यादों के अवशेष लेकर,
तुम्हारे न मिले शव की राख
अपने मन पर मलकर
मैं ज़िंदा रह गया
मैं युगों तक जीवित रहूँगा
और तुम्हें आश्चर्य होगा पर
मैं तुम्हें अब भी
अपनी आत्मा की झील में
सदा देखते रहता हूँ..
और हमेशा देखते रहूँगा..
इस युग से अनंत तक ..
अनंत से आदि तक ..
आदि से अंत तक..
देखता रहूँगा ...देखता रहूँगा ...
देखता रहूँगा ...
***

मर्द और औरत

हमने कुछ बनी बनाई
रस्मों को निभाया
और सोच लिया कि
अब तुम मेरी औरत हो
और मैं तुम्हारा मर्द !!!
लेकिन बीतते हुए समय ने ज़िन्दगी को
सिर्फ टुकड़े-टुकड़े किया।
तुमने वक्त को
ज़िन्दगी के रूप में देखना चाहा
मैंने तेरी उम्र को
एक ज़िन्दगी में बसाना चाहा।

कुछ ऐसी ही
सदियों से चली आ रही बातों ने
हमें एक दूसरे से और दूर किया
प्रेम और अधिपत्य
आज्ञा और अहंकार

एक थी माया
लेखक : विजय कुमार

संवाद और तर्क-वितर्क
इन सब वजह और बेवजह की बातों में
मैं और तुम
सिर्फ मर्द और औरत ही बनते गए
इंसान भी न बन सके अंत में।
कुछ इसी तरह से ज़िन्दगी के दिन
तन्हाइयों की रातों में ढले
और फिर तन्हा रात उदास दिन बनकर उगे!
फिर उगते हुए सूरज के साथ
चलते हुए चाँद के साथ
और टूटते हुए तारों के साथ
हमारी चाहतें बनीं और टूटती गईं
और आज हम अलग हो गए हैं
बड़ी कोशिश की
मैंने भी और तुमने भी लेकिन,
न मैं तेरा पूरा मर्द बन सका,
और न तू मेरी पूरी औरत।
ईश्वर भी कभी-कभी
अजीब से शगल किया करता है।
.....है न प्रियतमा !!!
***

संपर्क : फ़्लैट नं. 402, फिफ्थ फ्लोर, प्रमिला रेसिडेंसी, मकान नंबर 36-110/402, डिफेंस कॉलोनी, सैनिकपुरी, पोस्ट सिकंदराबाद, 500094, तेलंगाना
मोबाइल: 98497465000
ईमेल vksappatti@gmail.com

कविताएँ

भरत प्रसाद

वह कौन है ?

सैकड़ों दिशाओं से कोई एक
निरन्तर,
पुकारता रहता है मुझे
देखा है, कहीं तो देखा है
गाँवों में, बस्तियों में
गलियों, चौराहों पर
मेड़ों पर बैठे हुए
पगडंडियों पर भागते हुए
कौन है वह ?
भयानक अन्धेपन में
जिसे पहचान नहीं पाया
अरे, यही तो है
अपनों से सौ गुना अपना
यही तो साँसों की रीढ़ है
यही है मेरे जीवन का रहस्य॥
देखो, देखो तो
इसकी भुजाओं में
कितनी प्यास बाकी है ?
पौधे की तरह रोपे हैं इसने
अनगिनत बचपन
बीज की तरह बोए हैं
अनगिनत प्राण।
गौर से देखो इसे,
तुम्हारी आँखों की ताकत है,
पाँवों का बल है
धड़कन है सीने की
मनुष्यता की सबसे गहरी ईंट
खोजना खुद को इसके भीतर।
देखना इनको जैसे
किसी अनलिखे इतिहास को पढ़ना है
इनको छूना
जैसे अपनी जड़ों का स्पर्श करना है
दिलो जान से चाहना
मानों ऋण उतारना है इनका।
जज़्ब है इन आँखों में
सदियों का संताप
दफ़्न है सीने में
पीढ़ियों की चीत्कार
दिल में मचलता है
पूर्वजों का अपमान,
अरे, अरे !
क्या नहीं है इस ढाँचे में ?
कर्मठता का ज्वारभाटा
मोह का गाढ़ा रसायन
मान-सम्मान का पानी
पछाड़ खाता कोई दरिया
अरे !
कितने प्रश्न हैं इन पुरानी आँखों में ?
***

जड़ों की महानता का गीत

जैसे शब्द-शब्द में छिपा है
हृदय में बरसते अर्थों का जादू
जैसे वाणी में छिपी है
असीम वेदना की ऊँचाई
जैसे शरीर
हर माँ की कीमत सिद्ध करती है
वैसे ही हर माँ से उठती है
पृथ्वी जैसी सुगन्ध
वृक्षों से झरती है
जड़ों की महानता
गूँजती है कल्पना में
सृष्टि की महामाया
धूल-मिट्टी में
प्राणों की पदचाप् सुनाई देती है।
दाने-दाने में जमा है
अनन्त काल से बहता हुआ
आदमी का खून
उतरना फसलों की जड़ों में
तुम्हें विस्मित कर देगी
खून-पसीने की बहती हुई
कोई नदी,
पूछो तो किस पर नहीं लदा है
रात-दिन का रहस्यमय क़र्ज़ ?
सोचो ज़रा कौन जीवित है-
सूरज के नाचे बिना ?
***

हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग - 793022
मेघालय, मो. 9863076138

कविताएँ

रेखा भाटिया

तुम्हारा एहसास

तुम मौजूद रहो मेरी ज़िंदगी में
हमेशा-हमेशा के लिए।
तुम्हारे साथ बीती हर शाम
एक खुबसूरत गीत बन जाती है।
हर गुज़रा पल
जीवन का संगीत बन जाता है,
जिसके सात सुर
तुम्हारे प्यार-से सुरीले सतरंगी हैं,
जिसकी हर धुन तुम्हारी चाहत से सजी है।
चंद शब्दों में कैसे समझाऊँ
मेरे तुम्हारे रिश्ते को।
शीत ऋतु की सिरहन में
गुनगुनाती धूप हो तुम मेरे लिए।
चाँद की ठंडक
और सागर की गहराइयाँ जानी मैंने तुममें
हवा, बादल, बहते पानी से
स्वच्छ लगे तुम मुझे।
ऊँचे पर्वत-सी दृढ़ता का आभास भी
तुम्हीं में महसूस करूँ,
जिसकी ऊँचाइयों से
मैं आसमान छूने की ख़्वाहिशें पूरी करूँ।
जिसके साए में
जीवन के गुज़रते तूफ़ानों का डर ना लगे मुझे
तुम्हारे साथ को पाकर
सुनहरे-रंगीले सपनों आँखों में भर लेती हूँ।
मेरी साँसें, दिल की धड़कन,
भूख-प्यास-सी
ज़रूरत हो तुम मेरे लिए,
तुम्हारे साथ ने पुलकित किया मुझे
मातृत्व सुख से
और किया अनुभव मैंने
जीवनकाल की संध्या और प्रभात को।
धूप-छाँव, सजीवता, ऊर्जा, जीवन्तता
इस ज़िंदगी में,
तुम्हीं सब कुछ हो मेरे लिए
प्राणवायु मेरे भीतर भरते,
लेकिन कई बार,
बार-बार अनबुझ पहेली बन जाते हो।
सोचती हूँ तब मैं तुम्हें जानती नहीं
सिर्फ यूँहीं पहचानती हूँ,
मेरी ज़रूरत तुम,
मेरी साँसें मेरे दिल की तुम धड़कन।
बहुत तेज़ चलने लगते हो,
तेज़ बहने लगते हो,
थम-सा जाता है तब
मेरा जीवन प्रश्न बनकर सामने मेरे।
तब तुम से सुलझाते-सुलझाते
पहेली का जवाब भी
तुम्हीं में खोजती लगती हूँ।
क्या हो तुम मेरे आसपास
प्रति पल, प्रति क्षण?
कभी अकेलेपन से आग्रह-अनुग्रह करूँ
साथ का
तो अकेलापन
मनमुटाव कर साथ छोड़ देता है।
कोई विकल्प सूझता नहीं तुम्हारे बिना
क्योंकि मेरा मैं भी, मेरा साथ छोड़ देता है
तुम मौजूद रहो मेरी ज़िन्दगी में
हमेशा-हमेशा के लिए।
तुम्हारे साथ होने से जीवन जीवंत लगता है
जीने की चाहना प्रबल होती है
कई जन्मों के लिए।
परमात्मा ने भी
तुम्हीं से जोड़कर मेरी रेखा लिखी है
तुम मौजूद रहो मेरी ज़िन्दगी में
हमेशा-हमेशा के लिए।

***

मेरा घर

चारों ओर बिखरे पड़े हैं मेरे विचार
बिखरी पड़ी है मेरी आस
जिन्हें समेटने का कर रही हूँ
मैं भरपूर प्रयास।
जैसे हर वक्त समेटने का प्रयास करुँ
मैं अपना सामान।
कहाँ है मेरा घर
कौन सा मेरा घर
जहाँ बिखरे मेरा भी सामान।
सालों गुज़र गए
जिसका पता मैं अब तक खोज रही हूँ।
परायेपन के अहसास में
अपनों के बीच अपनी पहचान खोजती
इस घर में मेहमान हूँ
या हुक्म की गुलाम।
पहचान क्या है मेरी
मेरी उससे पहचान तो हो जाए।
मेरी बेटी में अपनी परछाई देखती हूँ
आने वाले उस काले डर से डरती हूँ
बिटिया की बात से याद आया
कभी मैं भी माँ से लड़ा करती थी
मेरा सुसराल मेरा घर है।
मेरा नया साथी
मेरी नई राहें
मेरा सुसराल जो मुझे बहुत भाते हैं.....
हाँ मैं परायी हूँ
यह बोल माँ ने नहीं
मैंने माँ को पराया कर दिया था....
पिता का घर छूटा
मैं हो गई परायी
पति का घर तो मेरी सास का था
नए घर की तलाश में बैंड-बाजे साथ
डोली में बैठ साथ आ गई इस घर में
नया घर सपनों का,
जहाँ की महारानी मेरी सासु माँ
कभी महसूस नहीं कराया मुझे
मैं भी एक जीव हूँ।
बसंत दर बसंत बीत गए
पंछी अपने घोंसलों से हर बसंत उड़ गए
परन्तु मैं तिनका-तिनका जोड़
आज भी अपना घोंसला ना बना पाई।
माँ बनी
तो मेरी माँ मेरी मदद के लिए आई

मेरी तरह वो भी यहाँ दिन-रात खटकती
अपेक्षाएँ तो सभी की आसमान छूती
पर मेरी माँ
बिन बुलाए मेहमान के बोध से पिसती
बिटिया संग बढ़ चला
मेरी ज़िम्मेदारी का दायरा
बड़ी होती बिटिया
सास का दबदबा और टूटती मेरी कमर
पिताजी के जाते ही मेरी बेबस माँ
ढूँढ़ती सहारा आस लगाये मुझ पर
पर बोलो ना माँ कौन सा मेरा घर!
तुम आती हो तो समाज वाले क्या कहेंगे?
रस्मों-रिवाज, संस्कार, परम्पराएँ
सब टूट जाती हैं
सबको याद आती हैं नसीहतें
जो मुझे दी जाती हैं...
मेरा अन्दर जो टूटता है
क्यों किसी को नज़र नहीं आता
सासु माँ से सासु शब्द हट क्यों नहीं जाता
साथी भी मेरा
पति से पहले बेटा है बन जाता।
वक्त गुज़रा है....
बिटिया घर बसाने जा रही है....
वही दबंगता,
सुसराल के प्रति अत्यंत लगाव
बिटिया माँ की परछाईं छोड़
पुरुष संग सम-जीव बन जीना सीखो....
तोड़ो इन रस्मों-रिवाजों,
संस्कारों, परम्पराओं को
तिनका-तिनका जोड़
अपना ऐसा बसेरा बसाओ
तुम्हारा घर
जहाँ स्वागत हो सके तुम संग
तुम्हारी माँ का भी
तुम्हारी माँ का घर
नानी का घर अब तक नहीं बन पाया है..
मेरा भूत
तुम्हारे भविष्य का काला सच न बने
तुम्हारे सुसराल के हृदय में
एक माँ का सिर्फ एक माँ का दिल धड़के
मेरी आशंकाओं को ग्रहण लगे.....

***

संपर्क : 9305 Linden tree lane, Charlotte, NC-28277, USA
ईमेल : rekhabhatia@hotmail.com

ग़ज़ल

त्रिवेणी पाठक

1

आज हूँ खाली, किसी दिन फिर भरा हो जाऊँगा
आँच में तप कर अगर निकला-खरा हो जाऊँगा
यकबयक चलते बने -सारे तअल्लुक़ तोड़ कर
क्या लगा था? चोट खा कर अधमरा हो जाऊँगा
तुम मुझे भी क्या समझते हो मियाँ -अपनी तरह
आज हूँ कुछ और, कल कुछ दूसरा हो जाऊँगा
अब समंदर दो, कि दरिया दो, कि दो आँसू मुझे
ज़र्द पत्ता हूँ, भला कैसे हरा हो जाऊँगा ?
जज़्ब कर रक्खा है ख़ुद को रोटियों की फ़िक्र में
प्यार ने गर छू लिया तो बावरा हो जाऊँगा
सोचता हूँ आज जी लूँ - ख़्वाब जैसी ज़िंदगी
एक दिन सच्चाइयों का मक़बरा हो जाऊँगा
है अभी जो कुछ नमी-नर्मी - उसे महसूस लो
वक़्त के हत्थे चढ़ा तो ख़ुरदरा हो जाऊँगा
तुम अभी मुमताज बनने का हुनर तो सीख लो
ताज क्या, सारा का सारा आगरा हो जाऊँगा

***

2

ज़िंदगी दरअस्ल बस क़िस्सा-कहानी ही तो है
हसरतों की, चाहतों की तर्जुमानी ही तो है
साथ इसके चल पड़ो, ठहरे रहो या डूब लो
उम्र का क्या ? उम्र दरिया की रवानी ही तो है
पाँव के नीचे ज़रूरी है ज़मीं थोड़ी बहुत
आसमाँ का ख़्वाब, साहब ! आसमानी ही तो है
था जहाँ कहना, वहाँ पर कह न पाये उम्र भर
काग़ज़ों पर शेर लिखना बेज़ुबानी ही तो है
कौन से सुर्ख़ाब के पर थे लगे मुझमें भला ?
जो उड़ा हूँ, सब उसी की मेहरबानी ही तो है
एक रिश्ता चूड़ियों में टूट कर चुभता रहा
यूँ अगर देखें - कलाई पर निशानी ही तो है

***

3

बेनज़र दीद का भला कर दे
अक़्स के पास आइना कर दे
रोज़ ख़ुशियाँ सुकूँ नहीं देतीं
आज थोड़ा सा ग़मज़दा कर दे
हूँ मैं ख़ुद की गिरफ़्त में कब से
आ, मुझे क़ैद से रिहा कर दे
मिल गयी वो तो फिर करूँगा क्या
यार, मंज़िल को रास्ता कर दे
हो गया हूँ बहुत सयाना मैं
देख ! यूँ कर कि बावला कर दे
जी करे है - गले मिलूँ, यारा !
अब अदावत रफ़ा-दफ़ा कर दे

***

4

दिलों के बंद दरवाज़ों को अक्सर खोल देता है
मेरा चेहरा मेरी ख़ामोशियाँ भी बोल देता है
कभी भी मैं ग़ुरूर-ए-फ़न के धोखे में नहीं आता
मेरी ख़ुद की निगाहों में मुझे वो तोल देता है
पिता की डायरी, माँ की पिटारी में छुपा बैठा
समय सुधियों का, गहरे राज़ हँसकर खोल देता है
यहाँ रिश्ते तो सौदे हैं, भला इनसे मैं क्या माँगूँ ?
ख़ुदा ! बस तू है जो देता है तो बिन मोल देता है
ये बचपन माँ की लोरीसा, इसे जब भी बुलाता हूँ
सिरहाने बैठकर कानों में मिश्री घोल देता है
मुझे मेरे पिता का दर्द तब महसूस होता है
मेरा बेटा पलटकर जब मुझे कुछ बोल देता है

***

5

हसरत-ए-दस्तारबंदी ने अकेला कर दिया
सिर्फ़ ख़ुद की फ़िक्रमंदी ने अकेला कर दिया
जब तलक था नासमझ, जोश-ओ-जुनूँ था साथ में
यार, मेरी अक़्लमंदी ने अकेला कर दिया
खुल के हँस पाना महीनों तक नहीं होता, मगर
क्या करें तनहापसंदी ने अकेला कर दिया
जिससे मिलते थे गले - नज़रें नहीं मिलतीं हैं अब
यार की अहसानमंदी ने अकेला कर दिया
सीढ़ियों पर छोड़ आया हूँ सभी परछाइयाँ
क़ामयाबी की बुलंदी ने अकेला कर दिया

***

26, कृष्णांचल कॉलोनी, मॉडल टाउन, बरैली, उप्र 243122
मोबाइल- 9897338533

सफ़र अभी भी बाकी है.....

मंजु मिश्रा

नारी
एक धुरी है
जिसके चलने से
जीवन चलता है
हर ज़िम्मेदारी को
नाजुक कहे जाने वाले
कन्धों पर उठाए
ये नारी
कहीं कल्पना है
तो कहीं सुनीता
कहीं बछेंद्री तो
कहीं मदर टेरेसा
ये माँ है
बहन है, बेटी है
लेकिन सबसे पहले
ये एक इंसान है
अरे भाई
पहले इसे इसके
इंसान होने का
हक़ तो दे दो
फिर और बहुत सी
बड़ी बड़ी बातें करना....

नारी सशक्तीकरण के विषय में बात करना अवश्य ही एक सुखद अनुभूति है, लेकिन जानना यह भी ज़रूरी है कि क्या सचमुच कोई फर्क आया है? हमारी सोच बदली है? हमारे हालात बदले हैं? या फिर इस समाज ने बड़ी चालाकी से नारी के कार्य क्षेत्र को तो विस्तृत कर दिया है; लेकिन उसे उसका उचित देय या यूँ कहें कि श्रेय देने से नकार दिया

संपर्क : 3966 Churchill Dr, Pleasanton CA 94588, USA
ईमेल : manjumishra@gmail.com

है। नारी की भूमिका अब मात्र पारिवारिक ज़िम्मेदारी माँ, पत्नी या गृहणी भर की ही नहीं रह गई है; बल्कि समाज के उत्थान, विस्तार, आर्थिक-व्यस्था, उद्योगों आदि क्षेत्रों तक भी उसका खासा दख़ल हो गया है। आज नारी हर क्षेत्र में पूरी ताकत से अपनी मौजूदगी, अपनी सफलता का एहसास करवा रही है, हर क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही है, लेकिन इस सब से बदला क्या है...घर के अन्दर, घर के बाहर.... यदि नारी के बाहरी आवरण, पहनाव उढ़ाव, बोल-चाल को छोड़ कर देखें तो आज भी कमोबेश स्थिति वही है; जो आज से दशकों पहले से चली आ रही है...यदि पूरे परिदृश्य का ठीक से आंकलन किया जाए तो कन्या जन्म दर, जनसँख्या अनुपात, बालिका शिशु मृत्यु दर जैसे आँकड़े स्थिति साफ़ करने के लिए काफी होंगे...और अंततः सच तो यह है कि आज भी स्थिति कुछ ख़ास नहीं बदली है.. कुछ अपवादों को छोड़ कर आज के उन्नत समाज में भी नारी की स्थिति विचारणीय ही है।

ख़ासतौर से यदि नारी की सुरक्षा की बात करें तो स्थिति बहुत ही भयावह है। इन के साथ होने वाली अप्रिय घटनाओं की तो जैसे बाढ़ सी आ गई है, एक घटना पर अभी पूरी तरह से कानून और इन्साफ़ की प्रक्रिया पूरी नहीं हो पाती कि कई-कई और घटनाएँ घट जाती हैं। मैं एक बेटी की माँ होने के नाते बहुत चिंतित हूँ कि ऐसे भयावह माहौल में कैसे मैं उसे शारीरिक एवं मानसिक सुरक्षा प्रदान करूँ....क्योंकि स्त्री के साथ होने वाले अपराध शरीर के साथ मन पर भी बहुत बुरा असर छोड़ते हैं।

इस सन्दर्भ में मेरा सभी प्रबुद्ध सजग, सहृदय पाठकों से एक सवाल है कि आख़िर स्त्री के साथ हुए अपराधों को सिर्फ अपराध के नज़रिए तक ही क्यूँ नहीं सीमित रखा जाता। नारी के साथ हुई किसी भी अपराधिक घटना को सदैव इज़्ज़त से ही क्यूँ जोड़ दिया जाता है और चूँकि मामला इज़्ज़त का है तो जिसकी इज़्ज़त लुटी होती है सामाजिक बहिष्कार का दंड भी उसे ही दिया जाएगा क्योंकि ये तो सदियों से चली आ रही परंपरा है, कि इज़्ज़त नाम की चीज़ का सारा दारोमदार बस नारी के ही कन्धों पर है फिर इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह अपराधी न हो कर पीड़ित है... यह एक मात्र ऐसा अपराध है; जहाँ लुटने वाला ही प्रताड़ना का अधिकारी है, लूटने वाला खुले आम आराम से समाज में घूम सकता है। पुरुष सत्तात्मक समाज में नारी दोयम दर्जे की नागरिक है और ऐसी मानसिकता के चलते आहत नारी जिसे न्याय मिलना चाहिए, उसे यह समाज जान कर या अनजाने में उसके साथ अन्याय करता है, और उसकी बेगुनाही को ही दंडित करता रहता है।

आज नारी सशक्तीकरण के नाम पर भले ही हम प्रत्यक्ष रूप से तो झंडा लेकर धरना दे कर बलात्कार की शिकार महिला की तरफदारी को खड़े दिखते हैं; लेकिन क्या हमारी सोच सच में बदली है, समाज का माहौल बदला है। ईमानदारी से एक सवाल खुद से पूछिए कि हममें से कितने हैं जो ऐसे किसी हमले की शिकार स्त्री को पूरे निर्मल मन से अपने घर-परिवार का हिस्सा बनाना चाहेंगे, यदि आपका जवाब हाँ है तो आप बधाई के पात्र हैं अन्यथा सच जानिये नारी को सम्मान देने के लिए हमें अपनी सोच बदलने की ज़रूरत है.... केवल एक दिन महिला दिवस मना लेने से, या दिखावे के लिए कुछ कार्यक्रम कर लेने से, या कि नारी सशक्तिकरण पर भाषण दे लेने भर से कुछ नहीं बदलने वाला।

वैसे नारी सशक्तिकरण के प्रयासों में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका नारी समाज की ही है, उन्हें भी पारंपरिक पुरुष सत्तात्मक समाज के ढाँचे से ऊपर उठ कर सोचने की ज़रूरत है, क्योंकि अक्सर समाज में नारी स्वयं भी नारी के विरोध में ही खड़ी नज़र आती है। जब तक यह स्थिति नहीं बदलेगी तब तक मंज़िल दूर ही रहेगी, फिर हम नारी विमर्श पर चाहे जितनी बात करलें, चाहे जितने सम्मान समारोह आयोजित कर लें, चाहे जितना वाद-विवाद कर लें नतीजा वही ढाक के तीन पात ही रहने वाला है।

नारी तुम केवल श्रद्धा हो या अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी.... या फिर यत्र नार्यस्ते पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता....आज नारी को इन सब बतकही खिलौनों से बहलाने से काम नहीं चलेगा। नारी को उसका सही सम्मान, सही स्थान देना होगा। उसे देवी नहीं इंसान समझना होगा। एक जीता जागता इंसान; जो बेशक विनम्र है, ममतामयी है, सहनशील है, लेकिन हाड़-माँस का एक जीता जागता इंसान है, उसे भी दर्द होता है, उसे भी सुख-दुःख, मान-अपमान महसूस होता है। उसे भी ज़िन्दगी को ज़िन्दगी की तरह जीने के हक़ है, सपने देखने का हक़ है। उसका यह हक़ उसे मिलना चाहिए; लेकिन भीख में नहीं, दया भाव दिखाकर नहीं बल्कि उसके स्वाभिमान को बिना ठेस पहुँचाए हुए उसके अधिकारपूर्ण हक़ के तौर पर!

मैं यह तो नहीं कहना चाहती कि कोई बदलाव नहीं आया है,आया है लेकिन अभी और बहुत कुछ होने की ज़रूरत शेष है। हम बस अपनी उलब्धियों को गिन-गिन कर खुश हो कर बैठे नहीं रह सकते क्योंकि सफर अभी बाकी है।

अंत में सिर्फ इतना ही कहना चाहती हूँ कि नारी की स्थिति को सशक्त करने के लिए, सकारात्मक बदलाव को सुनिश्चित करने के लिए शुरुआत अपने ही घर से करनी होगी। बेटे और बेटी के बीच में फर्क समझने वालों को स्वयं को बदलना होगा। घर की महिलाओं को यथायोग्य सम्मान देना होगा। यदि हर घर-परिवार में सिर्फ पुरुषों की प्रधानता न हो कर नारी और पुरुष दोनों को ही पद और रिश्ते की गरिमा के अनुरूप महत्त्व दिया जाएगा तो स्थिति अपने आप ही सुधर जाएगी फिर महिला सशक्तीकरण के लिए कोई अलग से प्रयास करने की ज़रूरत नहीं रह जाएगी।

जहाँ तक नारियों का सवाल है, मैं यही आवाहन करना चाहूँगी-

उठो नारियों जागो, आँधी बनकर निकल पड़ो/ यूँ ही ख़ामोश रहोगी तो कोई जीने नहीं देगा / जीना है तो... आवाज़ ज़रा ऊँची उठाओ / यूँ ही माँगते रहने से तुम्हें हक़ कोई नहीं देगा / आगे बढ़ो और हक़ को जरा हक़ से उठाओ / सफ़र अभी भी बाकी है.

****

डॉ. कमलकिशोर गोयनका

डॉ. मीना अग्रवाल

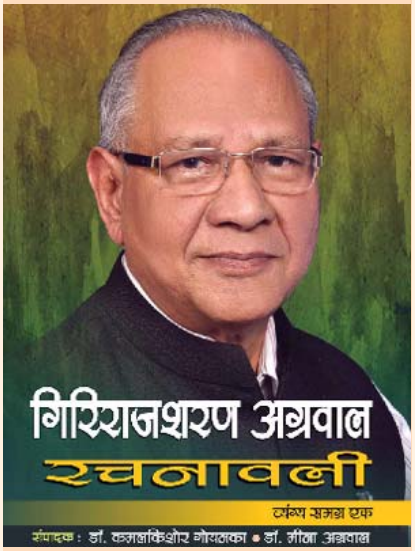

डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल रचनावली
संपादन
डॉ. कमलकिशोर गोयनका
डॉ. मीना अग्रवाल
प्रकाशक : हिन्दी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ.प्र.)
सभी ग्यारह खंडों का मूल्य 10,000 रुपए
पृष्ठ संख्या 6000

डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल रचनावली

संपादन
डॉ. कमलकिशोर गोयनका
डॉ. मीना अग्रवाल

डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल की रचनावली का संपादन और प्रकाशन हर्ष का विषय है। गीत और कविताओं से आरंभ करके साहित्य की विविध विधाओं में साहित्य-सृजन उनकी लेखन-क्षमता का पुष्ट प्रमाण है। इसी आधार पर उनकी रचनावली को ग्यारह भागों में प्रकाशित किया गया है-1. ग़ज़ल समग्र; 2. काव्य समग्र दो (कविताएँ, गीत, मुक्तक, दोहा); 3. कहानी समग्र; 4. गद्य समग्र (निबंध, साहित्यिक अनुभव, शोध, समीक्षा आदि); 5. जीवनी समग्र; 6. नाटक समग्र एक (बाल-नाटक); 7. नाटक समग्र दो (हास्य-नाटक, सामाजिक नाटक, नुक्कड़ नाटक); 8. व्यंग्य समग्र एक; 9. व्यंग्य समग्र दो; 10. भूमिका समग्र; 11. बालसाहित्य समग्र।

गिरिराज की सबसे प्रिय विधा ग़ज़ल है। ग़ज़ल के उनके छह संग्रह प्रकाशित हुए हैं, जिनमें 500 से अधिक ग़ज़लें संकलित हैं। ग़ज़ल के विषय में डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल ने स्वयं लिखा है- 'ग़ज़ल हृदय की अनुभूति की सूक्तिमय शैली है। इसकी अपनी भाषा, अपना भाव, अपनी उपमाएँ और अलंकार होते हैं। ग़ज़ल में एक विशेष लोच व आकर्षण होता है। किसी बात को सीधे-सीधे कह देना ग़ज़ल को पसंद नहीं, जो कुछ कहना है- संकेतों में। इसलिए ग़ज़ल गागर में सागर है।' उनकी ग़ज़लों की सबसे बड़ी विशेषता है- आशावाद।

गिरिराजशरण अग्रवाल समग्र के द्वितीय खंड में डॉ. अग्रवाल की कविताएँ (अक्षर हूँ मैं), हास्य कविताएँ (मेरी हास्य-व्यंग्य कविताएँ) मुक्तक (बूँद के अंदर समंदर) रूबाइयाँ, दोहे (जिनमें मुहावरा दोहे तथा पर्यायवाची दोहे भी सम्मिलित हैं) संगृहीत किए गए हैं। अपनी ग़ज़लों में ज़िंदगी की इंद्रधनुषी झाँकियों के बीच निरंतर आशावाद की ध्वजा लेकर चलनेवाले गिरिराजशरण अग्रवाल ने 'अक्षर हूँ मैं' के माध्यम से सचमुच अपने जीवन के कड़वे-मीठे, काले-सफ़ेद, निराशापूर्ण और आशाओं से भरे चिंतन को पूरी ईमानदारी से अभिव्यक्ति दी है, जो सीधे पाठक से संवाद करके उसे बाँध लेती है। इसी खंड में अप्रकाशित रूबाइयाँ, दोहे (इनमें पर्यायवाची दोहे तथा मुहावरा दोहे प्रमुख हैं) तथा गीत (जो समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं) तथा हास्य-व्यंग्य शैली की

ग़ज़लें भी संगृहीत हैं।

इस रचनावली का तीसरा खंड कहानियों का है। इस खंड में डॉ. अग्रवाल द्वारा लिखी गई 82 कहानियाँ संकलित हैं। इनमें से कुछ कहानियाँ उनके पूर्व प्रकाशित कहानी-संग्रहों- जिज्ञासा एवं अन्य कहानियाँ, छोटे-छोटे सुख, आदमी और कुत्ते की नाक में भी प्रकाशित हो चुकी हैं। इनके अतिरिक्त उनकी अप्रकाशित कहानियाँ भी इस खंड में सम्मिलित हैं। डॉ. कमलकिशोर गोयनका के अनुसार 'डॉ. अग्रवाल कहानी लिखने की कला में तथा कहानी को जीवन के उच्च सरोकारों से जोड़ने में पूर्णत: पारंगत हैं। इस खंड में उनकी व्यापक जीवन दृष्टि से परिपूर्ण कहानियाँ संगृहीत हैं।'

चौथा खंड गद्य समग्र का है। इस खंड में गिरिराजशरण अग्रवाल के 'सवाल साहित्य के' (साहित्य में लेखक के अनुभव) के साथ उनके समय-समय पर प्रकाशित लेख संगृहीत हैं। डॉ. अग्रवाल सन् 2001-2002 में रोटरी अंतर्राष्ट्रीय के मंडल 3100 के मंडलाध्यक्ष थे। मंडलाध्यक्ष के रूप में दिए गए उनके उद्‌बोधन और प्रकाशित आलेख भी इसी खंड में रखे गए हैं। इनके अतिरिक्त अनेक महत्त्वपूर्ण आलेखों का संग्रह भी इस खंड में किया गया है, जिसमें डॉ. अग्रवाल के चिंतन, मनन, विवेचन तथा उनकी शोधवृत्ति के दर्शन होते हैं। निबंधों की भाषा सहज, सरल, संप्रेषणक्षम है।

डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल समग्र के पाँचवें खंड में भारतीय साधकों, संतों, महापुरुषों, राजनेताओं और स्वतंत्रता-सेनानियों, साहित्यकारों की जीवनियाँ, क्रांतिकारी सुभाष के जीवन पर आधारित जीवनीपरक उपन्यास 'क्रांतिकारी सुभाष', लेखक का आत्मचरित (आत्मकथ्य) संयोजित किया गया है। क्रांतिकारी सुभाष जीवनीपरक उपन्यास है, जो महान देशभक्त और स्वतंत्रता-सेनानी सुभाषचंद्र बोस के जीवन को आधार बनाकर लिखा गया है। आत्मकथ्य में डॉ. गिरिराजशरण ने अपने जीवन की उन घटनाओं का उल्लेख किया है, जो सामान्यत: पाठकों के सामने बाहरी व्यक्ति द्वारा नहीं आ सकतीं।

खंड छह और सात में डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल द्वारा लिखित बाल नाटकों, हास्य-व्यंग्य एकांकियों, समाज तथा राजनीति से जुड़े एकांकियों तथा नुक्कड़ नाटकों को संगृहीत किया गया है। डॉ. अग्रवाल ने प्रभात प्रकाशन, दिल्ली के लिए एकांकी नाटकों की एक बड़ी शृंखला का संपादन किया था। इस शृंखला में विषय-क्रम से एकांकियों का संकलन किया गया था। तब भी उन्होंने प्रत्येक खंड के लिए एकांकियों की रचना की थी। उसके बाद तो उनके एकांकियों के अनेक संकलन प्रकाशित हुए। इनमें प्रमुख हैं-नीली आँखें (जो बाद में 'मंचीय सामाजिक नाटक' नाम से प्रकाशित हुआ), ग्यारह नुक्कड़ नाटक, मंचीय व्यंग्य एकांकी, बच्चों के शिक्षाप्रद नाटक, बच्चों के हास्य नाटक, बच्चों के रोचक नाटक। इन सभी पुस्तकों में प्रकाशित एकांकी नाटकों को इन दोनों खंडों में संयोजित किया गया है।

खंड आठ तथा नौ में डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल के 202 व्यंग्य संकलित हैं। हास्य और व्यंग्य के क्षेत्र में डॉ. अग्रवाल का कार्य इतना व्यापक है, ऐसा कम लोगों को ही ज्ञात है। उनके व्यंग्य के पाँच संकलन प्रकाशित हुए हैं-बाबू झोलानाथ, राजनीति में गिरगिटवाद, मेरे इक्यावन व्यंग्य, आदमी और कुत्ते की नाक तथा आओ भ्रष्टाचार करें। हास्य-व्यंग्य-लेखन की एक विशिष्ट शैली को विकसित करने में डॉ. अग्रवाल का योगदान विशेष सराहनीय है। उन्होंने स्वयं कहा है-'विसंगतियों और विडंबना-विकारों के रहते हुए व्यंग्य हास्यशून्य नहीं हो सकता और हास्य भी व्यंग्य के बिना अपना अस्तित्व बनाकर नहीं रख सकता।'

खंड दस भूमिका खंड है। डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल ने सन् 1986 से 2004 तक प्रत्येक वर्ष की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य रचनाओं का संपादन किया। इनके अतिरिक्त विषय-आधारित कहानियों के ग्यारह खंडों, एकांकियों के दस खंडों, व्यंग्य के दस खंडों का संपादन किया। इन सभी खंडों में विषयानुसार भूमिकाएँ लिखीं। पिछले दशक के श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य एकांकी, पिछले दशक की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य कविताएँ, पिछले दशक की श्रेष्ठ हास्य-व्यंग्य कहानियाँ संपादित कीं। अपनी अनेक पुस्तकों की भूमिकाओं के साथ-साथ कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण पुस्तकों की भूमिकाओं को लिखने का अवसर भी उन्हें मिला। इन सभी भूमिकाओं को दसवें खंड में सम्मिलित किया गया है। 'शोध दिशा' त्रैमासिक के जुलाई 2006 और उसके बाद लिखे गए महत्त्वपूर्ण संपादकीय भी दसवें खंड में सम्मिलित हैं।

गिरिराजशरण अग्रवाल की रचनावली के खंड ग्यारह में उनके द्वारा रचित बालसाहित्य को सम्मिलित किया गया है। उन्होंने बच्चों के लिए एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी 'मानव विकास की कहानी', जो पहले 'आओ अतीत में चलें' नाम से प्रकाशित हुई थी और जिस पर अनेक संस्थाओं ने पुरस्कार देकर प्रतिष्ठा की मुहर लगाई थी। इस पुस्तक में डॉ. अग्रवाल ने मानव-सभ्यता का इतिहास रोचक कहानी के रूप में प्रस्तुत किया है। इस कहानी को पढ़ते समय किसी प्रकार का बोझ बच्चे के मन-मस्तिष्क पर नहीं पड़ता और वह आसानी से मानव विकास की कहानी को समझ लेता है। इसी खंड में डॉ. अग्रवाल द्वारा लिखी हुई 29 बालकहानियाँ भी सम्मिलित हैं। इनमें कई कहानियाँ वैज्ञानिक और बालमनोविज्ञान के दृष्टिकोण से लिखी गई हैं।

यह डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल रचनावली के ग्यारह खंडों का संक्षिप्त विवरण है। इन सभी खंडों में आप उन के व्यक्तित्व से उनके साहित्य की और साहित्य से उनके व्यक्तित्व की पहचान कर सकते हैं। डॉ. अग्रवाल एक तपस्वी साहित्यकार हैं, मौन साधक हैं, ज्ञान के जिज्ञासु और प्रसारक हैं। उनका काम बड़ा और विस्तृत है।

यह रचनावली उनके जीवन की सार्थकता का प्रमाण है और इसका भी कि संभल या बिजनौर जैसे एक छोटे नगर से कोई कैसे राष्ट्रीय बनता है और अपनी पहचान को स्थायी बनाता है।

****

अधूरे अफ़साने
अपनों से विछोह की पीड़ा

समीक्षक : डॉ. अरविंद मिश्रा

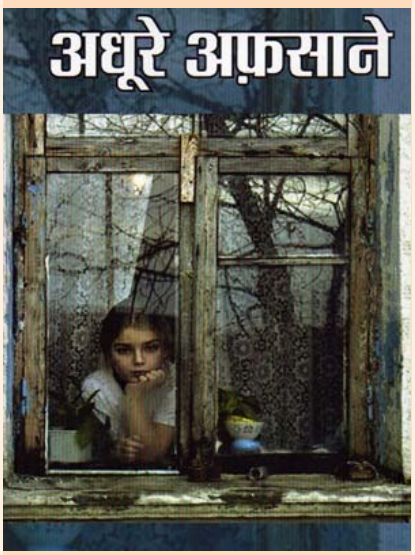

अधूरे अफ़साने (कहानी संग्रह)
लेखक : लावण्य दीपक शाह
प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, पी.सी. लैब,
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड ,
सीहोर-466001 (म. प्र.)
मूल्य : 250. 00 रुपये

डॉ. अरविंद मिश्रा

अभी-अभी लावण्या शाह (लावण्या दीपक शाह) के कहानी संग्रह अधूरे अफ़साने को पूरा किया है। चार बाल कहानियों को समेटे कुल ग्यारह कहानियों के इस गुलदस्ते को लावण्या जी ने अपने सुदीर्घ सामाजिक जीवन के अनुभवों और कुशल लेखनी से अलंकृत किया है। कहानियों मे जीवन संघर्ष, मानवीय संवेदनाओं को लेखिका ने बखूबी अभिव्यक्ति दी है। कई कहानियों मे वतन और अपनों से विछोह की जो पीड़ा अभिव्यक्त होती है वह लेखिका के खुद के प्रवासी जीवन का और अपने सहधर्मियों के भोगे यथार्थ से अनुप्राणित होने की प्रतीति कराता एक यथार्थ दस्तावेज बन गया है। ज़िंदगी ख्वाब है में जहाँ महत्त्वाकांक्षी पति और अभिमानी पत्नी की दुखांतिका है, मन मीत पुरुष स्त्री के आदिम आकर्षण की कथा है; जो एक रहस्यपूर्ण परिवेश मे परवान चढ़ती है किंतु यह भी एक दुखांत गाथा है।

जनम-जनम के फेरे अपनों और अपनी माटी से विछोह की पीड़ा भरी दास्ताँ है। कादंबरी एक नृत्यांगना की संघर्ष गाथा है, जिसमें उसके पुरुष कामुकता से उत्पीड़ित होते रहते की व्यथा कथा है। नारी के शोषण को पुरुष कैसी-कैसी रणनीतियों से अंजाम देता है यह कथा उससे खबरदार करती है। समदर देवा भी नारी के पुरुष द्वारा शोषण की एक मानों एक चिरंतन गाथा है किन्तु अपने कथानक में उदात्त प्रेम की भी सुगंध लिए है, मुंबई के सागर तट पर पनपती एक सात्विक प्रेम कथा मन को अंत तक बांधे रखती है। यहाँ उदात्त चरित्र के पुरुष पात्रों की उपस्थिति मन को गहरे आश्वस्त करती है कि अभी भी धरा पर मानवीयता जीवंत है। लेखिका की यह कथा मुंबई के मछुवारों की जीवन शैली और इस मायानगरी के अँधेरे कोनों को भी आलोक में लेती है।

कौन सा फूल सर्वश्रेष्ठ है, घर में नवागंतुक दुल्हन के सहज होने के लिए ज़रूरी अभिभावकीय दायित्व को उकेरती है। स्वयं सिद्धा अनुष्ठानों के आडंबरों से आक्रान्त भारतीय परिवार की कहानी है। बालकथाओं में संवाद शैली के जरिये प्रमुख भारतीय पुराकथाओं और नायकों का रोचक वर्णन है जो बच्चों में नैतिकता के आग्रह को तो प्रेरित करता ही है उनकी ज्ञानवृद्धि भी करता है।

लेखिका एक सिद्धहस्त रचनाकर्मी हैं। योग्य पिता की सुयोग्य पुत्री। आदरणीय पंडित नरेंद्र शर्मा जी की विलक्षण प्रतिभा पुत्री को आनुवंशिकता में मिली है। लावण्या जी आश्चर्यजनक रूप से नारी सौंदर्य की चतुर चितेरी हैं जबकि समीक्षक इसे पुरुष डोमेन में मानता आया है। उन्हें नारी तन और मन की एक समादृत समझ है जो प्रशंसनीय है। पुस्तक पढ़ने की प्रबल अनुशंसा है!

****

सहायक संचालक, मत्स्य विभाग, झांसी, उत्तर प्रदेश

प्रेम गली अति साँकरी
पुराने कालखंड की नई कहानियाँ

समीक्षक : इस्मत ज़ैदी शिफ़ा

मध्य प्रदेश के सुपरिचित कवि / नाटककार / कथाकार रामरतन अवस्थी का कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ है- प्रेम गली अति साँकरी। इस संग्रह में संग्रहित कहानियों में से सात कहानियाँ सन 1950-55 के बीच कीं, जबकि दो कहानियाँ इस काल खंड से लगभग दो दशक बाद की हैं।

पहली कहानी पुस्तक के शीर्षक वाली कथा है। संग्रह की सभी कहानियों का मूल भाव 'प्रेम' और इंसानियत है। ये प्रेम भले ही अलग-अलग पारिवारिक/सामाजिक रिश्तों के बीच का ही क्यों न हो। इस कहानी का मूल आधार भी प्रेम है। कहानी प्रेम गली अति साँकरी, कर्म क्षेत्रे, एक प्राण, दो देह, इन तीनों कहानियों में किसी न किसी रूप में बैरागी पात्र आया है, सन्यासी या साधु के रूप में। उस समय के सन्यासियों पर अपने आप आस्था भाव जगाने का काम करती हैं ये कहानियाँ।

कहानी 'शहादत' में हिन्दू-मुस्लिम एकता का स्वर मुखर हुआ है। दोनों ही सम्प्रदायों के अच्छे और बुरे लोगों को सामने लाने में समर्थ है ये कहानी। विभाजन की विभीषिका उभर कर आई है इस कहानी में।

प्रेम हर काल में वर्जित रहा है ये साबित होता है कहानी 'एक प्राण दो देह' से। आर्थिक रूप से विपन्न एक माली, सम्पन्न परिवार के युवक को इसलिये स्वीकार्य नहीं कर सका, क्योंकि वो उसकी बेटी को प्रेम करता था। प्रेम और लड़कियों की विवशता एक से स्तर पर थी, तब भी कमोवेश आज भी। काम और रिश्तों के प्रति ईमानदारी, विश्वास और निष्ठा कितनी महत्त्वपूर्ण होती थी उस समय, ये ज़ाहिर होता है कहानी 'आबरू' से। अंग्रेज़ों ने शारीरिक स्तर पर भी कितना शोषण उस समय किया होगा, इस कहानी से एक झलक मिलती है, इस बात की।

संसार में चंद सच्चे इंसान हमेशा मौजूद रहे हैं और शायद इन्हीं सच्चे इंसानों की वजह से इंसानियत भी क़ायम रह सकी, इस बात को पुख़्ता करती है कहानी 'सुखिया'। इस कहानी को पढ़ कर इंसानियत के प्रति मन श्रद्धा से झुक जाता है। इसी प्रकार कहानी 'अन्तर्वेदना' से भी इंसानियत का एक अलग ही रूप सामने आता है। उस काल विशेष में लोगों के भीतर कितना विश्वास था अपने कृत्य पर, और दूसरे इंसान पर भी। एक अजनबी युवक को पिटने से बचाते हुए पिता-पुत्री उसे न केवल अपने घर ले आये, बल्कि उसकी चिकित्सा भी करवाई। इतना आत्मीय माहौल दिया कि युवक स्वस्थ हो गया।

कहानी 'रिसते रिश्ते' अपेक्षाकृत बाद के समय की है सो इसका कथानक भी आज के परिवेश जैसा है। उस समय में रिश्तों में जितना सघन प्रेम था, जुड़ाव था, बाद की कहानी में यही प्रेम, जुड़ाव की सघनता छिन्न-भिन्न होती दिखाई देती है। इस कहानी में बेटी का महत्त्व भी सामने आता है। 'राम दुलारे की शव यात्रा' ये कहानी एकदम अलग भाव से लिखी गयी है। तमाम लोगों में, बल्कि अधिसंख्य में ये जानने की तीव्र इच्छा होती है, कि उनकी मौत के बाद कौन-कौन उसके लिये दुखी होगा? कौन खुश होगा? किस तरह की बातें लोग करेंगे उसके बारे में? ऐसी ही इच्छा की थी राम दुलारे ने जो नारद ने पूरी की।

कुल मिला के 'प्रेम गली अति साँकरी' एक अलग काल विशेष, भाषा विन्यास और शैली का कहानी संग्रह है, जो निश्चित रूप से पाठक को अपनी ओर आकर्षित करता है।

****

प्रेम गली अति साँकरी (कहानी संग्रह)
लेखक : रामरतन अवस्थी
प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, पी.सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड , सीहोर-466001 (म. प्र.)
मूल्य : 100. 00 रुपये

इस्मत ज़ैदी शिफ़ा
ए-13, स्टॉफ कॉलोनी, यूनिवर्सल केबल्स लिमिटेड, बिरला विकास, सतना, मप्र
मोबाइल : 9623043603

दलदल
किस्सागोई का कौतुक देती कहानियाँ

समीक्षक : सुषमा मुनीन्द्र

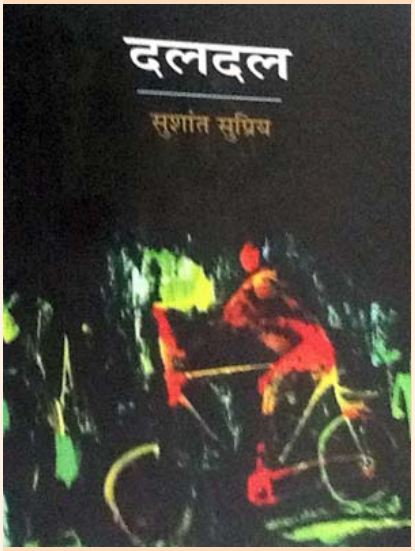

दलदल (कहानी संग्रह)
लेखक : सुशांत सुप्रिय
अंतिका प्रकाशन , ग़ाज़ियाबाद।

सुषमा मुनीन्द्र

सुपरिचित रचनाकार सुशांत सुप्रिय का सद्य प्रकाशित कथा संग्रह 'दलदल' ऐसे समय में आया है; जब निरंतर कहा जा रहा है कहानी से कहानीपन और किस्सागोई शैली गायब होती जा रही है। संग्रह में बीस कहानियाँ हैं, जिनमें ऐसी ज़बर्दस्त किस्सागोई है कि लगता है शीर्षक कहानी 'दलदल' का किस्सागो बूढ़ा, दक्षता से कहानी सुना रहा है और हम कहानी पढ़ नहीं रहे हैं वरन साँस बाँध कर सुन रहे हैं कि आगे क्या होने वाला है। पूरे संग्रह में ऐसा एक क्रम, एक सिलसिला-सा बनता चला गया है कि हम संग्रह को पढ़ते-पढ़ते पूरा पढ़ जाते हैं। कभी उत्सुकता, कभी जिज्ञासा, कभी भय, कभी सिहरन, कभी आक्रोश, कभी खीझ, कभी कुटिलता, कभी कृपा से गुज़र रहे पात्र इतने जीवंत हैं कि सहज ही अपने भाव पाठकों को दे जाते हैं। 'दलदल' कहानी के विकलांग सुब्रोतो का करुण तरीके से दलदल में डूबते जाना सिहरन से भरता है तो 'बलिदान' की बाढ़ग्रस्त भैरवी नदी में नाव पर सवार क्षमता से अधिक परिजनों द्वारा डगमगाती नाव का भार कम करने के लिये, किसका जीवित रहना अधिक ज़रूरी है, किसका कम , इस आधार पर एक-एक कर नदी में कूद कर आत्म-उत्सर्ग करना स्तब्ध करता है। ''काले चोर प्रोन्नति पायें, ईमानदार निलंबित हों'' ऐसे अराजक, अनैतिक माहौल में खुद को मिसफिट पाते 'मिसफिट' के केन्द्रीय पात्र का आत्महत्या का मानस बना कर रेलवे ट्रैक पर लेटना भय से भरता है तो 'पाँचवी दिशा' के पिता का हॉट एयर बैलून में बैठ कर उड़ना, गुब्बारे का अंतरिक्ष में ठहर जाना जिज्ञासा से भरता है। 'दुमदार जी की दुम' के दुमदार जी की रातों-रात 'दुम निकल आई है' जैसे भ्रामक प्रचार को अलौकिक और ईश्वरीय चमत्कार मान कर लोगों का उनके प्रति श्रद्धा से भर जाना उत्सुकता जगाता है तो 'बयान' के निष्ठुर भाई का ''यातना-शिविर जैसे पति-गृह से किसी तरह छूट भागी मिनी को ज़बर्दस्ती घसीट कर फिर वहीं (पति-गृह) पहुँचा देना।'' आक्रोश से तिलमिला देता है। वस्तुत: सुशांत सुप्रिय की पारखी-विवेकी दृष्टि अपने समय और समाज की प्रत्येक स्थिति-परिस्थिति-मन: स्थिति पर ऐसे दायित्व बोध के साथ पड़ती है कि संग्रह की पंक्तियाँ तत्कालीन व्यवहार-आचरण का सच्चा बयान बन गई हैं - ''कैसा समय है यह, जब भेड़ियों ने हथिया ली हैं सारी मशालें, और हम निहत्थे खड़े हैं।'' (कहानी दो दूना पाँच)। ''बेटा, पहले-पहल जो भी लीक से हट कर कुछ करना चाहता है, लोग उसे सनकी और पागल कहते हैं।'' (कहानी 'पाँचवीं दिशा')। ''मैं नहीं चाहता था मिनी आकाश जितना फैले, समुद्र भर गहराये, फेनिल पहाड़ी-सी बह निकले ..... मेरे ज़हन में लड़कियों के लिये एक निश्चित जीवन-शैली थी।'' (कहानी 'बयान')। ''लोग आपको ठगने और मूर्ख बनाने में माहिर होते हैं। मुँह से कुछ कह रहे होते हैं जबकि उनकी आँखें कुछ और ही बयाँ कर रही होती हैं।'' (कहानी 'एक गुम सी चोट')। ये कुछ ऐसी वास्तविकताएँ हैं जिनसे संत्रस्त हो चुका आम आदमी सवाल करने लगा है ''नेक मनुष्यों का उत्पादन हो सके क्या कोई ऐसा कारखाना नहीं लगाया जा सकता ?'' लेकिन संग्रह की कहानियों में जो सकारात्मक भाव हैं ,वे सवाल का उत्तर दें न दें , आम आदमी को आश्वासन ज़रूर देते हैं कि ''मुश्किलों के बावजूद यह दुनिया रहने की एक खूबसूरत जगह है।'' (कहानी 'पिता के नाम')

संग्रह की मूर्ति, पाँचवीं दिशा, चश्मा, भूतनाथ आदि कहानियाँ आभासी संसार का पता देती हैं। ये कहानियाँ यदि लेखक की कल्पना हैं तो अद्भुत हैं, सत्य हैं तब भी अद्भुत हैं। 'मूर्ति' का समृद्ध उद्योगपति जतन नाहटा आदिवासियों से वह मूर्ति, जिसे वे अपना ग्राम्य देवता मानते हैं, बलपूर्वक अपने साथ ले जाता है। मूर्ति उसे मानसिक रूप से इतना अस्थिर-असंतुलित कर देती है कि वह पागलपन के चरम पर पहुँच कर अंतत: मर जाता है। 'पाँचवीं दिशा' के पिता हॉट एयर बैलून में बैठ कर उड़ान भरते हैं। गुब्बारा अंतरिक्ष में स्थापित हो जाता है। वे वहाँ से सैटेलाइट की तरह गाँव वालों को मौसम परिवर्तन की सूचना भेजा करते हैं। 'चश्मा' कहानी के परिवार के पास चार-पाँच पीढ़ियों से एक विलक्षण चश्मा है जिसे पहन कर भविष्य में होने वाली घटना-दुर्घटना के दृश्य देखे जा सकते हैं। दृश्य देखने में वही सफल हो सकता है जिसका अन्तर्मन साफ हो। 'भूतनाथ' का भूत मानव देह धारण कर लोगों की सहायता करता है। वैसे 'भूतनाथ' और 'दो दूना पाँच' कहानियाँ फ़िल्मी ड्रामा की तरह लगती हैं। सुकून यह है कि जब हत्या, बलात्कार, दुर्घटना, वन्य प्राणियों का शिकार कर, गलत तरीके से शस्त्र रख धन-कुबेर और उनकी संतानें पकड़ी नहीं जातीं या पुलिस और अदालत से छूट जाती हैं, वहाँ 'दो दूना पाँच' के कुकर्मी प्रकाश को फाँसी की सज़ा दी जाती है। कहानियों में ज़मीनी सच्चाई है, इसीलिये झाड़ू, इश्क वो आतिश है ग़ालिब जैसी प्रेम-कहानियाँ भी प्रेम-राग का अतिरंजित या अतिनाटकीय समर्थन करते हुये मुक्त गगन में नहीं उड़तीं बल्कि इस वास्तविकता को पुष्ट करती हैं कि प्रेम के अलावा भी कई-कई रिश्ते होते और बनते हैं और यदि विवेक से काम लिया जाय तो हर रिश्ते को उसका प्राप्य मिल सकता है: ''जगहें अपने आप में कुछ नहीं होतीं। जगहों की अहमियत उन लोगों से होती है जो एक निश्चित काल-अवधि में आपके जीवन में उपस्थित होते हैं।'' (पृष्ठ 73)। लेकिन कुछ स्थितियाँ ऐसा नतीजा बन जाती हैं कि इंसान शारीरिक यातना से किसी प्रकार छूट जाता है लेकिन मानसिक यातना से जीवन भर नहीं छूट पाता। बिना किसी पुख्ता सबूत के, संदेह के आधार पर जाति विशेष के लोगों को अपराधी साबित करना सचमुच दु:खद है। 'मेरा जुर्म क्या है ?' के मुस्लिम पात्र के घर की संदेह के आधार पर तलाशी ली जाती है, उसे जेल भेजा जाता है । बरसों बाद वह निर्दोष साबित होकर घर लौटता है लेकिन ये यातना भरे बरस उसका जो कुछ छीन लेते हैं उसकी भरपाई नामुमकिन है। 'कहानी कभी नहीं मरती' के छब्बे पाजी 1984 जून में चलाये गए आपरेशन ब्लू-स्टार के फौजी अभियान की चपेट में आते हैं। झूठी निशानदेही पर 'ए' कैटेगरी का खतरनाक आतंकवादी बता कर उन्हें जेल भेजा जाता है। वे भी बरसों बाद निर्दोष साबित होते हैं। कहानियों में इतनी विविधता है कि समकालीन समाज और जीवन की सभ्यता-पद्धति, आचरण-व्यवहार, यम-नियम, चिंतन-चुनौती, मार्मिकता-मंथन, समस्या-समाधान, साम्प्रदायिकता-नौकरशाही, कानून-व्यवस्था, मीडिया, भूकम्प, बाढ़, अकाल, बाँध, डूबते गाँव, कटते जंगल, किलकता बचपन, गुल्ली-डंडा, कबड्डी जैसे देसी खेल, कार्टून चैनल, मोबाइल, लैप-टाप जैसे गैजेट्स बहुत कुछ दर्ज हैं।

सुशांत की कहानियाँ आकार में लम्बी नहीं, अपेक्षाकृत छोटी हैं तथापि सार्वभौमिक सत्य को सामने लाने में सक्षम हैं। भाषा आकर्षक और बोधगम्य है। आह्लाद और विनोद का पुट कहानियों को रोचक बना देता है। पात्रों के अनुरूप छोटे-छोटे, अनुकूल संवाद हैं जो अत्यधिक उचित लगते हैं। कुल मिला कर कहा जा सकता है किस्सागोई का आनंद देती ये कहानियाँ दिमाग पर हथौड़े की तरह वार करती हैं, तथा दिल पर असर छोड़ते हुये सकारात्मक सोच अपनाने के लिये प्रेरित करती हैं। अच्छे कहानी संग्रह के लिये सुशांत सुप्रिय को बधाई और शुभकामनाएँ।

****

द्वारा श्री एम. के. मिश्र, लक्ष्मी मार्केट,
रीवा रोड, सतना, मप्र, 485001
मोबाइल : 07898245549

पुस्तकें मिलीं

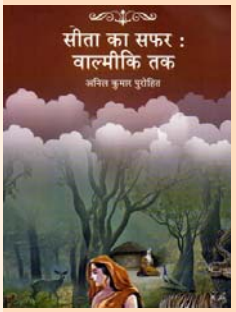

सीता का सफर : वाल्मीकि तक
(एक लम्बी कविता)
लेखक
अनिल कुमार पुरोहित
प्रकाशक
विश्वमुक्ति

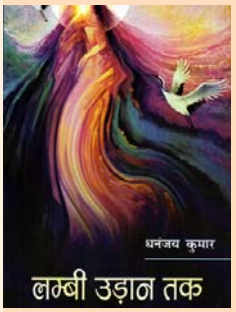

लम्बी उड़ान तक
(ग़ज़ल संग्रह)
लेखक
धनंजय कुमार
प्रकाशक
अयन प्रकाशन

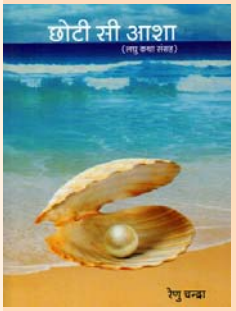

छोटी सी आशा
(लघुकथा संग्रह)
लेखक
रेणु चंद्रा
प्रकाशक
दिव्य भारती

अंग-संग
(कविता संग्रह)
लेखक
सुदर्शन प्रियदर्शिनी
प्रकाशक
बोधि प्रकाशन

रैवन की लोक कथाएँ
(लोककथा संग्रह)
लेखक
सुषमा गुप्ता
प्रकाशक
इन्द्रा पब्लिशिंग

प्रेमचंद : कहानी-कोश
प्रेमचंद के संपूर्ण कहानी संसार का विवरण एवं परिचय

समीक्षक : कृष्ण वीर सिंह सिकरवार

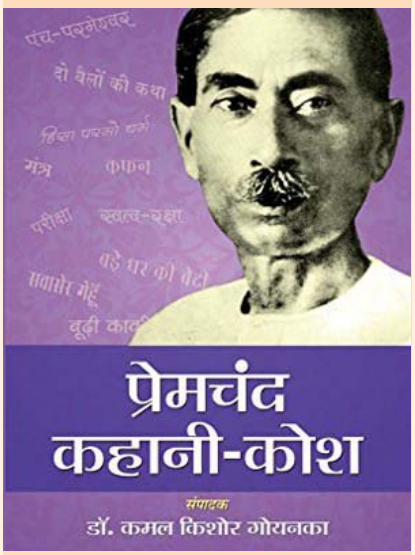

पुस्तक का नाम : प्रेमचंद :कहानी-कोश
संपादक : डॉ. कमल किशोर गोयनका
प्रकाशक-प्रभात प्रकाशन, 4/19, आसफ अली रोड़, नई दिल्ली-110002
मूल्य 500/-रुपये (हार्डबाउंड संस्करण)
प्रथम संस्करण-2016, पृष्ठ-353

कृष्ण वीर सिंह सिकरवार

प्रेमचंद : विश्वकोश (दो खण्ड) प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली, वर्ष 1981 में प्रकाशित, प्रेमचंद : पत्रकोश, अमित प्रकाशन गाजियाबाद, वर्ष 2007 में प्रकाशित एवं प्रेमचंद : कहानी-कोश प्रभात प्रकाशन नई दिल्ली वर्ष 2016 में प्रकाशित इन पुस्तकों का संपादन करने वाले मर्मज्ञ व चिंतक एवं देश विदेश में प्रेमचंद साहित्य के विशेषज्ञ के रूप में अपनी पहचान बनाने वाले विद्वान आलोचक डॉ.कमल किशोर गोयनका की पुस्तकों के नाम हैं। हाल ही में उनको के.के. बिड़ला फ़ाउण्डेशन,नई दिल्ली द्वारा व्यास सम्मान से सम्मानित किया गया है। यह सम्मान उनको वर्ष 2012 में नटराज प्रकाशन नई दिल्ली से प्रकाशित उनकी पुस्तक ''प्रेमचंद की कहानियों का कालक्रमानुसार अध्ययन'' के लिये प्रदान किया गया है।

प्रेमचंद आज हिन्दी साहित्य जगत् मे पढ़ने वाले सर्वाधिक लोकप्रिय रचनाकार है, उनकी प्रसिद्धि का आलम यह है कि उनके साहित्य को लेकर पाठकों में हमेशा से ही उत्सुकता रही है। आज उनका साहित्य पाठकों के लिये जीवन स्त्रोत बन चुका है । उनकी मृत्यु के लगभग 78 वर्षों के दौरान उनके साहित्य को लेकर काफी कुछ विभिन्न विद्वान लेखकों द्वारा लिखा जा चुका है व यह सिलसिला आज भी निरंतर जारी है। उनके साहित्य पर अनेक प्रकार के शोध किये जा चुके है, इसी कारण प्रेमचंद के साहित्य में रुचि रखने वाले विभिन्न विशेषज्ञ एवं आलोचक उनके साहित्य को लेकर सजग व संवेदनशील है। इन्हीं लेखकों व आलोचकों में खोजी प्रवृत्ति के धुनी मनीषी डॉ.कमल किशोर गोयनका है। डॉ. गोयनका ने अपने जीवन के लगभग 40 वर्ष प्रेमचंद साहित्य की खोजबीन में अर्पित कर दिये तथा यह खोज का सिलसिला अभी भी निरंतर जारी है। इसी साहित्यिक कोश श्रृखंला के तहत डॉ. गोयनका अपनी ताज़ा पुस्तक ''प्रेमचंद : कहानी-कोश'' लेकर उपस्थित हुए हैं।

आज प्रेमचंद की बाज़ार में लगभग सभी प्रकाशित कहानियाँ उपलब्ध है तथा उनकी कहानियों को लेकर विभिन्न प्रकार के शोध किये जा चुके है। ऐसे मे ''प्रेमचंद :कहानी-कोश'' की आवश्यकता क्यों महसूस की गई व संपादक को इस पुस्तक को तैयार करने के लिये किन परिस्थितियों ने प्रेरित किया। इस संबंध में डॉ.गोयनका कहते है कि-''वर्ष 1981 में प्रकाशित ''प्रेमचंद : विश्वकोश'' के पहले खण्ड में प्रेमचंद की शोधपरक कालक्रमानुसार जीवनी दी गई थी, जो हिंदी में पहला प्रयास था और दूसरे खण्ड में उनके संपूर्ण साहित्य का विवरण था। इस दूसरे खण्ड में प्रेमचंद की कहानियों का भी परिचय तथा विवरण दिया गया था और दूसरे साहित्य का भी, किंतु उसके प्रकाशन के बाद प्रेमचंद की कुछ और कहानियाँ मिली तथा उनकी कहानियों के कुछ नए-नए संस्करण व संकलन निकले तो यह आवश्यक हो गया कि प्रेमचंद की कहानियों तथा कहानी से संबंधित जो भी तथ्य एवं सूचनाएँ हैं, उन्हें एक नई पुस्तक में संकलित कर दिया जाए, जिससे प्रेमचंद की कहानियों के पाठकों एवं अध्येताओं को एक ही स्थान पर सारे तथ्य और जानकारियाँ उपलब्ध हो सके ।इसी विचार को ध्यान में रखकर ''प्रेमचंद : कहानी-कोश'' की कल्पना की गई और ''प्रेमचंद : विश्वकोश'' दूसरा खण्ड में जो कहानियों, कहानी संग्रहों तथा कहानी लेखों के विवरण थे, वे यत्र-तत्र संशोधन परिवर्द्धन के बाद ''प्रेमचंद : कहानी-कोश'' में संकलित कर दिए गए और उसके साथ कुछ नई उपलब्ध कहानियों के विवरण भी जोड़ दिए गए। अब प्रेमचंद की कहानियों के पाठकों तक अध्येताओं को एक ही पुस्तक में प्रेमचंद के संपूर्ण कहानी संसार का विवरण एवं परिचय मिल जाएगा और प्रेमचंद का कहानीकार संपूर्ण रूप में उनके सम्मुख होगा। ज्ञान को सहज-सुलभ बनाना भी ज्ञान के विकास के लिये आवश्यक है। असल में यही वह मंत्र है जिसने मुझे ''प्रेमचंद : कहानी-कोश'' को तैयार करने के लिए प्रेरित किया । (भूमिका, पृष्ठ : 6)

डॉ. गोयनका के अनुसार ''प्रेमचंद : विश्वकोश'' को तैयार करने में देश के अनेक प्रोफ़ेसरों लेखकों आदि का सहयोग लिया था। हिंदी में ऐसा सामूहिक प्रयास ''हिंदी साहित्य-कोश'' वर्ष 1962 में हुआ था और उसके बाद ''प्रेमचंद - विश्वकोश'' तथा ''प्रेमचंद : कहानी-कोश'' में हुआ है । (भूमिका, पृष्ठ : 6)

''प्रेमचंद : कहानी-कोश'' में उपलब्ध सभी 299 हिंदी-उर्दू कहानियों का विवरण अकारादिक्रम में किया गया है; जिसमें कहानी का हिंदी नाम, कहानी का उर्दू नाम, प्रथम प्रकाशन वर्ष, कहानी के प्रथम संकलन का नाम, कहानी के उर्दू संकलन का नाम, हिंदी कहानी का सार आदि के तहत प्रदत्त जानकारी पाठकों, अध्येताओं के लिए किसी वरदान से कम नहीं है। प्रेमचंद की कहानियों को लेकर ऐसा कार्य इससे पहले कभी हुआ हो, देखने को कम ही मिलता है। यह प्रेमचंद की कहानियों का एक ऐसा कोश है; जिससे पाठक सूक्ष्म से सूक्ष्म जानकारी सूचीबद्ध तरीके के सिलसिलेवार रूप में प्राप्त कर सकता है।

पुस्तक में प्रेमचंद के हिंदी-उर्दू कहानी संकलनों के प्रथम संस्करण के आवरण पृष्ठ की फोटोप्रति प्रकाशित की गई है, जो पुस्तक को एक नई खूबसूरती प्रदान करते हैं। जिन हिंदी कहानी संकलनों के आवरण पृष्ठ पुस्तक में प्रकाशित किये गए हैं, उनका विवरण इस प्रकार है:-'अग्नि-समाधि तथा अन्य कहानियाँ' प्रथम संस्करण वर्ष 1929, 'गुप्तधन' (भाग 1 व 2), प्रथम संस्करण वर्ष जुलाई 1962, 'टालस्टॉय की कहानियाँ' अनुवाद तथा रूपांतरकार प्रेमचंद, प्रथम संस्करण वर्ष 1980, 'नवनिधि-नौ भवपूर्ण गल्पों का संग्रह', प्रथम संस्करण दिसम्बर 1927, 'नवजीवन-शिक्षाप्रद नव कहानियाँ', प्रथम संस्करण वर्ष 1935, 'पाँच-फूल', प्रथम संस्करण वर्ष 1929, 'प्रेम-कुंज', प्रथम संस्करण वर्ष 1930, 'प्रेम-चतुर्थी', प्रथम संस्करण फाल्गुन 1985 वि. सं., 'प्रेम-तीर्थ', प्रथम संस्करण वर्ष 1928, 'प्रेम-द्वादशी', प्रथम संस्करण 1983 वि. सं., 'प्रेम-पंचमी', प्रथम संस्करण 1987 वि. सं., 'प्रेम-पचीसी', प्रथम संस्करण वर्ष 1923, 'प्रेम-पीयूष', प्रथम संस्करण वर्ष 1935, 'प्रेम-प्रतिमा', प्रथम संस्करण वर्ष 1926, 'प्रेम-प्रमोद', प्रथम संस्करण वर्ष 1926, 'मानसरोवर' भाग-1, प्रथम संस्करण वर्ष मार्च 1936, 'मानसरोवर' भाग-2, प्रथम संस्करण वर्ष मार्च 1936, 'मानसरोवर' भाग-3 प्रथम संस्करण वर्ष अप्रैल 1938, 'मानसरोवर' भाग-4, प्रथम संस्करण वर्ष 1939, 'मानसरोवर' भाग-5, प्रथम संस्करण वर्ष 1936, 'मानसरोवर' भाग-7, प्रथम संस्करण वर्ष 1947, 'लाल-फीता या मैजिस्ट्रेट का इस्तीफा,' प्रथम संस्करण 1978 वि. सं., 'सप्त-सरोज', प्रथम संस्करण वर्ष जून 1917, वर्ष 1935, 'समर-यात्रा', प्रथम संस्करण वर्ष 1930 आदि । उर्दू कहानी संकलनों का विवरण इस प्रकार है:-'प्रेम-पचीसी' भाग-1, प्रथम संस्करण वर्ष अक्टूबर 1914, 'प्रेम-पचीसी- भाग-2', प्रथम संस्करण वर्ष मार्च 1918, 'सोजेवतन', प्रथम संस्करण वर्ष जून 1908, 'सोजेवतन व सैरे दरवेश', प्रथम संस्करण वर्ष 1929 आदि।

समग्रत: कहा जा सकता है कि जो पाठक प्रेमचंद साहित्य में रुचि रखता हो उसके लिये यह पुस्तक किसी वरदान से कम नहीं है । 353 पृष्ठों की इस पुस्तक में पाठकों को बहुत कुछ देखने को मिलेगा । पुस्तक की साज-सज्जा व गेट-अप अति उत्तम है । इस पुस्तक के आवरण पृष्ठ पर प्रेमचंद का फोटो इस पुस्तक की खूबसूरती और भी आकर्षक बनाता है। छपाई उम्दा व पैपर क्वालिटी भी बहुत बेहतरीन है। मुद्रण की अशुद्धियाँ न के बराबर है। इस कारण पाठक को पुस्तक पढ़ने मे कठिनाई उत्पन्न नहीं होती है। ऐसी बेहतरीन पुस्तक का सभी जगह स्वागत होना चाहिए तथा प्रेमचंद साहित्य में जिज्ञासा रखने वाले समस्त पाठकों को एक बार इस ऐतिहासिक धरोहर को अवश्य देखना चाहिए ।

****

आवास क्रमांक एच-3, राजीव गांधी प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, एयरपोर्ट वायपास रोड, भोपाल-462033 (म0प्र0)
मोबाइल 09826583363
ई-मेल-krishanveer74@gmail.com

स्वप्न, साज़िश और स्त्री
उजड़े सपनों की करुण कथा का कौशल

समीक्षक : वंदना गुप्ता

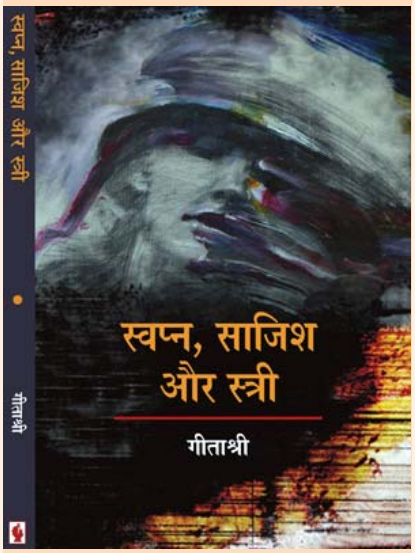

स्वप्न, साजिश और स्त्री
(कहानी संग्रह)
लेखक-गीताश्री
सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली

वंदना गुप्ता

सामयिक प्रकाशन से प्रकाशित गीताश्री का कहानी संग्रह 'स्वप्न, साज़िश और स्त्री ' सबसे पहले अपने नाम से ही आकर्षित करता है तो वहीं उन भेदों को भी उजागर करता है जो अक्सर स्त्री के जीवन का हिस्सा होते हैं। नाम सब कुछ बयाँ कर रहा है कि एक स्त्री के सपनों पर कैसे साज़िश की परतें चढ़ा उसकी कोशिशों को लहूलुहान किया जाता है। शीर्षक एक स्त्री के सम्पूर्ण जीवन को परिभाषित कर रहा है। पाठक मन जब तक आकर्षित नहीं होता, तब तक उसे पढ़ता नहीं और लेखिका ने पाठक की नब्ज़ पर ही हाथ धरा है।

संग्रह की पहली कहानी 'डायरी आकाश और चिड़ियाँ' स्त्री पुरुष संबंधों का कच्ची उम्र के बच्चों पर क्या मानसिक दुष्प्रभाव पड़ता है, उसका सशक्त उदाहरण है। माँ-बाप अपने ईगो की वजह से या आपस में न पटने की वजह से जब अलग रहते हैं, तो बच्चे के मस्तिष्क पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। कहा गया है कि कच्ची मिट्टी को जिस साँचे में ढालो, उसमें ढल जाती है, तो वैसा ही यहाँ होता है। रोली एक 14 साल की लड़की अपने एकाकीपन से लड़ती अपनी एक अलग ही काल्पनिक दुनिया बना लेती है और उसी में जीने लगती है, जिसमें उसका कोई दोष नहीं क्योंकि यही उम्र होती है, जब माता-पिता के स्नेह और मार्गदर्शन की एक बड़ी होती लड़की को सबसे ज़्यादा ज़रूरत होती है। ऐसे में उसके द्वारा उठाया कदम उसकी नासमझी को तो दर्शाता ही है लेकिन माता-पिता को भी दोषमुक्त नहीं करता। कहानी द्वारा लेखिका ने दोनों पक्षों को उजागर करने की कोशिश की है और कहा है कि बच्चों की नासमझी को सिर्फ परिपक्वता ही समय रहते सँभाल सकती है। जैसा रोली की मौसी रागिनी करती है, जबकि माँ और पिता तो सिर्फ नाम के लिए ही कहानी में शामिल थे। मगर वहीं एक सुखद पहलू और लेखिका ने दर्शाया है, जब रोली घर से गायब होती है, तो माता-पिता न केवल एक हो जाते हैं बल्कि अपने गिले शिकवे भी भूल जाते हैं, जो कहीं न कहीं इसी बात को सिद्ध करता है कि बच्चे ही वास्तव में माता-पिता के मध्य सेतु का काम करते हैं।

इसी तरह 'उजड़े दयार में' कहानी में माता पिता के संबंधों के साथ एक माँ बेटी के संबंधों के बिगड़ते तिलिस्म को उघाड़ा गया है। बेटी को आज़ादी का मतलब उच्छृंखलता लगती है और उसी का नतीजा बेटी का बर्बाद जीवन। बेटी उसी जगह खड़ी हो जाती है जहाँ उसकी माँ रही, तब भी वह माँ के दर्द को न समझ पायी। यह स्पष्ट होता है कि कैसे एक स्त्री होकर भी दूसरी स्त्री के दर्द को समझाना आसान नहीं होता, फिर वो बेटी ही क्यों न हो। रिश्तों का एक कड़वा सच कहानी में बखूबी उकेरा है, जहाँ माँ हो या बेटी, या पिता सबके अपने-अपने देश हैं और अपनी-अपनी प्रतिबद्धताएँ; लेकिन नहीं है तो कहीं कोई भावनात्मक संबंध। वहाँ रिश्ते खोखले ही होते हैं।

'भूतखेली' एक वो सच्चाई है जहाँ रिश्तों की आड़ में कैसे स्वार्थ सिद्ध किये जाते हैं खासतौर से तब जब आप पूर्णरूप से संपन्न हों, प्रवासी हों लेकिन फिर भी अपनी ज़मीन

जायदाद का मोह न छोड़ पायें; फिर चाहे कभी कोई योगदान कहीं न दिया हो। दो भाइयों के मध्य जब बात जीवन मरण पर आ जाती है तब ऐसे स्वांग भरना ही आख़िरी हथियार होता है, जैसा कि छोटे भाई की पत्नी करती है। एक तो गाँव, ऊपर से अन्धविश्वासी लोग, ऐसे में ज़रूरी था 'भूत' अर्थात आत्मा आने का स्वांग भरना, क्योंकि वो कहते हैं न - डर के आगे भूत भी नाचता है, तो यही आख़िरी हथियार था खटरी देवी के पास। जब जीवन मृत्यु का प्रश्न उठ खड़ा हो तो एक स्त्री किसी भी हद तक जा सकती है, उस पर यहाँ तो हक़ की भी लड़ाई थी तो कैसे एक स्त्री अपनी समझबूझ का इस्तेमाल न करती। ये एक स्त्री की सूझबूझ का ही कमाल था जो उसने अपना घर बचा लिया और किसी को कानोंकान खबर भी नहीं लगी कि आख़िर कितना सच था और कितना झूठ।

'कहाँ तक भागोगी' एक स्त्री का एक स्त्री से ही एक प्रश्न है, तो वहीं एक कहानी में जाने कितने सवालों का फलसफा लेखिका ने खड़ा कर दिया है। जहाँ धर्म पर भी प्रश्नचिन्ह है, तो कानून पर भी; फिर स्त्री तो स्त्री है, उसकी कौन सी जाति और कौन सा धर्म ? कहानी पढ़ते हुए लगा कि लेखिका खुद उस किरदार से मिली है और उसकी हकीकत को जान शब्दों में पिरोया है। एक स्त्री सबसे भाग सकती है लेकिन खुद से नहीं।

'रिटर्न गिफ्ट' में संवेदनाओं की शॉल ही लेखिका ने बुनी है। यूँ पढ़ो तो एक बेहद खूबसूरत खाका उभर कर आता है। ज़रूरी नहीं हर कहानी मुकम्मल हो या हर कहानी का अंत हमारी सोच के अनुसार हो। एक ऐसी कहानी या कहो प्रेम कहानी जो अपने अधूरेपन में मुकम्मल होती है गोया कहती हो -कभी किसी को मुकम्मल जहाँ नहीं मिलता। कभी-कभी शब्दों और मिलन से ज़्यादा जुदाई में सुकून होता है, अनदेखी मोहब्बत पूर्णता पाती है। मैना को प्रतीक बना एक जादुई तिलिस्म बना दिया है।

'मेकिंग ऑफ़ बबिता सोलंकी' स्त्री महत्त्वाकांक्षा का जीता जागता सबूत है। कैसे स्त्री अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए किस हद तक जा सकती है, उसकी मानसिकता को बहुत ही कुशलता से लेखिका ने उकेरा है। जहाँ उसके लिए सिर्फ अपनी पहचान महत्त्वपूर्ण होती है, फिर चाहे किसी का भावनात्मक शोषण ही क्यों न करना पड़े, फिर वो उसका मेंटर हो या पति। एक स्त्री और एक प्रतिष्ठित बुज़ुर्ग लेखक के मध्य ज़रूरी नहीं जिस्मानी रिश्ते ही हों, कभी कभी कुछ स्त्रियाँ अपनी सहूलियतों के मुताबिक सामने वाले की कमज़ोर नस पर हाथ रख अपना उल्लू सीधा करती हैं। बस वैसा ही किरदार है इस कहानी में बबिता सोलंकी का। कहानी के अंत में शब्दों का एक ऐसा व्यूहजाल बुना है, जिसमें पाठक एक बार फिर जकड़ जाता है और उस के अपने मन मुताबिक हल सोचने लगता है। क्या कहना चाहा अंत में लेखिका ने ? ये प्रश्न पाठक मन को उद्वेलित करेगा। क्या जो कहानीकार है धीरोदात्त का भतीजा, वो किसी आत्मा से मिला था? या फिर उसके अन्दर ही बबीता सोलंकी के पति से मिलने पर एक बदलाव का जन्म हुआ और वो खुद एक अलग ही इंसान को जन्मता देख रहा था अपने भीतर ? प्रश्न पाठक के ज़ेहन की खिड़कियों पर दस्तक देता रहेगा कि स्त्री को समझना इतना आसान नहीं तो पुरुष को समझना भी कहाँ संभव है।

'लकीरें' कहानी के माध्यम से लेखिका ने एक सन्देश दिया है कि ज़िन्दगी में कहीं से भी अच्छी सीख मिली होती है। वक्त रहते वो अपना असर ज़रूर दिखाती है फिर चाहे कितना ही दुष्ट व्यक्ति क्यों न हो । कहीं न कहीं उसके मन पर एक ऐसी छाप बैठती है वो चाहकर भी उससे बच नहीं सकता। ऐसा ही इस कहानी में है जहाँ एक चोर का मन एक स्त्री के आँसुओं की लकीरों को देख परिवर्तित हो जाता है। सीख वो लकीर होती है जिसे कोई नहीं लाँघ पाता वो अपना असर दिखाकर ही रहती है। मूल भाव तो सिर्फ यही है कहानी का।

'बदनदेवी की मेहंदी का मन डोला' कहानी प्रेम की उच्चता का दर्शन है तो लेखिका का अपना दृष्टिकोण भी यहाँ साथ साथ चलता है। उसे लगता है जैसे मलंग ने बदनदेवी को धोखा दिया। अपने ख्यालों में लेखिका ने प्रेम की उच्चता का खाका बुना, जहाँ प्रेम को तिरस्कृत अपमानित नहीं देखने की चाह में बदन ने वो गाँव ही छोड़ दिया और अपने प्रेम को अमर कर दिया। मलंग एक बाबा है और यहाँ आस्था से बढ़कर कुछ नहीं; क्योंकि यही धार्मिक मान्यता है। त्याग ज़रूरी था और ऐसा ही बदन ने किया क्योंकि यहाँ शरीरों तक ही नहीं सिमटा था प्रेम बल्कि उन्होंने प्रेम में एक दूजे को पा लिया था।

'आवाज़ों के पीछे-पीछे ' कहानी आज के महानगरीय जीवन में कम आय में ज़्यादा सुविधायुक्त जीवन जीने की आकांक्षा का ही प्रतिरूप है। कहानी के पात्र सुनील और निशा दंपति के माध्यम से एक ऐसी स्थिति पर लेखिका ने वार किया है जिससे अक्सर गुज़रता तो हर दंपति है; लेकिन इनकी तरह वो रास्ते नहीं अख्तियार करता जो और मुसीबत को जन्म दे दें । लोग दूसरे विकल्प सोचते हैं और उन पर अमल करते हैं ताकि ज़िन्दगी सुचारू रूप से चल सके। पति-पत्नी में कम पैसों की वजह से, घर पर ध्यान न देने की वजह से अक्सर खटपट होती रहती हैं; लेकिन जब अचानक ऐसा होना बंद हो जाए तो ख़तरे की घंटी बजने लगती है। ज़रूरत है उस घंटी को पहचानने की और समय रहते सही निर्णय लेने की जैसा कि सुनील करता है। फ़ोन द्वारा एक स्त्री की पुरुष को मानसिक सुकून देने की कोशिश, सिर्फ बातों से, एक ऐसा व्यूहजाल है, जिसमें एक बार फँसे तो ज़िंदगी नरक बनते भी देर नहीं लगती। आवाज़ों के पीछे की आवाज़ भी उस तक पहुँचती है जब वो उसे पहचानने की कोशिश करता है लेकिन कामयाब नहीं होता। जिस दिन होता है, उस दिन खुद की नज़रों में शर्मसार भी हो जाता है। लेखिका ने इस कहानी में एक ऐसा ज़बरदस्त खाका खींचा है और परत दर परत छिलकों को उधेड़ा है कि पाठक की पढ़ने की इच्छा अंत तक बनी रहती है। बेशक अहसास हो जाता है कि लेखिका कहना क्या चाहती है मगर तब भी कहानी की बुनावट, कथ्य और शिल्प ने कहानी को बचाए रखा।

'माई री मैं टोना करिहों' एक ऐसी कहानी जहाँ दर्द ही दर्द है। सबके अपने दर्द और अपनी ज़िन्दगी है लेकिन कहते हैं दर्द ही दूसरे के दर्द को समझ सकता है, अपना सकता है। बस वैसा ही मिताली और सिलबी का रिश्ता बन जाता है। आज दुनिया में स्त्री के दर्द की कोई इन्तेहा नहीं सभी जानते हैं। किसने कहाँ कौन सा दर्द पाया क्या कहा जा सकता है। सिल्बी की बेटी एलीना की मानसिक स्थिति ख़राब होने के साथ चेहरे का जला होना भी एक ऐसा कारण है जिसने उसकी ज़िन्दगी तबाह कर दी। कहानी के माध्यम से लेखिका ने लिव इन संबंधों की नाकामी के साथ मानसिक विक्षिप्तता के कारणों पर भी प्रकाश डाला है। अक्सर ऐसा होता है कि कम पढ़े-लिखे लोग ऐसी स्थितियों को जादू टोने से जोड़ने लगते हैं और सोचते हैं ऐसा करने से सब सही हो जाएगा; जबकि एलीना को ज़रूरत थी तो सिर्फ ख़ास देखभाल की। डॉक्टरी इलाज की और एक मनोवैज्ञानिक की, जो उसके अन्दर की ग्रंथि को पकड़ सके। उसे बाहर आने में मदद कर सके; क्योंकि बचपन में हुई घटनाएँ अक्सर दिलो दिमाग पर इस तरह हावी हो जाती हैं कि व्यक्ति कुछ बताने की स्थिति में नहीं रहता। यदि कोई सही दिशा में कदम उठाए तो वो भी जाना जा सकता है जो अक्सर अनकहा रह जाता है, जिसके बारे में किसी को मालूम नहीं होता। लेखिका ने इन्ही सब पहलुओं को सामने रखने की कोशिश की है। सिल्बी अपने दिमाग के अनुसार सोचकर कदम उठाती है तरह-तरह से। बेशक वो मानसिक विक्षिप्त है लेकिन क्योंकि उम्र के ऐसे दौर में पहुँच चुकी है जहाँ शारीरिक आवश्यकताएँ अपना सिर उठाने लगती हैं और कई बार ये भी कारण होता है अक्सर दौरा पड़ने का। लेखिका कहानी में बहुत गहरी पकड़ रखे हुए है, बहुत कुछ अनकहे में कहा गया है। दो स्त्रियाँ फिर वो उच्च वर्ग की हों या निम्न वर्ग की, अक्सर जब एक ही स्थिति से गुज़रती हैं, अकेलेपन को भोगती हैं, तो अक्सर एक दूसरे के दर्द को बखूबी समझती हैं। कहा गया है दर्द का दर्द से रिश्ता होता है और शायद ऐसा ही रिश्ता सिल्बी और मिताली के बीच जुड़ गया था।

'सुरताली के इन्द्रधनुषी सपने' एक ऐसी कहानी जहाँ एक बच्ची के सपनों की उड़ान को परवाज़ मिल जाती है। छोटी कहानी में गहरी संवेदनाएँ भरी हैं।

'ड्रीम्स अनलिमिटेड' कहानी में विज्ञापन की दुनिया तो महज एक बैक ग्राउंड है जहाँ सोनिया और राइमा के माध्यम से दो स्त्रियों के संबंधों, ईर्ष्या और फिर सहज संबंधों की पड़ताल है। कहते हैं औरत ही औरत की सबसे बड़ी दुश्मन होती है, वो ही औरत जब दूजी के दर्द को समझती है, तो उससे बेहतर उसकी कोई सहेली नहीं हो सकती। इसी संबंध को आधार बनाते हुए लेखिका ने विज्ञापन की दुनिया को चुना बेशक क्षेत्र कोई होता, फर्क नहीं पड़ता। लेखिका पत्रकारिता के क्षेत्र से है, तो क्या जाने ये उसी क्षेत्र की कहानी हो इसीलिए यहाँ फर्क नहीं पड़ता। प्रियम जैसे दोगले और धोखेबाज़ लोग आज के प्रतिस्पर्धी युग में भरे पड़े हैं, जो अपने फायदे के लिए किसी के भी सपनों से खेल सकते हैं, किसी की भी भावनाओं का मज़ाक बना सकते हैं। ऐसा ही सोनिया और राइमा के साथ होता है। दो स्त्रियाँ कितनी ही बड़ी प्रतिद्वंद्वी क्यों न हो, जब सच्चाई जान लेती हैं कि उन्हें ठगा गया है, बेवक़ूफ़ बनाया गया है, तब बदल लेती हैं अपना चोला और बन जाती हैं एक दूसरे की हमदर्द। इसी सबको लेखिका ने कहानी में बखूबी पिरोया है।

कहानी संग्रह में लेखिका ने अपने जीवन के अनुभवों को बखूबी उकेरा है। कहीं कहीं लेखिका पर उनके अन्दर की पत्रकार हावी होती दिखी। आदतें जल्दी छूटती नहीं। ये पकड़ में आ रहा है। कहानियों में लेखिका ने समाज के हर दायरे, हर वर्ग और हर समस्या को कहने का प्रयत्न किया है। कहानियों में आज के समय की समस्याओं को चित्रित किया है जिससे पाठक खुद को जुड़ा महसूस करता है।

****

डी - 19 राणा प्रताप रोड, आदर्श नगर
दिल्ली - 110033
मोबाइल : 09868077896

पुस्तक वार्ता

डाली मोगरे की खुशबू बिखेरती ग़ज़लें हैं

समीक्षक : शिव भूषण सिंह गौतम

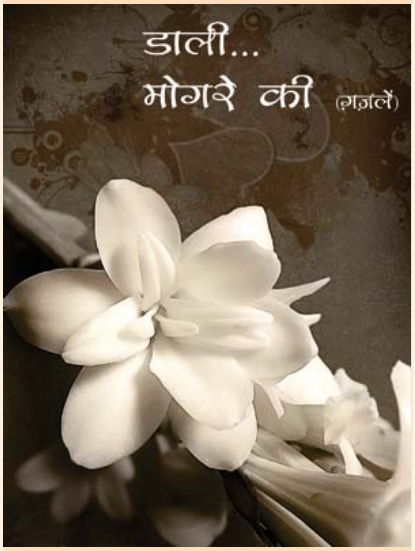

पुस्तक : डाली मोगरे की
लेखक : नीरज गोस्वामी
प्रकाशक : शिवना प्रकाशन, पी.सी. लैब, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड , सीहोर-466001 (म. प्र.)
मूल्य : 150 रुपये

शिव भूषण सिंह गौतम

पेशे से इंजीनियर पर अंदाज़ और मिज़ाज से शायर नीरज गोस्वामी का यह पहला ग़ज़ल संग्रह 'डाली मोगरे की' शिवना प्रकाशन से प्रकाशित हुआ तृतीय संस्करण है। प्रथम संस्करण 2013 में द्वितीय 2014 और तृतीय संस्करण 2016 में प्रकाशित हुआ। किसी भी पुस्तक का तीन वर्षों के अंतराल में तीन संस्करण प्रकाशित होना अपने आप में उसकी लोकप्रियता को प्रमाणित करता है।

ग़ज़ल संग्रह को पढ़ने के बाद यह एहसास होता है कि भले यह नीरज गोस्वामी की पहली किताब हो, पर व्यापक भावबोध, सूक्ष्म दृष्टि,सधी हुई सटीक भाषा और प्रभावी भावाभिव्यक्ति उनके समर्थ ग़ज़लकार होने का दावा करती है।

नीरज गोस्वामी इंटरनेट से जुड़े हैं, उनकी शायरी ब्लॉग जगत से जुड़े पाठकों को सहज ही सुलभ है पर हमारे जैसे व्यक्ति जो इंटरनेट का क-ख-ग भी नहीं जानते उनके लिए तो एकमात्र प्रकाशित पुस्तक ही परिचय का माध्यम है।

नीरज जी जितने अच्छे शायर हैं, उतने ही अच्छे पुस्तक प्रेमी भी हैं। वे दूसरों की शायरी का लुत्फ़ खुद तो उठाते ही हैं पर अपनी रोचक शैली में उन पुस्तकों की समीक्षा कर दूसरों को भी पुस्तक के प्रति जिज्ञासु बनाने में सिद्धहस्त हैं। यह उनकी '101 किताबें ग़ज़लों की' नामक संकलन देख कर ही जाना जा सकता है।

यद्यपि 'डाली मोगरे की' नीरज जी का प्रथम ग़ज़ल संग्रह है जिसके माध्यम से मुझे उनकी रचनाओं से परिचित होने का अवसर मिला है, तथापि विवेच्य कृति के आद्योपांत को अवगाहोपरांत उनका अंदाज़ चिरपरिचित सा लगा।

आज ग़ज़ल ने अपने परम्परागत हुस्न-ओ-इश्क के दायरे को तोड़ कर बड़ी ही ख़ूबसूरती के साथ सामाजिक सरोकारों का लिबास धारण कर लिया है तथा आम इंसानी हकूकों और उनके जज़्बात की पैरोकार बन कर उभरी है तो वहीं हिंदी ग़ज़ल के रूप में लिप्यांतर हो कर लोकप्रियता के व्यापक आयाम को प्राप्त करने में सफल हुई है।

कहते हैं सच कड़वा होता है -इस सम्बन्ध में संस्कृत में उक्ति प्रसिद्ध है 'सत्यम ब्रूयात, प्रियं ब्रूयात, अप्रियम सत्यम न ब्रूयात' नीरज जी ने ग़ज़ल के इस शेर में कितनी खूबसूरती से कहा है :

दिल जिसे सुन कर दुखे हर एक का
सच कभी ऐसा न बोला कीजिये

आज आदमी से आदमी के बीच की दूरी बढ़ाने में हमारे सियासी रहनुमा और मज़हबी ठेकेदार कहीं अधिक जिम्मेदार हैं। फुट दलों और राज करो वाली इनकी नीति किस तरह तारी है इसे बड़ी ही सादा ज़बान में नीरज जी ने आवाज़ दी है :

मैं राजी तू राजी है
पर गुस्से में क़ाज़ी है

नीरज जी ने फिरकापरस्ती तथा जाती रिश्तों के बिखराव पर काफी कुछ कहा है। यहाँ पर उनकी कुछ ग़ज़लों के शेर पेश हैं :

तुझमें बस तू बचा है मुझमें मैं
अब के रिश्तों में हम नहीं होता

***

पहले तो सबका इक ही था
अब सब का अपना अपना रब
खुद को ही मुज़रिम पाओगे
अपने भीतर झांकोगे जब

आज के दौर में सियासती किरदार बहुत सतही तथा दोगलेपन की पहचान बन गया है, इसलिए आज का सहित्यकार अमूमन राजनीति पर कलम चलाता है। इस संकलन में राजनीति पर कही गयी कई ग़ज़लें हैं उनके तेवर इन शेरों में देखिये :

हाथ में फूल दिल में गाली है
ये सियासत बड़ी निराली है

***

देश जले नेता खेलें
अक्कड़ बक्कड़ बम्बे बो
देखो हाल सियासत का
लगती है सर्कस का शो

***

देश की सुस्त न्याय व्यवस्था पर कई प्रकार की जुमले बाजी सुनने को मिलती है एक अंदाज़ नीरज जी का भी देखिये :

इस कदर धीमा हमारे मुल्क का कानून है
फैसला आने तलक मुजरिम की भूलें हम खता

आरक्षण की राजनीति ने ज्ञान को इस प्रकार कुंठित किया है कि काबिलियत मज़ाक बन कर रह गयी है। इस कुंठा को शायर ने इस शेर में व्यक्त किया है :

अंदाज़ किसे है यहाँ तकलीफ का उनकी
काबिल तो हैं लेकिन जिन्हें अवसर नहीं मिलता

नीरज गोस्वामी ने जीवन के हर पहलू को अपनी ग़ज़लों में समेटने का प्रयास किया है जिसे जानने समझने के लिए उनके ग़ज़ल संग्रह 'डाली मोगरे की' पढ़ना आवश्यक है फिर भी कुछ अलग-अलग मिज़ाज के शेर यहाँ पेश किये जा रहे हैं :

यूँ जहाँ से निकाल सच फैंका
जैसे सालन में कोई बाल रहा

***

माँ-बाप को न पूछा कभी जीते जी मगर
दीवार पर उन्हीं का फोटो सजा लिया

***

रोटियाँ दे कर कहा ये शहर ने
गाँव की अब रुत सुहानी भूल जा

***

ये कैसा दौर आया है कि जिसमें
गलत कुछ भी नहीं सब कुछ सही है

***

बस इसी सोच से झूट कायम रहा
बोल कर सच भला हम बुरे क्यों बने

नीरज गोस्वामी स्वयं ग़ज़लकारों की कसौटी उनके द्वारा कही गयी छोटी बहर की ग़ज़लों को मानते हैं, यदि इसी पैमाने पर ग़ज़लकार नीरज गोस्वामी को परखा जाय तो वे खरे उतरते हैं। उनके इस 144 पेज के ग़ज़ल संग्रह में संग्रहित 104 ग़ज़लों में से लगभग डेढ़ दर्जन ग़ज़लें छोटी बहर की हैं। चार ग़ज़लें मुंबइया जुबान में भी हैं जो वैसा ही आनंद देती हैं जो कभी हैदराबादी जुबान की ग़ज़लों में मिलता था। संग्रह में होली पर कही शुद्ध हास्य व्यंग्य की ग़ज़लें अद्भुत हैं।

'डाली मोगरे की' की ग़ज़लें सूरत और सीरत दोनों से ही खूबसूरत हैं जिनकी खुशबू पाठक के दिलो दिमाग में देर तक असर बनाए रखने में सक्षम है।

****

शिव भूषण सिंह गौतम, अंतर्वेद , कमला कालोनी, छतरपुर (म.प्र.)

हाथ सुंदर लगते हैं
कविताओं का नील कमल

समीक्षक : गौतम राजरिशी

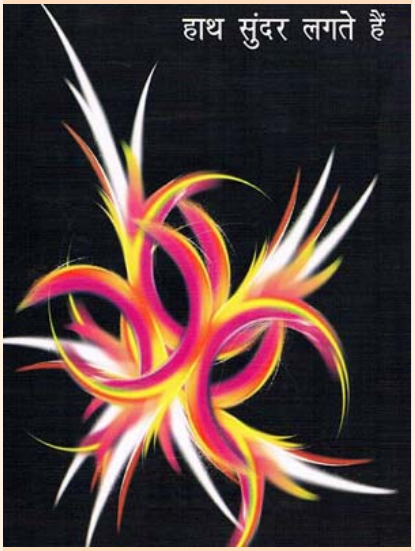

पुस्तक : हाथ सुंदर लगते हैं
लेखक : नीलकमल
प्रकाशक : कलानिधि प्रकाशन

गौतम राजरिशी

अजीब-सा कॉम्प्लेक्स है ये...जाने कितने सालों से राइफल के कुंदे को थामे-सँभाले बदसूरत हो आए इन हाथों में नील कमल की कविताओं की किताब है, बाकायदा ''हाथ सुंदर लगते हैं'' का ऐलान करती हुई। अभी कुछ समय पहले की ही तो बात थी जब चर्चित पत्रिका 'प्रगतिशील वसुधा' के संयुक्तांक(92-93) के पन्ने पलट रहा था मैं और नज़र ठिठक गई थी एक कहानी पर, जिसका शीर्षक था ''फिर क्या हुआ''। कहानी का शिल्प और कहानी में यत्र-तत्र बिखरी कविताओं की पंक्तियों ने एकदम से विवश किया कहानीकार को फोन करने को। फोन के उस पार से उभरी हुई आवाज़ बिल्कुल कहानी जैसी ही लिरिकल प्रतीत हुयी। फोन कहानीकार को किया था मैंने, गुफ़्तगू एक कवि से हुयी और उस गुफ़्तगू के तुरत बाद दूसरा कॉल कलानिधि प्रकाशन को लगाना जैसे लाज़िमी सा था। दस दिन बाद ही ये किताब मेरे पास थी...मेरे बदसूरत हाथों को कॉम्प्लेक्स देती हुई। अपनी शीर्षक कविता में जिस तरह से नील कमल कहते हैं कि ''हाथ सुंदर लगते हैं / जब होते हैं किसी दूसरे हाथ में / पूरी गरमाहट के साथ'' तो मुझे लगा कि कोलकाता की दूर उस उमस भरी चिपचिपी गर्मी से अपनी कविता(ओं) के जरिये कवि मेरे हाथों में गरमाहट दे रहा है यहाँ कश्मीर की ठिठुराती सर्दी में और अचानक ही मुझे मेरे बदसूरत हाथ सुंदर लगने लगे।

नील कमल की इस किताब में छोटी-बड़ी कुल 64 कविताएँ संकलित हैं, जिनसे सफ़ा-दर-सफ़ा गुज़रना एक सजग कवि के भीतर तिलमिलाते, बाहर निकलने को अकुलाते हुये कई आयामों से रू-ब-रू होना है। नील की कविताओं को पढ़ते हुए एक बात जो एकदम से उभर कर द्रष्टव्य होती है, वो है उनके अंदर बसी-छुपी हुई छंद की दबी-ढँकी धुंधली-सी परछाई। ये शायद विगत कुछ दशकों से कविता के नए अवतार को साहित्यिक पत्रिकाओं और आलोचकों द्वारा दी जा रही विशेष तवज्जो और साथ ही कविता के इस नए अवतार में कवि की सोच और कवि के कहन को कागज़ पर उतारने में हासिल हुई अपेक्षाकृत आसानी ही है, जो नील को छंद-मुक्त या मुक्त-छंद में लिखने को प्रेरित करती है। वरना इसी किताब में शामिल चंद कविताएँ जैसे कि ''आने वाले दिनों में कविता'' या फिर ''हम कर भी क्या सकते हैं'' या ''दीवार से मुखातिब'' या ''बेटी'' या ''आँख के गहरे पानी में'' और इनके अलावा अभी हाल ही में 'नया ज्ञानोदय' में प्रकाशित उनकी नई कविताएँ इस बात की मुनादी करती हैं कि नील कमल की लेखनी के भीतर भरी हुई स्याही

छंद के कई रंग भी समोए हुए है।

नील की कविताओं में...अधिकांश कविताओं में एक सहज-सी सजगता है जो मेरे जैसे पाठक को तुरत ही पहुँचाती है कविता की तलहट्टी तक, जहाँ कवि उस कविता को लिखते वक्त डूब-उतरा रहा होगा। अपने पढ़ने वालों से त्वरित जुड़ाव ही क्या किसी कवि को कवि नहीं बनाता ? 'फैसला' शीर्षक वाली कविता में कवि जब बात करता है हर रोज़ की लड़ाई की और ख़ुद अपना हाथ अपने सिर पर रखकर दुनिया से सारे देवताओं का आशीर्वाद लेता है और अचानक से उसे अहसास होता है कि ''यह लड़ाई कैकेयी को दिया दशरथ का / कोई वचन नहीं जिसके लिए / चौदह वर्षों का वनवास लेना होगा राम को...यह लड़ाई किसी किशोर राजपुत्र के अकेले / चक्रव्यूह में घुसने की नियति भी नहीं'' और वहीं से एक समझ अपनी पैठ बनाती है कि ये लड़ाई नितांत उसकी अपनी है और वो कह पड़ता है ''यह कोई स्वस्थ विरासत भी तो नहीं / जिसे सौंप दूँगा बेटे को / या सिंदूर की तरह भर दूँगा / पत्नी की माँग'' और कवि का ये कहना एक झुरझुरी से दे जाता है पूरे वजूद में कि सच तो...और फिर कवि के साथ ही मेरा पाठक मन भी गुनगुना उठता है ''यह आशीर्वाद की बेला नहीं है / यह सिर पर हाथ रखने का वक्त नहीं / यह हाथों के सिर से ऊपर उठाने का वक्त है''। ये नील की कविता की विशिष्टता है, जो एक बात कहते हुए उठती है और अंत में बिल्कुल ही एक अलग सा कॉन्ट्रास्ट बनाते हुए अपनी बात को समाप्त करती है और ये कॉन्ट्रास्ट कहीं से भी ज़बरदस्ती का लाया हुआ प्रतीत नहीं होता...ना ! ये कविता की अपनी प्राकृतिक उठान है और नील के अंदर का कवि उसमें कहीं कोई छेड़-छाड़ नहीं करता। इसी तरह का ट्रीटमेंट दरअसल नील की कविताओं की विशिष्टता है...हम इसे नील का सिग्नेचर स्टाइल भी कह सकते हैं। इस ट्रीटमेंट से परे इन कविताओं में और कोई भी बनावटी साज-सज्जा नहीं है, व्यर्थ के गूढ़ बिंबो से पाठक को चौंकाने का प्रयास भी नहीं है और ना ही ख़ुद के इंटेलेक्ट को सुपरलेटिव डिग्री में रखने की चेष्टा है...जो कि अमूमन आजकल लिखी जा रही ज़्यादातर कविताओं के कवियों का शौक़ रहा है।

नील बात को लम्बारने के शौकीन नहीं हैं। उनकी कविताएँ क्रिस्प हैं...छोटे-छोटे जुमले में सारी-सारी बातें कह देने का उनका शिल्प आकर्षक बनाता है उनकी कविताओं को। उनके पास कई नए सबजेक्ट्स हैं और उन सबजेक्ट्स को परोसने का दिलचस्प विट है उनके पास। किताब की चौदहवीं कविता एक ऐसी ही दिलचस्प कविता है...'दाढ़ी'...छोटी-सी कविता है, लेकिन अपने विट से देर तक गुदगुदाती है ये पढ़ने वालों को...''अपराधी नहीं काटते दाढ़ी / दाढ़ी सन्यासी भी नहीं काटते...दाढ़ी सिर्फ दाढ़ी नहीं होती / यह इतिहास के गुप्त प्रदेश में / उग आई झाड़ी है / इस झाड़ी में छिपे बटेर / ढूँढ़ रहे हैं शंकराचार्य / ढूँढ़ रहे हैं शाही ईमाम''। ये है वो सजग-सहज कवि...नील के अंदर पैठा हुआ, जो महज दो-तीन जुमलों में वर्तमान परिवेश की धज्जियाँ उड़ाता है, बिना किसी लाग-लपेट के...बिना किसी कृत्रिम भावुकता के। ऐसी कितनी ही कविताएँ हैं इस किताब में...''संत बनने की सनद'', ''मतलब की बात'', ''महायुद्ध'', ''गर्भस्थ शिशु से'', ''अनजान हैं जो, मारे जायेंगे'', ''महामहिम सावधान''... जो नील को एक विशिष्ट कवि का दर्जा देती हैं। नहीं, ऐसा नहीं है कि नील सिर्फ तंज के या विट के ही कवि हैं...उनके पास प्रेम के भी चंद नाज़ुक और दिलकश लम्हे हैं। 'तुम' सिरीज की छोटी-छोटी दो कविताएँ एक बारगी अज्ञेय की याद दिलाती हैं... वही ''कलगी बाजरे की'' जैसे अनूठी बिंब वाले अज्ञेय की याद, जब नील कहते हैं ''खेतों से गुज़रते हुये / लगा कि तुम्हारी देह / धानी फसल में / तब्दील हो गई है / और फूटने लगी है / पकते अनाज की खुशबू''। प्रेम के ये चंद नाज़ुक लम्हे ''हाथ सुंदर लगते हैं'' के पाठकों पर तैर आई मोनोटोनी को तोड़ते हैं और उन्हें एक ठहराव देते हुए आगे की कविताओं के लिए तैयार कराते हैं। इस से परे, दूसरी तरफ कभी-कभी जब नील का कवि-मन थोड़ा हताश सा कहने को आतुर हो उठता है कि ''बेहतरीन कविताएँ भी घुटने टेक / जब पराजित सी खड़ी हों / और नज़रों के बुझते अलाव में / न भभके कोई एक मद्धम चिंगारी / हम कर भी क्या सकते हैं''.... और इससे पहले कि पाठकों की आँखों के समक्ष एक पराजित कवि की तस्वीर उभरने लगती है और पाठक अपने भीतर एक अजीब सी असहायता महसूस करने लगते हैं, तभी कवि महोदय की कलम परचम सा फहराते हुए कोई नारा सा देती है और कहने लगती है...''सचमुच हम कर भी क्या सकते हैं / सिवाय इसके कि लिखें / कुछ और बेहतर कविताएँ / इस कठिन और बंजर होते समय में''। कवि की ये चौकसी एकदम से मोहपाश में बाँध लेती है हम कविताशिकों को।

संकलन में वैसे दो-एक कमज़ोर कविताएँ भी शामिल हैं, जिसे रखने से बचा जा सकता था। जहाँ 'थोड़ा-थोड़ा' शीर्षक वाली कविता जाने कितनी बार कही हुई बातों का दोहराव भर है बस, वहीं 'रपट' अपने शिल्प में कविता का भाव खोती सी प्रतीत होती है और 'घर में बारिश' पढ़कर ऐसा लगता है कि ये जैसे नील की शुरुआती दौर वाली कविता का एक कच्चा सा ड्राफ्ट भर है।

...और आख़िर में, इस किताब की कई कविताएँ कई-कई बार पढ़ लेने के बाद दिनों तक दो पंक्तियाँ बार-बार गुनगुनाता रहा हूँ :

''षोड़सी की आँखों में बचे रहते हैं सपने
जैसे बोरसी की राख़ में बची रहती है आग''

नील कमल को एक अच्छी कविताओं की किताब के लिए शुक्रिया...इस शुभकामना के साथ कि आने वाले वक़्त में कविताओं पर आती बेतरह मुश्किलात को वो अपनी सहज-सजग लेखनी आसान बनाते रहेंगे !

****

द्वारा : डॉ. रामेश्वर झा
वी.आई.पी. रोड, पूरब बाजार, सहरसा-852201 (बिहार)
फोन- 9759479500
ई-मेल gautamrajrishi@gmail.com

पंकज सुबीर के चर्चित उपन्यास अकाल में उत्सव पर विचार संगोष्ठी आयोजित

भोपाल । कथाकार पंकज सुबीर के बहु प्रशंसित उपन्यास 'अकाल में उत्सव' पर केन्द्रित विचार संगोष्ठी का आयोजन स्पंदन द्वारा किया गया। कार्यक्रम में उपन्यास के दूसरे संस्करण का विमोचन भी किया गया। हिन्दी भवन के महादेवी वर्मा सभागार में सोमवार शाम आयोजित विचार संगोष्ठी की अध्यक्षता हिन्दी के वरिष्ठ कहानीकार, उपन्यासकार श्री महेश कटारे ने की। उपन्यास पर वरिष्ठ पत्रकार श्री ब्रजेश राजपूत, तथा प्रशासनिक अधिकारी द्वय श्री राजेश मिश्रा तथा श्री समीर यादव ने अपना वक्तव्य दिया।

कार्यक्रम के प्रारंभ में स्पंदन के अध्यक्ष डॉ. शिरीष शर्मा, सचिव गायत्री गौड़ तथा संयोजक उर्मिला शिरीष ने पुष्प गुच्छ भेंट कर अतिथियों का स्वागत किया। तत्पश्चात उपन्यास 'अकाल में उत्सव' के दूसरे संस्करण का लोकार्पण किया गया। शिवना प्रकाशन के प्रकाशन शहरयार ख़ान ने अतिथियों के हाथों उपन्यास का विमोचन करवाया। उपन्यास पर चर्चा की शुरुआत करते हुए श्री समीर यादव ने कहा कि उपन्यास की सफलता से यह बात सिद्ध होती है कि आज भी पाठक गाँव की कहानियाँ पढ़ना चाहते हैं। गाँव से हम सब किसी न किसी रूप में जुड़े रहे हैं। यह उपन्यास इस मायने में महत्त्वपूर्ण है कि इसने वर्तमान समय की एक बड़ी समस्या की न केवल पड़ताल की है बल्कि उसके मूल में जाने की और उसका हल तलाशने की भी कोशिश की है। राजेश मिश्रा ने अपने वक्तव्य में कहा कि उपन्यास का सबसे सशक्त पक्ष इसकी भाषा है। यह उपन्यास कहावतों, मुहावरों, लोक कथाओं और श्रुतियों की भाषा में बात करता हुआ चलता है। पाठक को अपने साथ बहा ले जाता है। कहावतों और मुहावरों का जिस प्रकार इस उपन्यास में उपयोग किया गया है, वह उपन्यास की भाषा को विशिष्ट बना देता है। लोक की भाषा और शैली का इतना सुंदर उपयोग बहुत समय बाद किसी उपन्यास में पढ़ने को मिला है। पत्रकार ब्रजेश राजपूत ने अपने वक्तव्य में कहा कि आमतौर पर अखबारों में गाहे-बगाहे और पिछले दिनों तो तकरीबन रोज़ छपने वाली किसानों की आत्महत्या की ख़बरें हम शहरी पाठकों को उतनी ज़्यादा परेशान नहीं करतीं जितनी सरकार और विपक्षी दलों को। 'अकाल में उत्सव' पढ़ने के बाद किसानों की ऐसी आत्महत्या की दुर्भाग्यपूर्ण ख़बरों को आप सरसरी तौर पर नहीं पढ़ पाएँगे। इसके बाद आप किसानों की मौत की सिंगल कालम ख़बर को पढ़कर बेचैन हो जाएँगे और पंकज के इस उपन्यास की घटनाएँ याद आएँगी; आप समझेंगे कि किसान पागलपने में आकर आत्महत्या नहीं करता। कितने सारे मुसीबतों के पहाड़ उस पर जब लगातार टूटते हैं तब वो ये भारी कदम उठाता है। इसे पढ़ने के बाद आप को उन छोटे और मँझोले खेतिहर किसानों से सहानुभूति हो जाएगी जो हर साल फसल खराब होने की तय परंपरा और संवेदनाहीन सरकारी तंत्र होने के बाद भी खेती से जुड़े हैं और जिनकी तस्वीरें हमें सरकारी विज्ञापनों में अन्नदाता के रूप में दिखती हैं। वरिष्ठ कहानीकार तथा उपन्यासकार श्री महेश कटारे ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हिन्दी के युवा साहित्यकार तथा पाठक का गाँव की ओर मुड़ना स्वागत योग्य कदम है। 'अकाल में उत्सव' केवल एक उपन्यास नहीं है, यह एक यात्रा है, यात्रा उस त्रासदी की जो भारतीय किसान के हिस्से में आई है। पंकज सुबीर ने बड़े विश्वसनीय तरीके से किसान के जीवन का पूरा चित्र प्रस्तुत कर दिया है। और उतने ही अच्छे से प्रशासनिक व्यवस्था की भी कलई खोली है। उपन्यास समस्या की भी बात करता है और समस्या के कारणों की भी बात करता है। प्रेमचंद के होरी के बाद पंकज सुबीर के उपन्यास के रामप्रसाद को भी बरसों याद रखा जाएगा। श्री कटारे ने कहा कि उपन्यास को पढ़ते समय लेखक का शोध पर किया गया श्रम साफ महसूस होता है और वही कारण है कि इतने कम समय में इस उपन्यास को इतनी लोकप्रियता प्राप्त हुई है। कार्यक्रम का संचालन करते हुए स्पंदन की संयोजक डॉ. उर्मिला शिरीष ने जानकारी दी कि किसानों की समस्या पर केंद्रित पंकज सुबीर का यह उपन्यास इस वर्ष की सबसे चर्चित कृति है, हिन्दी के सभी वरिष्ठ साहित्यकारों ने न केवल इसे पसंद किया है बल्कि अपनी सकारात्मक प्रतिक्रिया भी व्यक्त की है। जनवरी में नई दिल्ली के विश्व पुस्तक मेले में उपन्यास का पहला संस्करण आया था तथा चार माह के अंदर प्रथम संस्करण के समाप्त होने का रिकार्ड इस उपन्यास ने रचा है। कार्यक्रम में बड़ी संख्या में शहर के साहित्यकार, पत्रकार तथा बुद्धिजीवी उपस्थित थे।

डेनमार्क में गांधी पार्क का उद्घाटन

डेनमार्क स्थित भारतीयों के लिए गौरव का विषय बन गया जब 15 जून 2016 को कोपेनहेगन में मौगेवाय 15, 2400 कोपेनहेगन, डेनमार्क में गाँधी पार्क का उद्घाटन हुआ। उल्लेखनीय है कि 1984 में भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री की डेनमार्क यात्रा के दौरान इस पार्क में महात्मा गाँधी की प्रतिमा स्थापित की गई थी। मगर लगभग बत्तीस वर्षों बाद DIVA - डेनिश भारतीय वोलंटरी एसोसिएशन (डेनिश भारतीय स्वैच्छिक संघ) के प्रयासों के फलस्वरूप इस पार्क को कोपनहेगन कम्यून द्वारा बाइज़्ज़त, आधिकारिक तौर पर 'गाँधी पार्कन'- गाँधी पार्क नाम दिया गया और गाँधी जी को प्रतिमा को स्थायित्व प्रदान किया गया। डेनिश भारतीय वोलंटरी एसोसिएशन के नेतृत्व में भारतीय समुदाय ने इस अवसर पर पार्क में सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया; जिसमें भारतीय शास्त्रीय नृत्य भी शामिल था। कई गणमान्य जनों की उपस्थिति के अतिरिक्त डेनमार्क में भारत के राजदूत श्री राजीव शाहरे ने भी घटना में भाग लिया।

-अर्चना पैन्यूली

कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' सम्मान युवा ग़ज़लकार एवं लेखक पवन कुमार को

इस वर्ष का कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' सम्मान युवा ग़ज़लकार एवं लेखक पवन कुमार को मिला है। पवन कुमार अपनी नई शैली की ग़ज़लों के चलते साहित्यप्रेमियों में जाने जाते हैं। मूल रूप से प्रशासनिक अधिकारी हैं, उनका एक ग़ज़ल संग्रह 'वाबस्ता' नाम से आ चुका है, जिसे पाठकों द्वारा काफी सराहा गया था। पवन कुमार की ग़ज़लें देश की सभी प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी हैं।

हिंदी साहित्य और विशेषतया साहित्यिक पत्रकारिता में मूर्धन्य स्थान प्राप्त कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' की स्मृति में यह पुरस्कार दिया जाता है। कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' हिन्दी के जाने-माने निबंधकार हैं, जिन्होंने राजनैतिक और सामाजिक जीवन से संबंध रखने वाले अनेक निबंध लिखे हैं। वे हिन्दी के श्रेष्ठ रेखाचित्रों, संस्मरण एवं ललित निबन्ध लेखकों में हैं। इन्होंने पराधीनता के समय स्वाधीनता आंदोलन में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया, जिसके कारण 1930, 1932 और 1942 के आंदोलन में जेल भी जाना पड़ा। वे ज्ञानोदय के संपादक भी रहे। प्रमुख साहित्यिक कृतियाँ - ज़िंदगी मुसकाई, नई पीढ़ी- नये विचार, माटी हो गई सोना, दीप जले शंख बजे आदि। 'आकाश के तारे-धरती के फूल' प्रभाकर जी की लघु कहानियों के संग्रह का शीर्षक है। 'दीप जले, शंख बजे' (1958) में, जीवन में छोटे पर अपने- आप में बड़े व्यक्तियों के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों का संग्रह है। 'बाजे पायलिया के घुँघरू' (1958) नामक संग्रहों में आपके कतिपय छोटे प्रेरणादायी ललित निबन्ध संगृहीत हैं। रामधारी सिंह दिनकर ने इन्हें 'शैलियों का शैलीकार' कहा था।

पवन कुमार का सम्मान प्रदान किए जाने के अवसर पर डॉ. नवाज़ देवबंदी, अंतरराष्ट्रीय योग गुरु पद्मश्री भारत भूषण, एयर कमोडोर रोहित महाजन, अर्जुन अवार्डी कर्नल दीप अहलावत, अखिलेश प्रभाकर, साहित्यकार कृष्ण शलभ के आलावा कई जाने-माने साहित्यकार, अधिकारी, मीडिया जन, कवि, शायर एवं गणमान्य नागरिक उपस्थित रहे।

तुम्हारी दास्ताँ तक भी न होगी दास्तानों में.....

इन दिनों एक प्रकार की बेचैनी हिन्दी साहित्य में दिखाई देती है। यह बेचैनी है धीरे-धीरे हाशिये पर पहुँचने की बेचैनी। घटती पाठक संख्या की बेचैनी। कुछ लोग कहते हैं कि इसका कारण अंग्रेज़ी को मिल रहा अतिरिक्त बढ़ावा है; लेकिन मेरे विचार में कारण कुछ और है। कारण अंग्रेज़ी नहीं है, कारण यह है कि पहले जो पाठक था, वह अब दर्शक है। पहले वह पढ़ता था, अब देखता है। अंतर सिर्फ इतना है कि जब वह पढ़ता था, तो वह तय करता था कि उसे क्या पढ़ना है, अब जब वह देख रहा है तो तय करने का अधिकार उसके पास नहीं है। जो कुछ दिखाया जा रहा है उसे ही देखना उसकी मजबूरी है। तो फिर वह पढ़ता क्यों नहीं ? जहाँ वह तय कर सकता है। इसका कारण यह है कि पढ़ना एक जटिल कार्य है, जबकि देखना अपेक्षाकृत सरल कार्य है। अब जटिल कार्य करना कोई नहीं चाहता, सरल सबको पसंद है। जटिल कार्य इसलिए; क्योंकि यह केवल कहानी या कविता भर नहीं है, यह तो कहानी या कविता के माध्यम से कहीं पहुँचने का प्रयास है। बौद्धिक रूप से अपने आपको कहीं पहुँचाने का जटिल कार्य है। जटिल कार्य समय की माँग करते हैं और समस्या समय की है, समय किसके पास है। तो क्या साहित्य समय काटने का साधन है / हुआ करता था। निश्चित रूप से नहीं; लेकिन उसे माना यही गया। तो एक तो यही समस्या हुई। दूसरे यह मुझे लगता है कि हिन्दी के लेखक ने अपने लिये यह स्थिति स्वयं चुनी है। स्वयं चुनी है क्योंकि उसने 'आलोचक' और 'पाठक' में से आलोचक को चुना, पाठक को छोड़ दिया। छोड़ दिया, तो छूट गया। पाठक, दर्शक हो गया। अब इस बहस से कोई मतलब नहीं कि वह कब हो गया, क्यों हो गया। लेखक को उसके छूटने का कोई दु:ख भी नहीं था; क्योंकि अब वह आलोचक के हिसाब से लिखने लगा था। आलोचक, जो अधिकांश पुरस्कारों / सम्मानों की निर्णायक समिति में होता है। पाठक किसी समिति में नहीं होता और शायद होगा भी नहीं। आलोचक जो अधिकांशत: महाविद्यालयों / विश्वविद्यालयों में या तो हिन्दी का प्राध्यापक होता है या विभाग प्रमुख होता है, गाइड होता है। यह लेखक पर पी.ऍचडी करवा सकता है, पाठक तो इस मामले में भी बेचारा ही होता है। तो लेखक ने आलोचक को ख़ुश रखने हेतु विचारधारा की खेती शुरू कर दी। लेखक को समझाया गया कि जो सबके समझ में आ रहा है, जो पॉपुलर है वह साहित्य नहीं हो सकता, कदापि नहीं हो सकता। जिसे सब पढ़ रहे हैं वह साहित्य नहीं हो सकता। 'राग-दरबारी' जैसी घटना इस बीच में घटी भी; लेकिन लेखक को फिर भी समझ में नहीं आया। क्या 'राग-दरबारी' को सबने पढ़ा ? क्या 'राग-दरबारी' सबकी समझ में आया ? क्या 'राग-दरबारी' क्लासिक है ? यदि इन सारे प्रश्नों के उत्तर हाँ में आते हैं, तो लेखक को सचेत होने की आवश्यकता है। आप कैसे पहले से तय करके लिख सकते हैं कि अब एक कहानी बाज़ारवाद के विरोध में लिखनी ही है। वह विरोध तो स्वत: ही आना चाहिए। मेरा कहना बस यह है कि संतुलन रखिए, विचारधारा, बौद्धिक विमर्श, सब कुछ हो; लेकिन पाठक को गौण मत कीजिए, कुछ उसका भी ध्यान रखिए। अल्लामा इक़बाल के शेर में माज़रत के साथ छोटा सा परिवर्तन (हिन्दोस्ताँ की जगह हिन्दी ज़ुबाँ)करके यहाँ लिख रहा हूँ-

न समझोगे तो मिट जाओगे ऐ हिन्दी ज़ुबाँ वालों
तुम्हारी दास्ताँ तक भी न होगी दास्तानों में

कुछ कटु लगा हो, तो क्षमा चाहता हूँ.....

सादर आपका ही,

पंकज सुबीर

पंकज सुबीर
पी. सी. लैब, शॉप नंबर 3-4-5-6,
सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के
सामने, सीहोर, मप्र, 466001
ईमेल : subeerin@gmail.com

शिवना प्रकाशन के नए सेट की पुस्तकें

समय, शब्द और मैं
(कविता-संग्रह)
मूल्य : 225 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
कृष्णकांत निलोसे
(वरिष्ठ कवि)

आपके लाए हुए दिन
(हिन्दी ग़ज़ल-संग्रह)
मूल्य : 100 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
विजय बहादुर सिंह
(वरिष्ठ आलोचक, कवि)

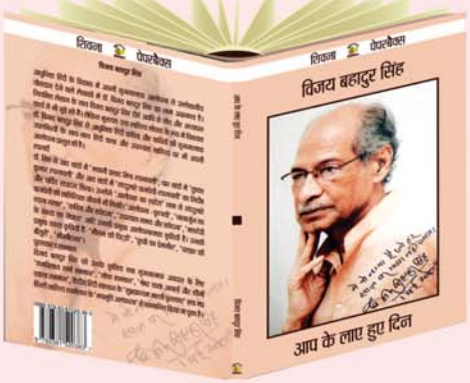

एक कणिका की यात्रा...
(संस्मरण)
मूल्य : 225 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
सीतारानी
(राजमाता मकड़ाई)

सरासर
(कहानी-संग्रह)
मूल्य : 250 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
जीवनसिंह ठाकुर
(वरिष्ठ कथाकार)

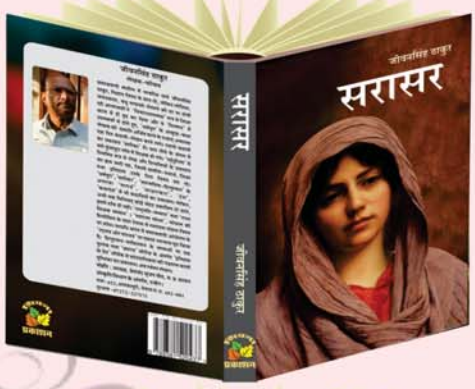

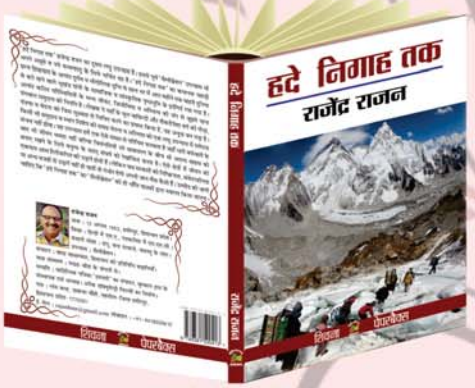

हदे निगाह तक
(उपन्यास)
मूल्य : 175 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
राजेंद्र राजन
(वरिष्ठ कथाकार)

समय समेटे साक्ष्य
(कविता-संग्रह)
मूल्य : 240 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
चौ. मदन मोहन समर
(सुप्रसिद्ध ओज कवि)

अ ग्रीन वॉरियर
(उपन्यास)
मूल्य : 200 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
अमित महोदय आर्यावर्ती
(लेखक, फिल्म अभिनेता)

शब्दों की बस्ती में
(कविता-संग्रह)
मूल्य : 200 रुपये
प्रथम संस्करण : 2016

लेखक
प्रदीप नवीन
(वरिष्ठ कवि)

शिवना प्रकाशन, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट
कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने
सीहोर, मध्य प्रदेश 466001
फोन : 07562-405545, 07562-695918
मोबाइल : +91-9584425995,
ईमेल : shivna.prakashan@gmail.com
http://shivnaprakashan.blogspot.in
https://www.facebook.com/shivna.prakashan

शिवना प्रकाशन
की पुस्तकें सभी प्रमुख
ऑनलाइन शॉपिंग
स्टोर्स पर

Shivna Prakashan Books Available At
All Leading Online Shopping Stores

amazon
http://www.amazon.in

flipkart.com
http://www.flipkart.com

paytm
https://www.paytm.com

ebay
http://www.ebay.in

Vibhom Swar ● Quarterly ● July-September 2016 ● RNI : MPHIN32709 ● ISSN : 2455-9814

If Undelivered Please Return to :
P. C. Lab, Shop No. 3-4-5-6, Samrat Complex Basement, Opp. Bus Stand, Sehore, M.P. 466001
Phone 07562-405545, 07562-695918, Mobile 09584425995, 07828313926, 09806162184

स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक पंकज कुमार पुरोहित के लिए पी. सी. लैब, शॉप नं. 3-4-5-6, सम्राट कॉम्प्लैक्स बेसमेंट, बस स्टैंड के सामने, सीहोर, मध्य प्रदेश 466001 से प्रकाशित तथा मुद्रक जुबैर शेख़ द्वारा शाइन प्रिंटर्स, प्लॉट नं. 7, बी-2, क्वालिटी परिक्रमा, इंदिरा प्रेस कॉम्प्लैक्स, ज़ोन 1, एम पी नगर, भोपाल, मध्य प्रदेश 462011 से मुद्रित।

मेरे प्रदेश का हर बच्चा
स्कूल जाए, पढ़े और आगे बढ़े।
शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री, मध्य प्रदेश

आप हैं प्रदेश के युवा,
आप हैं ऊर्जा के स्त्रोत,
आप बनेंगे प्रेरक,
तो बदलेगा प्रदेश...

पारसचन्द्र जैन
मंत्री, स्कूल शिक्षा, म.प्र.

ज्ञान सिंह
मंत्री, आदिम जाति कल्याण, म.प्र.

दीपक जोशी
राज्य मंत्री, स्कूल शिक्षा, म.प्र.

स्कूल चलें हम अभियान के प्रेरक (मोटिवेटर) बनने के लिए
बस एक मिस्ड कॉल करें: **0755-2570000** नंबर पर

या
लॉगऑन करें: **www.schoolchalehum.mp.gov.in** वेबसाईट पर

या
संपर्क करें: जिला शिक्षा अधिकारी/जिला परियोजना समन्वयक/
विकासखंड शिक्षा अधिकारी/विकासखंड स्त्रोत केन्द्र समन्वयक अथवा
स्थानीय जनशिक्षक से।

स्कूल चलें हम अभियान
मध्य प्रदेश

पढ़े ना कोई 12वीं से कम

www.facebook.com/schoolchalehum.mp.gov.in www.schoolchalehum.mp.gov.in